जुलाई-सितंबर 1991

वर्ष : 23 • अंक : 3

वैज्ञानिक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका

विकिरण संरक्षण मापदंड एवं कार्यान्वयन

जनवरी 17-18, 1991, बम्बई

संगोष्ठी विशेषांक

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद

हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन व प्रचार प्रसार हेतु परिषद नियमित रूप से त्रैमासिक पत्रिका **वैज्ञानिक** का प्रकाशन, विज्ञान गोष्ठियों, वार्ताओं एवं अखिल भारतीय लेख प्रतियोगिता का आयोजन करती है।

परिषद की सदस्यता एवं **वैज्ञानिक** पत्रिका का शुल्क (रु) :

	परिषद सदस्यता			वैज्ञानिक शुल्क 5 रु. प्रति	
	एक वर्ष	आजीवन	प्रवेश शुल्क	एक वर्ष	तीन वर्ष
व्यक्तिगत	15	100	1	15	40
संस्थागत	25	250	1	25	70

1. वैज्ञानिक विशेषांकों का मूल्य अलग से निर्धारित होगा।
2. वर्तमान नियमानुसार परिषद के सदस्यों को वैज्ञानिक निःशुल्क भेजी जाती है।
3. सभी शुल्क **हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद** के नाम से **डिमांड ड्राफ्ट** (बम्बई) अथवा **भारतीय पोस्टल आर्डर** द्वारा ही भेजें। **कृपया बम्बई से बाहर के चैक व मनीऑर्डर द्वारा शुल्क** न भेजें।

'वैज्ञानिक' में विज्ञापन

हिन्दी में प्रकाशित होने वाली विज्ञान पत्रिकाओं में **वैज्ञानिक** अग्रणी है। देश के सभी मुख्य वैज्ञानिक संस्थान इसके ग्राहक हैं। इस पत्रिका में आपके विज्ञापन आमंत्रित हैं। पूरे पृष्ठ की छपाई का आकार 16 सें.मी. x 21 सें.मी. है।

विज्ञापन की दरें	:	**(एक प्रति के लिए)**
अंतिम आवरण	:	रु.2,500/-
दूसरा/तीसरा आवरण (अंदर)	:	रु.2,000/-
पूरा पृष्ठ	:	रु.1,500/-
आधा पृष्ठ	:	रु.800/-

अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता - 1992

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति (भा.प.अ. केंद्र) के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित हिंदी विज्ञान लेख प्रतियोगिता हेतु प्रविष्टियां आमंत्रित हैं। लेख में किसी भी वैज्ञानिक विषय पर आधुनिक जानकारी होनी चाहिए। दो टंकित अथवा स्पष्ट लिखित प्रतियां (लगभग 3000 शब्द) **वैज्ञानिक** कार्यालय को भेजें। चित्रों को सफेद कागज पर काली रोशनाई से बनाएं और लेख के अंत में संलग्न कर दें।

पुरस्कार : प्रथम रु.1500/-, द्वितीय रु.1000/-, तृतीय रु.500/-

इसके अतिरिक्त पांच प्रोत्साहन पुरस्कार व अहिंदी भाषी प्रतियोगियों के लिए दो **विशेष पुरस्कार** - प्रत्येक रु.300/- के दिये जायेंगे। अतः अपनी मातृभाषा का स्पष्ट उल्लेख करें।

अंतिम तिथि : 31 अगस्त 1992

विशेष : पुरस्कृत रचनाएं **वैज्ञानिक** की संपत्ति होंगी। **वैज्ञानिक** से संबंधित अधिकारी इस प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकेंगे। **वैज्ञानिक** हेतु अन्य रचनाएं भी आमंत्रित हैं। सभी प्रकाशित रचनाओं पर मानदेय दिया जाता है।

पत्राचार का पता : श्री. ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी, सचिव, हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद, परमाणु ईंधन प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, ट्राम्बे, बम्बई - 400 085.

वैज्ञानिक

वर्ष : 23 • अंक : 3
जुलाई - सितंबर, 1991

— व्यवस्थापन मंडल —
डा. शिव प्रकाश गर्ग
श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी
श्री ललित कुमार
श्री राम निवास आर्य
श्री राम चरण शर्मा
श्री राम प्रकाश हंस

— संपादन मंडल —
डा. जनार्दन स्वरुप
डा. गोविन्द प्रसाद कोठियाल
डा. कैलाश चन्द्र भल्ला
डा. दुर्गा प्रसाद पांडे

— आमंत्रित संपादक —
डा. अम्बिका सहाय प्रधान
डा. विनोद कुमार जैन
श्रीमती प्रेम भार्गव

— शुल्क —
भारत में

		संस्थागत	व्यक्तिगत
एक वर्ष	—	25 रु.	15 रु.
तीन वर्ष	—	70 रु.	40 रु.

— विदेश में —
(समुद्री डाक द्वारा प्रेषण)

		संस्थागत	व्यक्तिगत
एक वर्ष	—	45 रु.	35 रु.
तीन वर्ष	—	125 रु.	95 रु.

अनुक्रमणिका

1. संपादकीय 3
2. भारतमें विकिरण संरक्षण नीति एवं नियमावली 5
   सुधाकर द्वा. सोमण
3. विकिरण की अल्प मात्रा के प्रभाव 8
   अ. नागरत्नम्
4. विकिरण संरक्षण के मापदण्ड - एक सिंहावलोकन 12
   चिन्तामणि सूँठा
5. दाबित भारी पानी रिएक्टरों में सुरक्षा संबंधी उपाय 14
   एम्. एस्. आर. शर्मा
6. चिकित्सा में विकिरण संरक्षण कार्यान्वयन - अनुभव एवं सुझाव 23
   आर. एन्. एल्. श्रीवास्तव
7. नाभिकीय अपशिष्ठ प्रबंधन 26
   नरेन्द्र कुमार जैन
8. विकिरण संरक्षण में जनशिक्षा का महत्व 28
   जी. वी. नाडकर्णी
9. विकिरण संरक्षण एवं मरम्मत में थायोल यौगिकों का योगदन 29
   मनोहर लाल
10. सूक्ष्म तरंग विकिरण मापन एवं संरक्षण मापदंड निर्धारण 31
    जितेन्द्र गुप्त एवं के. एस्. वी. नम्बी
11. स्थापत्य की दृष्टि से सुरक्षित विकिरण कक्ष 33
    मसूद अहमद एवं सुधाकर ज. सुपे
12. द्रव संदीप्ति द्वारा विकिरण मात्रामिति 37
    आर. के. उम्मन, एस्. सेनगुप्ता, आदि
13. आयोडीन - 131 द्वारा रेडियोसक्रियता मापन की चतुर्थ अन्तर्तुलना 41
    पी. के. श्रीवास्तव, एच. के. साहू और जी. डी. खेड़ा
14. परमाणु भट्टियों में विकिरण सुरक्षा 44
    विनोद कुमार जैन

- "वैज्ञानिक" में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से संपादन मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है ।
- "वैज्ञानिक" में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार हिं. वि. सा. परिषद के पास सुरक्षित हैं ।
- "वैज्ञानिक" एवं हिं. वि. सा. परिषद से संबंधित सभी विवादों का निर्णय बम्बई के न्यायालय में ही होगा ।

15. **दाबित भारी पानी परमाणु बिजलीघरों में विकिरण कार्यपद्धति** 46
एम. आर. सचदेव

16. **कोबाल्ट - 60 से दूर चिकित्सा में विकिरण संरक्षण** 49
सुनील कंठ मिश्र

17. **होगी कितनी प्रभावकारी** 52
मेघ सचदेव

18. **ईंधन पुनर्संसाधन तथा अपशिष्ट पदार्थ संसाधनों में विकिरण संरक्षण** 54
गोपाल शंकर जौहरी

19. **अपशिष्ट नाभिकीय ईंधन - विकिरण संरक्षण** 56
दिलीप भाटिया

20. **सुरक्षा एवं उपयोगिता दृष्टिकोण - एपरन बनाने में** 58
बी. एम. शाह

21. **संगणकीय रेडियोग्राफी** 59
बुद्धिराम वर्मा

22. **शिशुओं के क्ष-किरण चित्रण में मात्रा कम करने की विधि** 64
डॉ. एस्. के. चतुर्वेदी

23. **प्रदेशीय चिकित्सालयों में विकिरण सुरक्षा के प्रबन्ध** 66
डॉ. एम. के. गुप्ता, डॉ. गुलशन राय एवं डॉ. एच. आर. माली

24. **रेडियोरसायनिकी में प्रशिक्षण और जनशिक्षा** 68
दीनदयाल सूद एवं राजेन्द्र स्वरूप

25. **विकिरण संरक्षण - प्रशिक्षण और जन शिक्षा** 69
रमेशचंद्र एवं सर्वेशचन्द्र कटियार

26. **स्वास्थ्य भौतिकी में प्रशिक्षित जनशक्ति का विकास** 71
स. पा. कथूरिया, ज. स्वरूप एवं कृ. च. पिल्लै

27. बाल विज्ञान 75

28. दूर संचार के इतिहास की विशेषताएं 76

29. परिषद समाचार 77

कार्यालय : "वैज्ञानिक" हिंदी-विज्ञान साहित्य परिषद, सूचना प्रभाग, सेंट्रल कॉम्प्लेक्स, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, बंबई - 400 085.

द्वि - दिवसीय वैज्ञानिक संगोष्ठी

विकिरण संरक्षण - मापदंड एवं कार्यान्वयन

परमाणु ऊर्जा के शान्तिमय उपयोगों, जैसे विद्युत एवं रेडियोधर्मी पदार्थों का उत्पादन, रेडियोधर्मी पदार्थों तथा क्ष-किरणों के अनुप्रयोग आदि में सुरक्षा नियमों का पालन अति आवश्यक होता है। इस सम्बन्ध में, भारत सरकार ने परमाणु ऊर्जा अधिनियम (1962) के अंतर्गत विकिरण संरक्षण नियमों का निर्धारण किया है। अंतर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोग (आइ. सी. आर. पी.) इस सम्बन्ध में अपनी संस्तुतियाँ समय-समय पर देता रहता है। कुछ संस्तुतियाँ जिन्हें राष्ट्रीय संस्थाएं मापदंड के रूप में अपनाती हैं, समय और अनुभव के साथ-साथ परिवर्तित भी होती रहती हैं। यह भी अनुभव किया गया है कि इन संस्तुतियों के कार्यान्वयन में कई बार कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं, इसलिए परमाणु ऊर्जा नियमों के परिपालन हेतु विकसित मापदंड, उनकी कार्यान्वयन विधियाँ तथा कार्यान्वयन में कठिनाइयों पर चर्चा करने हेतु पहली बार राष्ट्रभाषा हिन्दी में परमाणु ऊर्जा विभाग की नाभिकीय विज्ञान अनुसंन्धान परिषद के तत्वावधान में एक संगोष्ठी, "विकिरण संरक्षण - मापदंड एवं कार्यान्वयन" का प्रायोजन किया गया।

परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम को सफलतापूर्वक आगे बढ़ाने के उद्देश्य से जनसामान्य तक इसका यह सन्देश पहुँचना आवश्यक है कि यह कार्यक्रम कठोर मापदंड और उनके कार्यान्वयन के अन्तर्गत पूर्णरूप से सुरक्षित है। यह संगोष्ठी आधुनिक विज्ञान की इस शाखा को जनसामान्य तक पहुँचाएगी और उनमें वैज्ञानिक चेतना जागृत करने में सहायक सिद्ध होगी।

दो दिन की इस संगोष्ठी को दिनांक 17-18 जनवरी, 1991 को राष्ट्रीय श्रम विज्ञान केन्द्र, शीव (बम्बई - 400 022) में आयोजित किया गया। इसमें 30 सहभागी एवं 11 आमन्त्रित वार्ताएं प्रस्तुत की गयीं। हमारा यह प्रयत्न रहा कि संगोष्ठी में प्रस्तुत सभी वार्ताओं का संकलन इस विशेषांक में छापें, परन्तु कुछ वार्ताएं हमें समय-सीमा के अन्दर प्राप्त नहीं हो सकीं, अतः उन्हें छापने में हम असमर्थ रहे।

हिन्दी भाषा में इस प्रकार की गतिविधियों के आयोजन में परमाणु ऊर्जा विभाग अग्रणी रहा है। यहाँ अतिचालकता, शीत संलयन, लेसर आदि जैसे अधुनातन तकनीकी विषयों पर ऐसी संगोष्ठियाँ आयोजित हो चुकी हैं और इनमें प्रस्तुत वार्ताओं के संकलन "वैज्ञानिक" के पृष्ठों में अध्येताओं के सम्मुख आचुके हैं। आशा है यह विशेषांक भी ज्ञानवर्धक सिद्ध होगा। आपकी प्रतिक्रिया की हमें प्रतीक्षा है।

— जनार्दन स्वरूप

लेखकों से निवेदन

"वैज्ञानिक" हेतु लेख भेजते समय कृपया निम्न बातें ध्यान में रखें :

- लेख का विषय नया हो जो पाठकों में अधिक ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा बढ़ाए,
- लेख मौलिक और पठनीय हो, भाषा सरल और बोधगम्य,
- कृपया अनुवादित लेख न भेजें,
- लेख टंकित किया हुआ अथवा स्पष्ट हस्तलिपि में दोनों ओर पर्याप्त हाशिए छोड़ कर काग़ज के एक ओर ही लिखें,
- विषय वस्तु समझाने के लिए यदि चित्र आवश्यक हों तो उन्हें सफेद काग़ज पर काली रोशनाई से खींच कर लेख के अन्त में संलग्न कर दें, पाण्डुलिपि में मूलपाठ के साथ उसी पृष्ठ पर चित्र न बनाएं,
- अस्वीकृत रचनाएं डाक-टिकट लगा लिफाफा संलग्न होने पर ही वापस की जाएंगी।

— संपादक

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद
की वर्ष 1991-92 एवं 1992-93 हेतु

— कार्यकारिणी समिति —

1. अध्यक्ष : डॉ. आर. चिदम्बरम्, निदेशक, भा. प. अ. केन्द्र
2. उपाध्यक्ष : डॉ. दीन दयाल सूद, अध्यक्ष, ईंधन- रसायनिकी प्रभाग
3. सचिव : श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी, परमाणु ईंधन प्रभाग
4. सह-सचिव : डॉ. विजय कुमार मनचन्दा, विकिरण-रसायनिकी प्रभाग
5. कोषाध्यक्ष : श्री ललित कुमार, धातुकी प्रभाग

सदस्य

1. श्री रामनिवास आर्य, धातुकी प्रभाग
2. श्री हरीश कुमार कौरा, अध्यक्ष, कंप्यूटर प्रभाग
3. डॉ. एस. के. सिक्का, उच्च दाब भौतिकी प्रभाग
4. डॉ. एस. ए. अहमद, वर्णक्रमदर्शिकी प्रभाग
5. डॉ राजेन्द्र स्वरूप, ईंधन- रसायनिकी प्रभाग
6. डॉ. गोविन्द प्रसाद कोठियाल, तकनीकी भौतिकी एवं प्रोटो टाइप इंजीनियरी प्रभाग

मनोनीत सदस्य

1. डॉ आर. विजयराघवन्, अध्यक्ष, परमाणु ईंधन प्रभाग
2. श्री राकेश कुमार, रिएक्टर इंजीनियरी प्रभाग

पदेन सदस्य

1. डॉ. जनार्दन स्वरूप, संपादक, 'वैज्ञानिक'
2. डॉ. शिवप्रकाश गर्ग, व्यवस्थापक 'वैज्ञानिक'
3. डॉ. एम. आर. बालकृष्णन, अध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना प्रभाग
4. डॉ. वी. रामशेष, सचिव, राजभाषा कार्यान्वयन समिति
5. डॉ. राजेन्द्र नारायण भटनागर, सचिव, केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद
6. श्री रमेशचन्द्र पंत, संयोजक, राजभाषा वार्ता
7. श्री काशीनाथ पाण्डेय, हिन्दी अधिकारी

मुख्य वार्ता

भारत में विकिरण संरक्षण नीति एवं नियमावली

सुधाकर द्वा. सोमण
अध्यक्ष, परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद
विक्रम भवन, अणुशक्तिनगर, बम्बई - 400 094

भारत की परमाणु ऊर्जा का शांतिपूर्ण उपयोग और नाभिकीय क्षेत्र में किये गये अनुसंधान का जनसामान्य के स्तर को सुधारने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। विद्युत उत्पादन, कृषि, चिकित्सा एवं उद्योग के क्षेत्र में परमाणु ऊर्जा का उपयोग निरंतर विकास की ओर अग्रसर हो रहा है। परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम में प्रारम्भ से ही ऐसी विकिरण सुरक्षा नीति अपनायी गयी है जिससे किसी भी विकिरण प्रतिष्ठापन में कार्यरत कर्मचारी एवं अन्य जनता को सामान्य परिस्थितियों में विकिरण सक्रिय पदार्थों या विकिरण से किसी भी प्रकार की हानि या क्षति न पहुँचे। इन्हीं सुरक्षा उपायों और नीतियों के फलस्वरूप भारत में विकिरण संरक्षण कार्यक्रम अत्यन्त ही प्रभावकारी रहा है। विकिरण प्रतिष्ठापनों, संयंत्रों एवं अन्य विकिरण संबंधी कार्यक्रमों में अन्तर्निहित सुरक्षा व्यवस्था को विशेष महत्व दिया गया है। विभिन्न नियामक अपेक्षाएं विकिरण दुर्घटना की संभावनाओं को भी नगण्य बनाती हैं, फिर भी दुर्घटनाओं से निपटने के लिए आपातकालीन प्रक्रियाएं स्थापित करना आवश्यक है जिससे किसी भी व्यक्ति को अस्वीकृत जोखिम न उठाना पड़ें।

विकिरण संरक्षण नीति

अन्तर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोग (आई. सी. आर. पी.) समय-समय पर विकिरण संरक्षण के लिए अपनी संस्तुतियाँ देता रहा है। ये संस्तुतियाँ विकिरण के जैविक प्रभावों पर उपलब्ध आकड़ों पर आधारित होती हैं। जैविक प्रभाव दो किस्म के होते हैं - निश्चित प्रभाव एवं संभावित प्रभाव। विकिरण संरक्षण का उद्देश्य निश्चित प्रभावों की रोकथाम करना एवं संभावित प्रभावों को इस स्तर तक कम करना जितना स्वल्प संभव हों। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाता है। विकिरण संरक्षण के मूल सिद्धान्त तीन अन्तर्राष्ट्रीय घटकों से बने हैं : विकिरण को व्यवहार में लाने का औचित्य, विकिरण संरक्षण का इष्टतमीकरण (आप्टीमाइज़ेशन), एवं मात्रा समतुल्य (डोज़ इक्विवेलेंट) की वार्षिक सीमा का अनुपालन।

प्रत्येक विकिरण प्रतिष्ठापन में सामूहिक मात्रा (मैन रेम) जितना संभव हो सके कम रखने की भी आवश्यकता है। सामूहिक मात्रा यथेष्ट रूप से कम रखने का उद्देश्य संभावित जैविक प्रभावों को स्वीकृत जोखिम के स्तर से यथासंभव नीचे रखना है। प्रारम्भ से ही भारत में विकिरण संरक्षण नीति, विकिरण संरक्षण के मूल सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए उस के उद्देश्य और उपायों को नियोजकों के अनुपालन के लिए लागू किया जाता है। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए नियामक अपेक्षाएं एवं प्रक्रियाएं विनिर्दिष्ट की जाती हैं जिनका अनुपालन सभी नियोजकों के लिए अपेक्षित है। इन अपेक्षाओं एवं प्रक्रियाओं को लागू करने के लिए आवश्यक प्राधिकार परमाणु ऊर्जा अधिनियम एवं विकिरण संरक्षण नियम में दिये गये हैं।

वर्ष 1983 नवंबर मास तक विकिरण संरक्षण नियमों को लागू करने का प्राधिकार परमाणु ऊर्जा विभाग की सुरक्षा पुनरीक्षण समिति एवं भाभा परमाणु अनुसंधान के विकिरण सुरक्षा प्रभाग को सौंपे गये थे। नवबंर 1983 में परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद (प.उ.नि.प.) की स्थापना हुई। प.उ.नि.प. को सुरक्षा नियमों के प्रावधानों को लागू करने का प्राधिकार केंद्र सरकार द्वारा सौंपा गया। प.उ.नि.प. 1983 से सुरक्षा के उपायों एवं सुरक्षा संबंधी नीति के विकास को प्रोत्साहन देती रही है। इसके द्वारा विकिरण सुरक्षा संबंधित संहिताओं, संदर्शिकाओं, मानकों तथा मैनुअलों को तैयार करने के कार्यक्रम को प्राथमिकता दी गयी है।

परमाणु ऊर्जा अधिनियम एवं विकिरण संरक्षण का विधान

परमाणु ऊर्जा अधिनियम के अंतर्गत केंद्र सरकार को परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों के लिए आवश्यक प्राधिकार प्राप्त हैं। परमाणु ऊर्जा से विद्युत उत्पादन एवं

संबंधित कार्यक्रम, कृषि, चिकित्सा, उद्योग एवं अनुसंधान में नाभिकीय ऊर्जा का उपयोग होता है। परमाणु ऊर्जा अधिनियम, 1962 (1962 का 33) की धारा 17 में विकिरण संरक्षण के लिए केंद्र सरकार को शक्तियां प्रदान की गयी हैं। केंद्र सरकार, विभिन्न धाराओं एवं उपधाराओं द्वारा प्रदत्त शक्तियों और इस निमित्त उसे समर्थ बनाने वाली सभी अन्य शक्तियों का उपयोग करते हुए विकिरण संरक्षण संबंधी नियमावलियां बनाती है। केंद्र सरकार ने विकिरण संरक्षण नियम, 1971 एवं परमाणु ऊर्जा (रेडियोसक्रिय अपशिष्टों का निरापद व्यवस्थापन) नियम, 1987, बनाये हैं। इन नियमों को लागू करने का प्राधिकार सक्षम प्राधिकारी को दिया गया है जो इन नियमों के अधीन केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचना द्वारा नियुक्त किया गया है। अध्यक्ष, परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद को केंद्र सरकार ने सक्षम प्राधिकारी नियुक्त किया है। केंद्र सरकार ने प.ऊ.नि.प. की स्थापना परमाणु ऊर्जा अधिनियम की धारा 27 के अधीन प्राप्त प्राधिकार से की है। विकिरण संरक्षण नियम एवं अन्य नियम परमाणु ऊर्जा के संस्थानों एवं गैर परमाणु ऊर्जा विभाग के संस्थानों में सामान्य रूप से लागू होता है। विकिरण संरक्षण नियम, 1971 के नियम 15 के अनुसरण में, परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद ने विकिरण पर निगरानी रखने संबंधी प्रक्रियाओं को विनिर्दिष्ट किया है। इन विनिर्दिष्टों में विकिरण सक्रिय सामग्री के सुरक्षित परिवहन के लिए विकिरण पर निगरानी रखने संबंधी प्रक्रियाएं हैं। इनके अतिरिक्त, उद्योग एवं चिकित्सा क्षेत्र में भी विकिरण पर निगरानी रखने संबंधी प्रक्रियाएं विनिर्दिष्ट की गयी हैं।

विकिरण संरक्षण नियम, 1971

विकिरण संरक्षण नियम, 1971 के सुरक्षा नियमों में अन्य नियमों के अलावा कुछ नियम निम्नलिखित हैं :-

नियम 3 **अनुज्ञापन का प्रावधान** : अनुज्ञप्ति के निबंधन और शर्तों के अनुसार विकिरण सक्रिय सामग्री का व्यवहार,

नियम 11 **अपराध और शक्तियां** : नियमों का उल्लंघन करने पर अपराध और शक्तियों का प्रावधान,

नियम 12 **विकिरण सुरक्षा अधिकारी** : प्रत्येक विकिरण प्रतिष्ठापन में नियोजक को विकिरण सुरक्षा अधिकारी को अभिहित करने को प्रावधान। नियोजक को सक्षम प्राधिकारी के अनुमोदन से अपने आप को या अपने नियोजनाधीन किसी व्यक्ति को विकिरण सुरक्षा अधिकारी के रूप में अभिहित करना,

नियम 15 अधिसूचना या आदेश द्वारा समुचित विकिरण निगरानी प्रक्रियाएं विनिर्दिष्ट करना,

नियम 17 विकिरण प्रतीक का प्रावधान,

नियम 18 विकिरण कर्मचारियों के कुछ कार्य वृत्तपत्र रखने का कर्तव्य,

नियम 29 विकिरण प्रतिष्ठापन का निरीक्षण करने की साधारण शक्ति,

नियम 30 नये विकिरण प्रतिष्ठापन का निरीक्षण,

नियम 31 निरीक्षण करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति की शक्तियां,

नियम 32 विकिरण सक्रिय सामग्री को सील या अभिग्रहण करने या कुछ मामलों में निर्देश देने की शक्ति।

3.2 नियामक अपेक्षाएं

परमाणु ऊर्जा नियमों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए प.ऊ.वि.प. की कुछ नियामक अपेक्षाएं निम्नलिखित हैं :-

- प्रत्येक विकिरण प्रतिष्ठापन में सुरक्षा के प्रावधानों का पुनरीक्षण एवं अभिकल्पन (डिजाइन) का मूल्यांकन,
- सुरक्षा उपायों को सुनिश्चित करने के पश्चात ही सक्षम प्राधिकारी का प्रतिष्ठापन को उपयोग या व्यवहार में लाने का अनुमोदन या प्राधिकार,
- प्रत्येक विकिरण संबंधी कार्यकलाप सुनिश्चित गुणवत्ता आश्वासन कार्यक्रम के अनुसार,
- केवल उन्हीं विकिरण संयंत्रों को प्रयोग या व्यवहार में लाने की अनुमति जिनका सक्षम प्राधिकारी से पूर्वानुमोदन प्राप्त किया गया हो। इनमें वे सभी विकिरण संयंत्र सम्मिलित हैं जिनका व्यवहार कृषि, चिकित्सा, उद्योग एवं अनुसंधान में किया जाना है। सभी विकिरण संयंत्रों एवं किरणोत्सर्गी यंत्रों की किस्मों का सक्षम प्राधिकारी द्वारा पूर्वानुमोदित होना आवश्यक,

- विकिरण सक्रिय सामग्री का परिवहन केवल उन्हीं पैकेजों में किया जाना जो सक्षम प्राधिकारी द्वारा पूर्वानुमोदित हों,
- विकिरण संबंधी कार्यक्रम सक्षम प्राधिकारी द्वारा निर्धारित विकिरण सीमा के भीतर,
- विकिरण सामग्री एवं विकिरण सक्रियता का विसर्जन निर्धारित सीमा के भीतर,
- सक्षम प्राधिकारी द्वारा विकिरण प्रतिष्ठापनों, विकिरण संयंत्र एवं किरणोत्सर्गी यंत्रों का पुनरीक्षण एवं अभिकल्पन मूल्यांकन।

विकिरण सुरक्षा मानक, संहिताएं एवं संदर्शिकाएं

प.उ.नि.प. इन नियमों एवं नियामक अपेक्षाओं का अनुपालन सुनिश्चित करने हेतु अपेक्षाओं को ब्यौरेवार विकिरण सुरक्षा मानकों, संहिताओं और संदर्शिकाओं के रूप में विनिर्दिष्ट करती है। इन में जो कुछ बताया गया होता है, उससे नियोजकों को अवगत कराया जाता है। प.उ.नि.प.ने इन पुस्तिकाओं को तैयार करने और इनके प्रकाशन को प्राथमिकता दी है। चिकित्सा, उद्योग एवं विकिरणसामग्री के परिवहन के क्षेत्र में संबंधित संहिताएं और संदर्शिकाएं बनायी गयी है। परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठापनों एवं उससे संबंधित कार्यक्रमों के लिए भी सुरक्षा संहिताएं तैयार की गयी हैं। उद्योग एवं चिकित्सा के क्षेत्र में व्यवहार में आने वाले विकिरण संयंत्रों के लिए मानक बनाये जा रहे हैं। जब तक देशी मानक उपलब्ध नहीं हो जाते, प.उ.नि.प. ने अंतर्राष्ट्रीय मानकों को नियोजकों द्वारा अनुपालन के लिए लागू किया है।

नियामक अपेक्षाओं का पुनरीक्षण एवं मूल्यांकन

प.उ.नि.प. ने विकिरण संरक्षण नियम, विकिरण पर निगरानी रखने संबंधी प्रक्रियाओं एवं अन्य नियामक अपेक्षाओं का पुनरीक्षण कार्यक्रम आरंभ किया है। इन पुनरीक्षणों का आधार मुख्यतः इनके कार्यान्वयन से प्राप्त अनुभव, औद्योगिक प्रगति एवं विकिरण सुरक्षा मानकों में परिवर्तन है।

संक्षिप्त विवरण

भारत में विकिरण संरक्षण नीति, मुख्यतः अंतर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोग की संस्तुतियों में दिये गये विकिरण संरक्षण के तीन मूल सिद्धांतों के अनुरूप है। एक परमाणु ऊर्जा नियामक ढांचा तैयार किया गया है जिसके अंतर्गत विभिन्न नियामक अपेक्षाएं विनिर्दिष्ट की गयी हैं। ये अपेक्षाएं परमाणु ऊर्जा अधिनियम-1962 एवं उसके अधीन नियमावलियों पर आधारित हैं। इन नियमों एवं नियामक अपेक्षाओं का अनुपालन सुनिश्चित करने हेतु अपेक्षाओं को ब्योरेवार विकिरण सुरक्षा मानकों, संहिताओं एवं संदर्शिकाओं के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया है, जो तालिका- 1,2,3 में दी गयी हैं।

तालिका-1

परमाणु ऊर्जा अधिनियम एवं विकिरण संरक्षण नियमावलियों की सूची

भारत के राजपत्र (गजट) में प्रकाशित अधिसूचनाएँ

1. परमाणु ऊर्जा अधिनियम (1962) (1962 का 33)
2. विकिरण संरक्षण नियम, 1971
3. परमाणु ऊर्जा (रेडियोसक्रिय अपशिष्टों का निरापद व्यवस्थापन) नियम, 1987
4. चिकित्सा में विकिरण के सुरक्षित व्यवहार के लिए विकिरण पर निगरानी रखने वाली प्रक्रियाएं, 1989
5. विकिरण सामग्री के सुरक्षित परिवहन के लिए विकिरण पर निगरानी रखने संबंधी प्रक्रियाएं, 1987
6. औद्योगिक रेडियोग्राफी (विकिरण पर निगरानी रखने वाली प्रक्रियाएं) 1980

तालिका-2

गैर परमाणु ऊर्जा विभाग के विकिरण संस्थानों एवं कार्यक्रमों के लिए तैयार की गयी संहिताओं, संदर्शिकाओं, एवं मैनुअलों की सूची (केवल अंग्रेजी में प्रकाशित)

1. ए.ई.आर.बी. सेफ्टी कोड फार मेडिकल डायाग्नोस्टिक एक्स रे इक्विपमेंट एंड इन्सटालेशन्स (1986)
2. ए.ई.आर.बी. सेफ्टी कोड फार टेलीगामा थेरापी इक्विपमेंट एंड इन्सटालेशन्स (1986)
3. ए.ई.आर.बी. सेफ्टी कोड फार ब्रैकीथेरापी सोर्सेस, इक्विपमेंट एंड इन्सटालेशन्स (1988)
4. ए.ई.आर.बी. सेफ्टी कोड आन न्यूक्लियर मेडिसिन लेबोरेटरीज (1989)

(शेष पृष्ठ 11 पर)

विकिरण की अल्पमात्रा के प्रभाव

अ. नागरत्नम्
रक्षा धातुकीय अनुसंधान प्रयोगशाला, हैदराबाद

विकिरण द्वारा मनुष्य जाति पर जैव वैज्ञानिक प्रभाव की जानकारी के स्रोत

मानव शरीर पर पड़ने वाले विकिरण के विभिन्न स्रोत होते हैं जो तालिका में दिखाये गये हैं। विकिरण के शरीर पर प्रभाव दो प्रकार के होते हैं, तात्कालिक और विलम्बित। हम जानते हैं कि जापान में परमाणु बम विस्फोट के एक-दो घंटे के अन्दर ही बहुत-से लोगों को विकिरण-व्याधि शुरू हो गयी थी। एक महीने के अन्दर इन लोगों में से पर्याप्त लोग मर गये। यह विकिरण के तात्कालिक, अयादृच्छिक, या निश्चयात्मक प्रभाव का एक उदाहरण है। इन प्रभावों हेतु विकिरण की एक निश्चित निम्न अवसीमा-मात्रा होती है। यदि विकिरण उद्भासन इस अवसीमा से कम हो, तो उसका शरीर पर प्रभाव नहीं होता है। आंखों का मोतियाबिंद, बाँझपन और रक्ताल्पता या खून की कमी निश्चयात्मक प्रभाव के अन्य उदाहरण हैं जिनकी अवसीमा मात्रा काफ़ी ऊँची, 2 ग्रे से अधिक होती है। इस मात्रा का उद्भासन केवल नाभिकीय बम विस्फोट या चेर्नोबिल जैसी दुर्घटना के कारण ही हो सकता है।

दूसरी तरह के प्रभाव को यादृच्छिक या संभाव्यनात्मक प्रभाव कहते हैं। इस तरह के प्रभाव के लिए कोई निम्न सुरक्षित, अवसीमा-मात्रा नहीं होती है। विकिरण की कम मात्रा भी यह प्रभाव उत्पन्न कर सकती है। रक्त-कैन्सर सहित अन्य प्रकार के कैन्सर एवं अनुवांशिक रोग यादृच्छिक प्रभाव के मुख्य उदाहरण हैं।

इस संदर्भ में, यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि प्राकृतिक रूप से भी कैन्सर और अनुवांशिक रोग उत्पन्न होते हैं। विकिरण उद्भासन द्वारा इन बीमारियों की संख्या बढ़ सकती है। किंतु, केवल विकिरण सम्बन्धित विशेष बीमारी कोई नहीं है।

विकिरण मात्रा का कैन्सर संयोग एवं अनुवांशिक प्रभाव से सम्बन्ध

हीरोशिमा-नागासाकी के बम विस्फ़ोट की मात्रा मिति के, विशेष रूप से पिछले दस वर्षों में बहुत से मापन किये गये हैं। वर्ष 1986 में संशोधित मात्रामिति का विवरण प्रकाशित हुआ। इसके अनुसार, 1 ग्रे से उद्भासित लोगों में से 4 से 7% को कैन्सर हो जाने की संभावना बतायी गयी है। रक्त-कैन्सर, फेफड़ों और स्त्रियों के स्तन के कैन्सर विकिरण के लिए विशेषकर संवेनदशील होते हैं।

विकिरण का अनुवांशिक प्रभाव जापान में या अन्य किसी जगह पर मनुष्य जाति में प्रदर्शित नहीं हुआ है। पशु-परीक्षणों से ही मनुष्य पर प्रभाव का अनुमान लगाना पड़ता है।

प्राकृतिक रूप से जो बच्चे पैदा होते हैं, उनमें से 10% को अनुवांशिक रोग या विकलाँगता होती है। अनुमान लगाया गया है कि प्राकृतिक अनुवांशिक बीमारियों की संख्या को दुगुना करने के लिए विकिरण मात्रा 1 ग्रे चाहिए। इसका मतलब यह है कि कुल जनसंख्या में जननेन्द्रियों को पीढ़ी दर

मानव पर विकिरण के प्रभाव के विभिन्न स्रोत

विकिरण के प्रकार	कुल अध्ययन संख्या
नाभिकीय बम विस्फोट	
हिरोशिमा - नागासाकी	110,000
विस्फोट परीक्षण स्थल के समीप	510,000
विकिरण द्वारा जाँच और चिकित्सा	250,000
गर्भवतियों की क्ष-किरण जाँच के बाद पैदा हुए बच्चे	1,000
व्यावसायिक	
परमाणु ऊर्जा कर्मचारी	54,000
भूमिगत खदान कर्मचारी	25,000
रेडियम डायल रंगाई कर्मचारी	4,000
क्ष-किरण विशेषज्ञ वैद्य	10,000
प्राकृतिक उच्चस्तर मात्रा विकिरण प्रदेश में रहनेवाले	200,000

पीढ़ी 1 ग्रे का उद्भासन यदि मिलता रहे, तो पैदा हुए बच्चों में अनुवांशिक बीमारियां 10 से 20% हो जाएंगी। अनुवांशिक प्रभाव विकिरण मात्रा के अलावा, मात्रा-दर पर भी विशेषतः निर्भर करते हैं। जितनी मात्रा-दर कम होगी, जोखिम उतना ही कम होगा। इसमें यह माना गया है कि जननेन्द्रियों का उद्भासन मान्य है।

प्राकृतिक और मानव-निर्मित विकिरण

प्रकृति में विकिरण सभी जगह पर है। मिट्टी, पत्थर, ईंट आदि पदार्थों में तथा हमारे शरीर के अन्दर भी उपस्थित रेडियोसक्रिय तत्वों से और ब्रह्मांड किरणों से मनुष्य जाति निरंतर प्राकृतिक विकिरणों से उद्भासित होती रहती है जिसकी औसत मात्रा प्रतिवर्ष 2.4 मिली सीवर्ट होती है। इसके अलावा, मानव-निर्मित विकिरण भी होते हैं। जिन लोगों को नाभिकीय रिएक्टरों में काम करना पड़ता है, या जिन रोगियों की रोग की जाँच के लिए क्ष-किरण परीक्षा की जाती है, इन सब लोगों को मानव-निर्मित विकिरण से उद्भासन मिलता है। उसकी मात्रा की सारी दुनियाँ की जनसंख्या के ऊपर यदि गणना करें, तो औसत प्रतिवर्ष 0.4 से 1.0 मिली सीवर्ट तक आता है, परन्तु भारत में इसकी औसत मात्रा केवल 0.05 मि.सी. है, जो प्राकृतिक विकिरण मात्रा की 3% से कम है।

अल्प मात्रा के विकिरण उद्भासन का प्रभाव

अब अल्पमात्रा विकिरण के प्रभाव पर विचार करेंगे। दुर्भाग्य है कि इस प्रश्न का निश्चित उत्तर देने के लिए आज की स्थिति में हम असमर्थ हैं। यह एक विवादास्पद विषय है। इसके अनेक कारण हैं। सबसे पहले, हमारा सारा अनुभव उच्च मात्रा के उद्भासनों के प्रभावों के बारे में ही है जिनके परिणामों से हमें अल्प मात्रा के प्रभावों का बाह्यकलन करना पड़ता है, जो उतना सरल नहीं है। हमारी रुचि 0.2 ग्रे की मात्रा से कम में है।

हमने देखा कि प्राकृतिक रूप से उद्भासन मिलते हैं, और विकिरण सम्बन्धित विशेष प्रभाव भी नहीं होते हैं। इसके अलावा, उद्भासन के बाद और कैन्सर के प्रत्यक्ष होने के बीच कई वर्षों का गुप्त काल भी होता है।

इन सब कारणों से यह निश्चित बताना कठिन होता है कि किसी व्यक्ति के कैन्सर का कारण प्राकृतिक है या मानव-निर्मित, इसलिए सांख्यिकीय सिद्धान्तों से ही कुछ कहा जा सकता है कि अल्पमात्रा विकिरण से कितना जोखिम है। सांख्यिकीय सिद्धान्तों का प्रयोग करने के लिए नमूनों का परिमाण बहुत बड़ा होना चाहिए। अनुमान से कह सकते हैं कि 1 ग्रे का प्रभाव मापने के लिए नमूने का परिमाण 1000 होना चाहिए, 0.1 ग्रे के लिए एक लाख और 0.01 ग्रे के लिए एक करोड़। हर एक मात्रा के लिए जितना नमूने का परिमाण चाहिए, उतना ही बड़ा परिमाण नियंत्रित जनसंख्या का भी होना चाहिए जो संभव नहीं है।

उच्च मात्रा के प्रभाव से अल्प मात्रा के प्रभाव का अनुमान लगाने के लिए कुछ सैद्धान्तिक प्रतिरूपों पर निर्भर रहना पड़ता है। ऐसे तीन-चार प्रतिरूप हैं, लेकिन हर एक प्रतिरूप अलग-अलग परिणाम देता है।

अधिकांश विशेषज्ञ रैखिक अनावसीमा प्रतिरूप पर सहमत हैं। इसका मतलब है कि विकिरण के प्रभाव विकिरण की मात्रा के समानुपाती होते हैं, और प्रभाव के लिए कोई सुरक्षित मात्रा नहीं है। कम से कम मात्रा से भी, मात्रा के अनुसार कैन्सर या अनुवांशिक रोग पैदा होने की संभावना है।

इस तरह का प्रतिरूप प्रयोग करना सुरक्षा की दृष्टि से उचित और उपयुक्त है। परन्तु, बहुत से वैज्ञानिकों का मत है कि रैखिक प्रतिरूप से अनुमान वास्तविक से अधिक होता है। इन का कहना है कि अल्प मात्रा के विकिरण द्वारा कोई प्रभाव नहीं होता है। नोबेल पुरस्कृत रोसालिन यालो का मत यही है। किंतु, कुछ अल्प संख्या के वैज्ञानिकों की राय है कि वास्तविक अल्प मात्रा के प्रभाव रैखिक अनावसीमा प्रतिरूप के माप से अधिक हो सकते हैं। इन वैज्ञानिकों में नोबेल पुरस्कृत ज्योर्ज वाल्ड हैं। ये वैज्ञानिक तीन-चार सर्वेक्षणों के ऊपर विश्वास करते हैं जिनके अनुसार परंपरागत प्रतिरूप जोखिम को कम बताता है। इस तरह के सर्वेक्षणों के उदाहरण हैं, गर्भवती महिलाओं के पेट के क्षेत्र में क्ष-किरण जाँच करने के बाद पैदा हुए बच्चों में कैन्सर की संख्या, (ii) नाभिकीय पोत प्रांगण के कर्मचारियों में कैन्सर की संख्या आदि, लेकिन विशेषज्ञों की यह राय है कि इन सब परिणामों की वैज्ञानिक दृष्टि कोण से यदि परीक्षा करें, तो यह मालूम पड़ता है कि इनकी सांख्यिकीय गणनाओं के ढंग में कुछ गल्तियां और कमियां हैं। इन कमियों को दूर करने के बाद यही नतीजा निकलता है कि रैखिक अनावसीमा प्रतिरूप ठीक-ही है और उपयुक्त भी है।

अभी हाल-ही में एक विवाद चल पड़ा है, जिससे हमें थोड़ी चिन्ता पैदा हो गयी है। नवंबर 1983 में इंगलैंड में योर्कशायर दूरदर्शन Wind Scale, The Nuclear Laundry नाम से एक कार्यक्रम प्रसारित किया। उस प्रसारण के अनुसार, सेलाफील्ड में, जहाँ नाभिकीय बम से सम्बन्धित कार्य चलता है, कारखाने से फेंके गये रेडियोसक्रिय प्रदूषण से आसपास के जिले में बच्चों के रक्त कैन्सर के संयोग बहुत बढ़ गये हैं। इस प्रसारण के कारण ब्रिटिश संसद में काफ़ी शोर मचाया गया और ब्रिटिश सरकार ने इसकी जाँच करने के लिए डग्लस ब्लैक के नेत्रत्व में एक समिति गठित की। इस समिति की रिपोर्ट के अनुसार कुछ जगहों पर अनुमानित संख्या से रक्त कैंन्सर की वास्तविक संख्या ज्यादा अवश्य है, और दो अन्य स्थानों, अल्डमेस्टन और डाउनरे में भी जहाँ नाभिकीय सम्बन्धी काम हो रहा है, रक्त कैन्सर के बढ़े हुए संयोग का चित्र पाया जाता है। किंतु, अधिक ध्यान देकर जाँच करने से यह मालूम हुआ कि इन तीन स्थानों के अलावा, अन्य 3-4 स्थान इंगलैंड में ऐसे भी हैं, जिन में कोई नाभिकीय सम्बन्धी काम नहीं हो रहा है, फिर भी रक्त कैन्सर के बढ़े हुए संयोग दिखायी पड़ते हैं। इन अप्रत्याशित और अपरिचित निरीक्षणों का समाधान अब तक नहीं मिल सका है।

अल्प मात्रा विकिरण प्रभाव के बारे में एक अन्य बात भी याद रखनी चाहिए। हमारा अनुभव न केवल उच्च मात्रा के उद्भासन के बारे में ही है, बल्कि उच्च मात्रा-दर के बारे में भी है। जानवरों पर प्रयोगों से और रेडियो-जैविकी सिद्धान्त से हमें यह मालूम होता है कि अल्पमात्रा के विकिरण से जो हानि होती है, यदि पर्याप्त समय दिया जाय, तो जीवधारी शरीर उस हानि को ठीक कर सकते हैं, अपना जीर्णोद्धार कर सकते हैं, और सामान्यतः अल्प मात्रा तथा अल्प मात्रा-दर का प्रभाव बहुत कम होता है।

विकिरण द्वारा नवोदित भ्रूण और पूर्णकाय भ्रूण की जोखिम

यह आवश्यक है कि हमें विकिरण द्वारा नवोदित भ्रूण और पूर्णकाय भ्रूण के जोखिम के विषय में चिन्ता हो। मान लीजिए कि एक स्त्री के पेट के क्षेत्र की क्ष-किरण जाँच उस समय की गयी जब उसे पता ही नहीं था कि वह गर्भवती है। उस उद्भासन से नवोदित भ्रूण को क्या खतरा है ? पहले हम समझते थे कि इस तरह के उद्भासन से बच्चा पैदा होने के बाद उसके जड़मति या विकृत होने का खतरा बहुत है। इसलिए विशेषज्ञों की सलाह थी कि युवा स्त्रियों के पेट के क्षेत्र की क्ष-किरण जाँच यदि करनी हो, तो मासिक धर्म के बाद दस दिन के अन्दर करनी चाहिए, जिस समय गर्भ होने की संभावना बहुत कम होती है। इसको 10 दिवसीय नियम कहते थे, किंतु अब हम जानते हैं कि अल्पमात्रा विकिरण के उद्भासन के कारण गर्भधारण से 8 सप्ताह तक कुछ खतरा नहीं है। 8 से 15 सप्ताह तक के अन्दर अवश्य कुछ जोखिम है, लेकिन इतने समय में स्त्री को खुद पता चल जाता है कि वह गर्भवती है और यह बात वह वैद्य को बता सकती है। यदि भ्रूण को 8 से 15 सप्ताह की आयु में 0.01 ग्रे उद्भासन मिलता है, तो बच्चा पैदा होने के बाद, उसके मानसिक रूप से बीमार या शारीरिक रूप से विकृत होने की संभाविता 0.2% है, जब कि बिना विकिरण उद्भासन के भी, प्राकृतिक रूप से इस खतरे की संभाविता 6% है।

विकिरण हार्मेसिस

अन्त में, विकिरण हार्मेसिस सिद्धान्त पर नजर डालेंगे। इस सिद्धान्त के अनुसार, यदि अल्पमात्रा विकिरण प्राकृतिक विकिरण मात्रा के लगभग बराबर हो, तो उसका प्रभाव हानिकारक नहीं, बल्कि लाभकारी होता है। इस सिद्धान्त को बहुत से वैज्ञानिक आज तक नहीं मानते हैं, किंतु इस सिद्धान्त के पक्ष में प्रमाण दिन-ब-दिन बढ़ रहे है।

कह सकते है कि विकिरण हार्मेसिस बहुप्रचलित हार्मेसिस का एक अंग है। हार्मोसिस विकास वादी सिद्धान्तों पर आधारित है और हर जीव पर लागू होता है। जीवधारियों में उनके जीवित रहने के लिए अल्प स्तर का किसी तरह का अपमान अच्छा ही होता है। इस अपमान का सामना उच्चस्तर के विचार या कर्म करके, उसके परिणाम को प्रभावहीन करने के लिए वे तैयार हो जाते हैं। सदियों से रसायनिक हार्मेसिस के बारे में वैद्य जानते हैं। 400 वर्ष पहले पारासेलसस ने कहा था, "मात्रा से ही विष बनता है"।

हमारे पास बहुत से प्रमाण हैं जो वनस्पति और जीव जगत में 50 से 100 मिलीसीवर्ट की विकिरण मात्रा के स्तर तक विकिरण हार्मेसिस का प्रभाव प्रदर्शित करते हैं। कुछ मानवी प्रमाण भी हैं जो नीचे दिये जारहे हैं।

जिन प्रदेशों में प्राकृतिक विकिरण का स्तर अधिक है, वहाँ कैन्सर की संभावना थोड़ी-सी कम है। इस तरह, कैन्सर

एवं विकिरण स्तर के बीच विरोधानुपात का पता अमेरिका, चीन और भारत के सर्वेक्षणों से लगता है। सोमण और नम्बि ने भारत के पाँच शहरों में कैन्सर के संख्यात्मक विश्लेषण द्वारा इस तरह का विरोधानुपात देखा है। वैसा ही विरोधानुपात फेफड़ों के कैन्सर और रेडान गैस के स्तर के बीच होता है, जैसा कि अमेरिका, फिनलैंड, स्वीडन, और चीन में पाया जाता है। लाखों लोग प्राकृतिक गरम जल स्त्रोतों में नहाते हैं और विश्वास करते हैं कि वह स्नान बहुत सारी बामारियों को ठीक कर देता है एवं स्वास्थ्यवर्धक है। इन सब स्त्रोतों में रेडान की मात्रा बहुत अधिक होती है। हमारे केरल प्रदेश के मोनाज़ाइट रेत के क्षेत्र में प्राकृतिक विकिरण स्तर लगभग प्रतिवर्ष 5 मिली सीवर्ट है, जो कि भारत की औसत मात्रा से तीन गुना है। यहाँ पर लगभग एक लाख लोग पीढ़ियों से रहते आये हैं। सर्वेक्षण से पता चलता है कि वहाँ पर स्वास्थ्य एवं अनुवांशिक गुणों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। इस प्रकार, हम यह कह सकते हैं कि अल्पमात्रा का विकिरण कोशिकाओं की कार्य क्षमता में वृद्धि करता है, विशेषकर कोशिका के जीर्णोद्धार, प्रतिरक्षीय और हारमोन की अनुक्रियाओं को बढ़ाता है। यह कोशिका के प्रगुणन में भी वृद्धि करता है। जिस तरह प्रतिरक्षक टीके से भविष्य में आनेवाली बीमारी का सामना करने की क्षमता प्राप्त होती है, उसी तरह अल्पमात्रा विकिरण द्वारा एक विशेष प्रतिरक्षण शक्ति प्राप्त होती है।

अन्त में, यह कहा जा सकता है कि अल्पमात्रा विकिरण का प्रभाव अभी तक विवादास्पद है, लेकिन आशा है कि कुछ वर्षों में इस प्रश्न का ठीक-ठीक उत्तर मिल जाएगा।

आभार

इस वार्ता का हिन्दी रूपान्तरण करने के लिए रक्षा धातुकीय अनुसंधान प्रयोगशाला के श्री राम ध्वनि शर्मा का मैं आभारी हूँ और उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

* * *

(पृष्ठ 7 का शेष)

5. एई.आर.बी. सेफ्टी मैनुअल एटलस आफ रेफरेंस प्लांट्स फार मेडिकल डायग्नोस्टिक एक्सरे इन्सटालेशन्स
6. एई.आर.बी. सेफ्टी कोड फार ट्रांसपोर्ट आफ रेडियोएक्टिव मेटिरियल्स (1986)
7. एई.आर.बी. सेफ्टी गाइड आन इंक्लोज्ड रेडियोग्राफी इन्सटालेशन्स (1986)
8. एई.आर.बी. सेफ्टी गाइड आन ओपेन फील्ड रेडियोग्राफी (1987)
9. एई.आर.बी. सेफ्टी गाइड फार हैंडलिंग आफ रेडियेशन इमरजेंन्सीज़ इन इंडस्ट्रियल रेडियोग्राफी (1989)

तालिका - 3

परमाणु ऊर्जा विभाग के संस्थानों एवं कार्यक्रमों के लिए तैयार की गयी संहिताओं संदर्शिकाओं, एवं मैनुअलों की सूची (केवल अंग्रेजी में प्रकाशित)

सेफ्टी कोड (ए.ई.आर.बी.)

1. कोड आफ प्रैक्टिस आन डिजाइन फार सेफ्टी इन प्रेशराइज्ड हेवी वाटर बेस्ड न्यूक्लियर पावर प्लांट्स (1989)
2. कोड आन सेफ्टी इन न्यूक्लियर पावर प्लांट आपरेशन (1989)
3. कोड आफ प्रैक्टिस आन क्वालिटी एश्योरेंस फार सेफ्टी इन न्यूक्लियर पावर प्लांट्स (1986)

सेफ्टीमैनुअल (ए.ई.आर.बी.)

1. सेफ्टी मैनुअल फार सिविल इंजिनियरिंग एंड बिल्डिंग वर्क्स आफ न्यूक्लियर पावर प्लांट (1988)
2. सेफ्टी मैनुअल--- आफ-साइट इमर्जेंसी प्लान फार न्यूक्लियर इंस्टालेशन्स (1988)
3. सेफ्टी मैनुअल-- साइट इमेरजैंसी प्लान फार न्यूक्लियर इन्सटालेशन्स (1986)
4. सेफ्टी मैनुअल-गवर्निंग दि ओथराइजेशन प्रोसीजर फार न्युक्लियर पावर प्लांट / प्रोजेक्ट (1984)

• • •

विकिरण संरक्षण के मापदण्ड - एक सिंहावलोकन

चिन्तामणि सूँठा
परमाणु ऊर्जा नियामक मंडल, विक्रम भवन,
अणुशक्तिनगर, मुंबई-400 094.

1. ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि

1.1 कुप्रभावों की जानकारी : विकिरण हमारे पर्यावरण का एक अभिन्न अंग है। यह मिट्टी व पत्थरों में सर्वत्र व्याप्त है, आकाश से बृह्माण्डीय किरणों के रूप में यह पृथ्वी पर निरन्तर आता रहता है। हमारे शरीर के अवयवों में भी यह व्याप्त है, परन्तु ये मात्राएं इतनी कम हैं कि इनसे होने वाले कुप्रभावों के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

अब से करीब पांच सौ वर्ष पहले, बोहेमियाँ के खान कर्मचारियों में फेफड़े की जानलेवा बीमारी का प्रकोप देखा गया। मगर यह बीमारी करीब चार सौ वर्ष तक एक रहस्य बनी रही। वर्ष 1879 में हर्टिंग व हिस्से नामक दो चिकित्सा वैज्ञानिकों ने मृत कर्मचारियों की चीरफाड़ से यह मालूम किया कि इनके फेफड़े कर्करोग ग्रस्त थे। वर्ष 1911 में अर्नस्टाइन नामक चिकित्सक ने पक्के तौर पर इन खान कर्मचारियों में फेफड़ों के कर्करोग का निदान किया। उस समय भी यह नहीं विदित हुआ था कि इन खानों के अंदर रेडान गैस से पैदा होने वाले विकिरण के कारण इस बीमारी का प्रकोप हो रहा था।

वर्ष 1897 में जब क्ष-किरणों का आविष्कार हुआ, उसके तुरन्त बाद ग्रुबे नामक रसायनशास्त्री ने रसायनों की सन्दीप्ति का अध्ययन करते हुए अपने हाथ का उद्भासन क्ष-किरणों से किया। उन्हे अत्यन्त दर्द की अनुभूति हुई। इससे प्रेरित होकर उन्होंने एक महिला के स्तन के कर्करोग ग्रसित हिस्से को क्ष-किरणों से उद्भासित किया। वर्ष 1900-1925 के बीच कई रेडियोलोजिस्टों ने क्ष-किरणों से बीमारी के निदान करने के दौरान अपने हाथों व अंगुलियों को क्ष-किरणों से अज्ञानतावश उद्भासित कर दिया। इससे उनके हाथों की अंगुलियाँ कुछ वर्षों के अन्दर धीरे-धीरे गलने लगीं। क्ष-किरणों के कुप्रभावों की गम्भीरता इस तरह धीरे-धीरे मालूम हुई। तब तक कई लोग इससे बुरी तरह प्रभावित हो चुके थे, हालांकि दूसरी ओर क्ष-किरणें चिकित्सा शास्त्र का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग बन चुकी थीं।

वर्ष 1900 के बाद एक और घटनाक्रम का दौर चला जिसमें रेडियम युक्त रंग से घड़ियों के डायल रंगनेवाली कई युवा स्त्रियां हड्डियों के कर्करोग से त्रसित हो गयीं। वर्ष 1925 के आसपास रेडियम से होनेवाली स्वास्थ्य-हानि की गम्भीरता का अहसास हो सका।

वर्ष 1945 में जापान के ऊपर अणुबम विस्फोट ने एक धमाके के साथ मानव निर्मित रेडियोधर्मिता का मनुष्य से परिचय कराया। इस विध्वंस के बाद, विस्फोट के समीपी क्षेत्रों में जो लोग जीवित बचे, उन्हें विकिरण के कुप्रभावों के अध्ययन का विषय बना दिया गया। ऐसे लोगों की संख्या जो 1945 में 96,000 थी, 1990 तक 73,000 रह गयी है।

उपर्युक्त अनुभवों के अतिरिक्त, वैद्यकीय क्षेत्र में भी कई उदाहरण हैं जिनसे विकिरणों के कुप्रभावों की जानकारी प्राप्त हुई, जैसे थोरोट्रास्ट के मरीज व क्ष-किरणों से उपचारित एंकिलौजिंग स्पौडिलाइटिस के मरीज।

1.2 विकिरण संरक्षण मापदण्डों का विकास : वर्ष 1916 में रोन्जन सासाइटी ने पहली बार क्ष-किरणों के उपयोग में सावधानी बरतने की सिफारिश की। इसमें सीधी किरण-पुन्ज के बीच में न आने की बात विशेष तौर पर कही गयी थी। वर्ष 1925 में प्रथम अंतर्राष्ट्रीय रेडियोलोजी कान्ग्रेस ने क्ष-किरणों की मात्रात्मक मापन की आवश्यकता महसूस की। वर्ष 1928 में तृतीय अंतर्राष्ट्रीय रेडियोलोजी कान्ग्रेस ने क्ष-किरण व रेडियम सुरक्षा समिति का गठन किया। इस समिति ने क्ष-किरण मापन की इकाई निर्धारित की और उसे रोन्जन का नाम दिया।

परमाणु ऊर्जा के उद्गम के बाद, क्ष-किरण एवं रेडियम के अलावा, हमारे परिवेश में कहीं अधिक संख्या में विकिरण स्रोतों का उत्पादन होने लगा। इस परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए छठी अन्तर्राष्ट्रीय कान्ग्रेस ने वर्ष 1950 में अन्तर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोग (आई.सी.आर.पी.) की स्थापना की। इसे 1928 में स्थापित क्ष-किरण व रेडियम सुरक्षा समिति का

विस्तारित रूप माना जा सकता है। 1950 में ही अन्तर्राष्ट्रीय विकिरण इकाई आयोग (आई सी आर यू) की भी स्थापना हुई। अ.वि.सं. आयोग ने इसी वर्ष 5 उप- समितियों का गठन किया जिनका क्षेत्र निम्न प्रकार था,

1. बाह्य विकिरण,
2. आन्तरिक विकिरण,
3. 3 एम.ई.वी. से कम क्ष व गामा किरणें,
4. 3 एम.ई.वी. से अधिक क्ष व गाम किरणें तथा न्यूट्रोन, बीटा और प्रोटोन,
5. रेडियोसमस्थानिक व उनका निस्तारण या निपटान।

1951 में अ. वि. सं. आयोग ने विकिरण संरक्षण सम्बन्धी अपनी संस्तुतियों की सूची पहली बार प्रकाशित की। 1951 से आज तक अ. वि. सं. आयोग द्वारा 59 प्रकाशन निकाले जा चुके हैं। इस अन्तराल में कई वैचारिक परिवर्तन और कई संस्तुतियों में परिवर्तन भी आते रहे हैं।

हाल ही में 9 नवम्बर, 1990 के दिन अन्तर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोन ने अपने 60 वें प्रकाशन को स्वीकृति दी है। इस प्रकाशन में अ.वि.सं. आयोग ने जो संस्तुतियां दी हैं, वे कई प्रकार से उनकी पिछली संस्तुतियों से भिन्न हैं। इनमें विकिरण संरक्षण की मात्रा- सीमा को और अधिक कड़ा कर दिया गया है। यह मात्रा- सीमा जो विकिरण कर्मियों के लिए पहले 50 मिली सीवर्ट प्रति वर्ष थी, अब 20 मिली सीवर्ट प्रति वर्ष कर दी गयी है।

2. विकिरण के प्रभाव तथा विकिरण संरक्षण उपायों का ध्येय

विकिरण के प्रभावों को दो प्रकारों में बांटा गया है, नियतीय प्रभाव, और संभावित प्रभाव। नियतीय प्रभाव वे हैं जिनका प्रकट होना निश्चित है, यदि विकिरण की मात्रा एक अवसीमा (Threshold) से अधिक हो। इससे अधिक मात्रा होने पर विकिरण मात्रा के साथ रोग की तीव्रता बढ़ती जाती है। तालिका में विकिरण प्रभावों की अवसीमा मात्रा दी गयी है।

विकिरण संरक्षण के नियमों में नियमित प्रभावों को रोकने के लिए 0.5 ग्रे की मात्रा अवसीमा रखी गयी है।

शरीर का उद्भासित अंग	प्रभाव	अवसीमा मात्रा (ग्रे)
पूर्ण शरीर	उल्टी होना	0.5
अस्थि मज्जा	मृत्यु	1.0
त्वचा	लालाई, बालों का झड़ना	3.0
फेफड़े	निमोनिया	5.0
कंठ ग्रन्थि	अघातक अनियमित	10.0

संभावित प्रभावों में दो मुख्य प्रभाव हैं, कर्क रोग, और अनुवांशिक प्रभाव। इन प्रभावों के प्रकट होने के लिए कोई न्यूनतम मात्रा नहीं है। प्रभाव के प्रकट होने की संभावना विकिरण मात्रा के अनुपात में बढ़ती जाती है।

विकिरण संरक्षण उपायों का ध्येय है कि

(1) नियतीय प्रभावों को पूरी तरह रोका जाय, यानि कि शरीर के किसी भी अंग को 0.5 ग्रे से अधिक विकिरण मात्रा न पाने दी जाए।

(2) संभावित प्रभावों की संभावना को न्याय संगत स्तर तक कम किया जाय, यानि कि विकिरण मात्रा के सामाजिक व आर्थिक पहलुओं को ध्यान में रखते हुए उसे जितना भी कम हो सके, उतना कम किया जाय।

(3) **मापदंड निर्धारण की आधारशिलाएं** : वर्ष 1956 में अन्तर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोग ने जो संस्तुतियां प्रस्तुत कीं, वे उस समय तक देखे गये विकिरण के कुप्रभावों पर आधारित थीं। विकिरण मात्रा-सीमा उस स्तर से 10 गुनी कम रखी गयी, जिस स्तर पर विकिरण के कुप्रभाव देखे गये थे। उदाहरणार्थ, रेडियम-226 की शरीर में स्थित मात्रा की सीमा 0.1 माइक्रो क्यूरी रखी गयी, क्योंकि यह देखा गया था कि जिन लोगों के शरीर में 1 माइक्रो क्यूरी से कम रेडियोधर्मिता थी, उन्हें हड्डी का कर्क रोग नहीं हुआ था। इस तरह के विचारदर्शन को सुरक्षा गुणांक सम्बन्धित संरक्षण कहा जा सकता है। इसमें व्यक्तिगत सुरक्षा को मुख्य लक्ष माना गया है। 1977 में जब अ.वि.सं. आयोग ने नयी संस्तुतियाँ प्रस्तुत

(शेष पृष्ठ 22 पर)

भारतीय दाबित भारी पानी रिएक्टरों में सुरक्षा संबंधी उपाय

एम. एस. आर. सर्मा
परमाणु ऊर्जा नियामक मंडल,
सेन्ट्रल काम्प्लेक्स, भा.प. अ. केन्द्र,
बम्बई - 400 085.

भारत में वर्ष 1969 में ही तारापूर परमाणु बिजली घर के चालू हो जाने से यह सिद्ध हो चुका है कि नाभिकीय रिएक्टरों द्वारा बिजली उत्पादन की तकनीकी अन्य पारम्परिक विधियों (जैसे, कोयला/तेल के जलने, जल के प्रपात) की भांति एक सक्षम, सुचारु और व्यावहारिक विधि है। इस समय देश में महाराष्ट्र में तारापुर, राजस्थान में कोटा, और तामिलनाडु में कलपक्कम स्थित तीनों नाभिकीय विद्युत संयंत्रों की कुल उत्पादन क्षमता 1330 मेगावाट है।

बिजली के किसी अन्य स्रोत की भांति नाभिकीय विद्युत के विभिन्न चरणों, जैसे निर्माण, प्रचालन, अनुरक्षण एवं अपशिष्ट निपटान के साथ भी अनेक समस्याएं एवं जोखिम जुड़े हुए हैं।

विभिन्न स्तरों पर सुरक्षा-संरोधक तैयार करने के लिए अभियांत्रिकी एवं प्रशासनिक कार्य विधियों पर आधारित कई युक्तियां अपनायी जाती हैं। इस प्रकार का प्रत्येक सुरक्षा-संरोधक स्वयमेव विकिरण या रेडियो सक्रिय पदार्थों के रिसाव को रोकने का एक सक्षम साधन है। अनेक प्रचालन अवस्थाओं और दुर्घटनाओं की स्थिति में ये संरोधक कितने प्रभावशाली हैं, इसका सही-सही जायजा लेने के लिए तथा उत्पन्न खतरों को समाज द्वारा स्वीकार्य स्तरों तक ही सीमित रखने के लिए तकनीकियां उपलब्ध हैं और इनका प्रयोग भी किया जाता है।

नियम एवं विनियम पहले से ही तैयार कर लिये जाते हैं, ताकि सुरक्षा संबंधी सभी उपस्करों के अभिकल्पन, संविरचन एवं अनुरक्षण के दौरान गुणवत्ता के न्यूनतम मानदण्डों का पालन सुनिश्चित किया जा सके।

वर्ष 1979 में संयुक्त राज्य अमरीका के थ्री माइल आइलैंड नामक रिएक्टर में हुई भयंकर दुर्घटना ने पूरे विश्व का ध्यान सुरक्षा उपाय तथा नाभिकीय विद्युत में तब तक प्रचलित सुरक्षा मानदण्डों की समीक्षा की आवश्यकता की ओर आकृष्ट किया। अभी हाल ही में रूस में चेरनोबिल में हुई दुर्घटना ने भी समस्त विश्व के सभी नाभिकीय अधिष्ठापनों में आपात कालीन तैयारियों की उपयुक्तता की समीक्षा की ओर ध्यान आकृष्ट किया है।

रेडियोधर्मी अपशिष्ट के सुरक्षित निपटान से जुड़ी समस्याएं अभी भी एक चुनौती हैं, लेकिन नाभिकीय विद्युत-उद्योग ने इन समस्याओं के समाधान के लिए अनेक वैकल्पिक मार्ग खोजने में पटुता तथा दूरदर्शिता का परिचय दिया है।

सुरक्षा उद्देश्य

मानव इतिहास बतलाता है कि पहिए के आविष्कार से लेकर भौतिक प्रगति का प्रत्येक कदम अपने साथ कुछ न कुछ संकट अवश्य लाया है। इसी प्रकार, हर उद्योग के विकास के इतिहास में ऐसे पन्ने भी शामिल हैं, जिन पर बड़े या छोटे स्तर पर हुई जानो-माल की हानि अंकित है। साथ ही, औद्योगिक प्रगति के लिए उठाया गया हर कदम मानव जीवन के स्तर के सर्वांगीण विकास तथा उसकी आयु बढ़ाने में सहायक रहा है। ऐतिहासिक रूप से एक स्वीकार्य सुरक्षित उद्योग उस उद्योग को समझा जाता है, जिसमें उस से होने वाले नुकसानों के कारण औसत जनसंख्या की जीवन-अवधि में आयी कमी, उससे होने वाले लाभों के कारण औसत जन संख्या की जीवन- अवधि में होने वाली बढ़ोत्तरी का 10% हो।

परमाणु के शान्ति पूर्ण उपयोगों से संबंधित स्वीकार्य खतरों की यह व्याख्या बहुत उदार मानी जाएगी, अतः विकिरण सुरक्षा का प्रथम आधारभूत सिद्धांत यह है कि विकिरण की मात्रा को जितना हो सके कम से कम रखा जाए।

यह माना जाता है कि एक स्वस्थ मानव शरीर अपनी आन्तरिक प्रतिरोधक शक्ति के कारण, विकिरण की एक नियंत्रित एवं सीमित मात्रा द्वारा हुई क्षति को सहन करने की क्षमता रखता है। यह विचार हमें व्यक्ति के लिए ग्राह्य मात्रा की

सीमा या एक ग्राह्य खतरे की धारणा की ओर ले जाता है। सीमाओं का निर्धारण इस बात पर निर्भर करता है कि व्यक्ति विकिरण संबंधी कार्य में जुटा एक योग्यता-प्राप्त कर्मचारी है या वह एक सामान्य जन है। सामान्य जनता के लिए विकिरण मात्रा सीमा निर्धारण करने के लिए जनता के उस वर्ग को आधार माना जाता है जो अत्यधिक संवेदनशील होता है। ऐसे व्यक्ति या तो नाभिकीय संयंत्रों के समीप स्थित चारागाहों में चरने वाले जानवरों से प्राप्त केवल दूध पर निर्वाह करने वाले बच्चे, या नाभिकीय सुविधाओं के समीप की झील, नदी या समुद्र से प्राप्त खाद्य पर ही निर्भर रहने वाले मछुआरे या इसी प्रकार के अन्य व्यक्ति ही हो सकते हैं। विकिरण मात्रा की वार्षिक सीमा निर्धारित करने में एक अवास्तविक बात यह है कि इस काल्पनिक संवेदनशील व्यक्ति को उसके सामान्य जीवन की पूरी अवधि में विकिरण की वह मात्रा निरन्तर मिलती रहेगी।

व्यावसायिक कर्मचारियों के लिए सीमित वार्षिक मात्रा सामान्य जनसंख्या के लिए निर्धारित सीमित वार्षिक मात्रा से 50 गुनी अधिक होती है। व्यावसायिक विकिरण कर्मचारियों के लिए यह सीमा-वृद्धि सुरक्षा में किसी ढील या छूट का परिणाम नहीं है। यह तो इस तथ्य की स्वीकृति है कि विकिरण कर्मचारी समाज के सर्वाधिक संवेदनशील वर्ग के व्यक्ति नहीं होते और अपने क्षेत्र में कार्य करते हुए समय-समय पर उनके स्वास्थ्य, कार्य के लिए उनकी स्वस्थता तथा यदि विकिरण से कोई हानि हुई हो, तो उसकी जांच बराबर होती रहती है। इसके अतिरिक्त, उन्हें जो मात्रा मिलती है, वह एक पूर्व नियोजित आधार पर है। साथ ही, यह मात्रा उस समय मिलती है जब वे काम पर होते हैं यानि कि दिन के आठ घन्टे। न तो बचपन में और न ही बुढ़ापे में यह मात्रा उन्हें प्राप्त होती है।

सुरक्षा का सिद्धांत

यह पहले ही कहा जा चुका है कि सुरक्षा-संरोधकों की एक श्रृंखला द्वारा ही सुरक्षा प्राप्त की जाती है। संयंत्र में किसी भी प्रकार की गड़बड़ी होने पर, चाहे वह सामान्य हो या असामान्य, प्रत्येक संरोधक स्वतन्त्र रूप से सुरक्षा के लिए पर्याप्त होगा। फिर भी, बुद्धिमत्ता इसी में है कि एक के पीछे एक संरोधक लगाकर सुरक्षा के अतिरिक्त साधन जुटाए जाएं, यद्यपि प्रत्येक संरोधक के अभिकल्पन, निर्माण, परीक्षण एवं अनुरक्षण तथा निरीक्षण करते समय अतिरिक्त संरोधकों की गणना नहीं के बराबर की जाती है। वस्तुतः, प्रत्येक सुरक्षा संरोधक एक अन्तिम सहारा समझा जाता है और इसी के अनुसार उसका अनुरक्षण किया जाता है।

नाभिकीय रिएक्टर सुरक्षा में पहला स्वयंसिद्ध सिद्धांत यह है कि बचाव के लिए सुरक्षा के किसी भी एक ही साधन पर कभी भी पूर्णतया निर्भर नहीं रहना चाहिए। ये साधन हमेशा समानांतर रूप में दोहरे स्तर पर बनाये रखे जाने चाहिए ताकि प्रत्येक प्रकार के कम से कम एक या उससे अधिक यंत्रों/साधनों को चालू हालत में रखने के लिए उनका निरीक्षण, परीक्षण और यदि आवश्यक हो, तो उनकी मरम्मत या उनको बदलने का कार्य भी किया जा सके। यह तभी संभव है, जब प्रत्येक सुरक्षा साधन के साथ, अतिरिक्त साधन भी अपनाये जाएं। इन श्रृंखलाबद्ध एवं समानान्तर सुरक्षा प्रणालियों एवं साधनों की जानकारी आगे दी गयी है।

नाभिकीय रिएक्टर सुरक्षा का दूसरा स्वयंसिद्ध सिद्धांत यह है कि सभी आवश्यक सुरक्षा-संरोधकों के प्रावधान के बावजूद, ऐसी तैयारी भी होनी चाहिए कि यदि सभी सुरक्षा-संरोधक भी विकिरण को रोकने में विफल हो जाएं और परिणामस्वरूप विकिरण या रेडियो धर्मिता का अनियोजित रिसाव होने लगे, तो भी हम उसका सामना कर सकें। नाभिकीय बिजली घरों को घनी आबादी के स्थानों से दूर स्थापित करके इस उद्देश्य की पूर्ति की जाती है। इस प्रकार, संयंत्र के चारों ओर एक निषिद्ध क्षेत्र घोषित कर दिया जाता है जिसके अन्दर न कोई बस्ती, न कोई उद्योग पनपने दिया जाता है, और न ही कृषि करने दी जाती है। यह निषिद्ध क्षेत्र एक अन्य क्षेत्र से घिरा होता है, जिसे अनुपजाऊ क्षेत्र कहा जाता है, और इस क्षेत्र में नाभिकीय विद्युत संयंत्र की स्थापना के पहले से स्थित आवासीय व व्यावसायिक गतिविधि के अलावा, किसी भी नयी अथवा पुरानी गतिविधि के विस्तार की अनुमति नहीं होती है। अनुपजाऊ क्षेत्र का चुनाव इस ढंग से किया जाता है कि प्रभावित क्षेत्र को सजीव समुदाय से शीघ्र खाली किया जा सके तथा किसी भी खाद्य पदार्थ को पृथक करने में सुगमता हो। अनुपजाऊ क्षेत्र का दायरा उस क्षेत्र से भी परे होता है जहाँ नाभिकीय बिजली घर में हुई असामान्य घटना के परिणामस्वरूप निकली रेडियोधर्मिता और/या विकिरण का काफी प्रभाव हो सकता है।

सुरक्षा कार्य में अपनायी जाने वाली तीसरी बात है, नाभिकीय विद्युत संयंत्र से हुए असंभावित रिसाव के प्रभाव को कम करने के लिए तैयार रहना। इस प्रकार, हमेशा आपात कालीन क्रियाविधियों की रूपरेखा पहले से ही तैयार की जाती है, जिससे ऐसी असंभावित घटनाओं के दुष्परिणामों पर काबू पाया जा सके। ऐसी क्रियाविधियों में संयंत्र के प्रबंधक वर्ग, प्रचालन संगठन, नियामक संस्थाओं, जिला एवं राज्य प्राधिकरणों की एक सुनश्चित स्पष्ट भूमिका होती है। सामान्य जनता को किसी अनियन्त्रित रिसाव की सूचना देने और अपने बचाव के लिए कारगर उपायों की जानकारी देने के लिए ये संगठन अपने विशेषज्ञों एवं स्रोतों के बीच तालमेल बनाये रखते हैं। आपात स्थिति के दौरान जगह खाली करने की स्थिति में, प्रभावित लोंगों के जान -माल की सुरक्षा की जिम्मेदारी भी इन्हीं प्राधिकरणों की होती है।

अन्तर्निहित सुरक्षा एवं अभियान्त्रिक सुरक्षा की रूप -रेखा

अ) सामान्य सुरक्षा उद्दृश्यों का वर्णन पहले ही किया जा चुका है। इन लक्ष्यों को व्यावहारिक रूप प्रदान करने हेतु, विकिरण से सुरक्षा के लिए जो अभिकल्पन संबंधी कार्य किये जाते हैं, उनमें प्रमुख हैं :

(i) विकिरण के सभी स्रोत हर समय प्रभावी रूप में निरोधित रखे जाने चाहिए।

(ii) संरोधित विकिरण सक्रिय स्रोतों के लिए पर्याप्त परिरक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(iii) संरोधन और परिरक्षण की अंखडता को बनाये रखने के लिए विकिरण पैदा करने वाले पदार्थों से उत्पन्न ताप के सुरक्षित छितराव की व्यवस्था की जानी चाहिए ।

(iv) ऊपर वर्णित तीनों प्रावधानों के निरीक्षण की व्यवस्था हर प्रत्याशित तथा प्रचालन अवस्था में होनी चाहिए।

उपर्युक्त लक्ष्यों को अननिर्हित सुरक्षा विशेषताओं, सुरक्षापूर्ण अभिकल्पन, निगरानी एवं प्रशासनिक उपायों के विवेक सम्मत तालमेल के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

ब) अन्तर्निहित सुरक्षा विशेषताएं

भारतीय नाभिकीय विद्युत कार्यक्रम का आधार दाबित भारी पानी रिएक्टर (पी.एच.डब्ल्यू.आर.) है, जिसकी वर्तमान क्षमता प्रति यूनिट 235 मेगावाट है। हमारे प्रत्येक नाभिकीय बिजली घर में दो इकाइयां है और कुछ बिजली घरों में दो और इकाइयां लगाने की क्षमता है।

हमारी दाबित भारी पानी रिएक्टर इकाई में भारी पानी द्वारा मंदित प्राकृतिक यूरेनियम डाइ-आक्साइड ईंधन सामग्री से ऊष्मा उत्पन्न की जाती है। फिर, इस ऊष्मा से गर्म हुआ भारी पानी शीतलक अपनी ऊष्मा साधारण हल्के पानी को दे कर उसे वाष्प में परिवर्तित कर देता है। वाष्प चक्र तथा प्रयुक्त जैनरेटर लगभग तापीय बिजली घरों की तरह ही होता है, परन्तु वाष्प प्राचल, अर्थात तापमान एवं दाब इनसे भिन्न होते हैं।

यह आश्चर्य की बात है कि प्रमुख रूप से दाबित भारी रिएक्टर में सबसे पहला और मुख्य संरोधक स्वयं उसकी ईंधन सामग्री ही है। यूरेनियम डाइ-आक्साइड को जिसमें कि विखंडनीय U-235 रहता है, यदि सही रूप में अभिकल्पित एवं बनाया जाए, तो अनेक गम्भीर दुर्घटनाओं की स्थिति में भी यह 99 % तक विखंडन से प्राप्त रेडियो सक्रिय पदार्थों को अपने भीतर रोके रखने की क्षमता रखता है। इसका गलनांक बहुत अधिक (लगभग 2800^{0} से) होता है, जो कि सामान्य अवस्थाओं में ईंधन के सबसे गरम भाग के तापमान (लगभग 1500^{0} से) से भी काफी ज्यादा है। अतः, अच्छी प्रकार से अभिकल्पित एवं बनाये गये आक्साइड ईंधन का आवरण, शीतलक नलियों एवं रिएक्टर पात्र की नलियों के निर्माण का जिरकलाय नामक पदार्थ भी इनकी अखण्डता बनाये रखता है। इस पदार्थ की मजबूती न्यूट्रान किरणन के प्रभाव में भी बनी रहती है और इसे अभीष्ट प्रयोग के लिए आसानी से आवश्यकतानुसार किसी भी रूप में परिवर्तित तथा मशीनित किया जा सकता है। यह प्रचालन अवस्था के तापमान पर ईंधन तथा जल से अप्रभावित रहता है। अधिक तापमान पर पानी के साथ इसकी अभिक्रिया होती है, इसलिए कुछ अभिधारित दुर्घटनाओं का सुरक्षा संबंधी विश्लेषण करते समय जिरकलाय तथा पानी की अभिक्रिया के रासायनिक प्रभावों की ओर ध्यान दिया जाता है तथा संरोधनों का तदनुसार अभिकल्पन किया जाता है। अमरीका के टी.एम. आइ.-2 में दुर्घटना के समय जिरकलाय की जल के साथ हुई अभिक्रिया के परिणामस्वरूप पर्याप्त मात्रा में हाइड्रोजन तैयार हुई थी। यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि चेरनोबिल दुर्घटना में भी ऐसी ही अभिक्रिया हुई होगी।

प्राथमिक प्रणाली की दाब सीमा, जिसके अन्तर्गत ऊष्मा की उच्च दाबीय परिवहन प्रणाली भी आती है, सामान्यतः उच्च श्रेणी के कार्बन इस्पात से बनायी जाती है। इसके बनाने में कड़ी सुरक्षा विशिष्टताओं का पालन होता है। पिछले कई दशकों से नाभिकीय एवं तापीय बिजलीघरों का सुरक्षित प्रचालन इस कार्बन इस्पात की उपयुक्तता की पुष्टि करता है। यह उच्च दबाव वाले शीतलक को सुरक्षित रूप से भीतर रोक रखने में समर्थ है और भीषण आपत्ति को स्वीकार्य स्तर पर रोकता है।

आक्साइड के रूप में प्राकृतिक यूरेनियम का प्रयोग ही सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण साधन प्रदान करता है। ईंधन के इस सुरक्षात्मक गुण को डाप्लर कोएफिशियन्ट आफ नैगेटिव रिएक्टिविटी कहा जाता है। सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि ईंधन का तापमान बढ़ने पर न्यूट्रान के एक विशिष्ट वर्ग को ईंधन अधिक मात्रा में सोख लेता है, जिससे परमाणु विखंडन की प्रक्रिया धीमी पड़ जाती है। इस प्रकार, ईंधन बहुत अधिक तापमान पर पहुंच कर परिणामस्वरूप छिन्न भिन्न हो कर रेडियो सक्रिय पदार्थों को बाहर बिखरने से बचाता रहता है। ईंधन की यह विशिष्टता ही " विखंडन अभिक्रिया" को जिससे ऊर्जा उत्पन्न होती है, एक अनियन्त्रित स्वरूप लेने नहीं देती है। ईंधन की यह विशिष्टता ही दाबित भारी पानी रिएक्टर को एक परमाणु बम की तरह विस्फोट होने नहीं देती है। प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग विखंडन अभिक्रिया की वृद्धि कर सकने वाले त्वरित साधनों (जैसे नियंत्रण छड़ों) की क्षमता पर यह एक अंकुश भी है।

आउटलैट हैडर के फटने की असम्भाव्य घटना के फलस्वरूप ईंधन प्रणाली से निकले शीतलक जल के कारण जो विखंडन अभिक्रया में कुल वृद्धि होती है, वह घातक स्तर के नीचे रहती है।

दाबित भारी पानी किस्म के रिएक्टरों में मंदक जल की मात्रा ईंधन की अपेक्षा काफी अधिक होती है। इसका कारण यह है कि न्यूट्रॉन को उचित ऊर्जा तक धीमा करने के लिए मंदक के परमाणुओं के साथ कई बार टकराना पड़ता है। साथ ही, भारी पानी रिएक्टर में मंदित होने के बाद न्यूट्रॉन ईंधन में सोखे जाने से पहले मंदक के परमाणुओं से कई बार टकराता है, परिणामस्वरूप न्यूट्रॉन का प्रजनन काल सेकण्ड का लगभग एक-हजारवां भाग होता है जो हल्के जल वाले रिएक्टर में न्यूट्रॉन के प्रजनन काल से 20 गुणा अधिक है। इस कारण, विखंडन अभिक्रिया में वृद्धि अपेक्षाकृत कम तीव्र होती है। इस विशिष्टता के कारण ऐसे रिएक्टरों में रिएक्टर नियन्त्रण प्रणाली तथा सुरक्षात्मक प्रणालियां सही समय पर काम करके रिएक्टर को नियन्त्रण में ले आती हैं।

दाबित भारी पानी किस्म के रिएक्टरों में कम दबाव वाले मन्दक का प्रावधान होता है जोकि अधिक दबाव वाले शीतलक से पृथक है। कम दबाव वाला यह मन्दक जल ऐसी अभिधारित घटनाओं में जहां शीतलक जल का बहिस्राव होता है (लास आफ कूलैन्ट ऐक्सीडैंट), संचित ऊष्मा को सोखने का अन्तिम सहारा है। प्रेशर वैसल के स्थान पर प्रेशर ट्यूबों का प्रयोग लास आफ कूलैन्ट एक्सीडैंट को अधिकतम, हैडर के फटने तक ही सीमित रखता है। प्राथमिक शीतलक पम्पन व्यवस्था के पूर्णतया समाप्त हो जाने पर रिएक्टर से अपेक्षाकृत अधिक ऊंचाई पर स्थित हैडर एवं बॉयलर, स्वाभाविक रूप से थर्मोसाइफन विधि द्वारा शीतलन का कार्य करते हैं।

स) अभियांत्रिक सुरक्षा विशेषताएं

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, रेडियोधर्मिता के सभी स्रोत, एक के पीछे एक संरोधक लगाने से अन्दर ही रोक लिये जाते हैं। ईंधन के रूप में स्वयं यूरेनियम रेडियोधर्मी पदार्थ का सबसे बड़ा स्रोत है। इसके अतिरिक्त, नियंत्रित घनत्व के सिंटर्ड पैलेट्स के रूप में यूरेनियम डाइ-आक्साइड ईंधन कुछ दुर्घटनाओं के दौरान भी विखंडन द्वारा उत्पादित 99% तक बाष्पशील और गैसीय रेडियोसक्रिय पदार्थों को रोक रखने की क्षमता रखता है।

सीवनहीन जर्केलाय आवरण दूसरा पार्थिव संरोधक है। इसकी धातुकीय संरचना एवं इसके भौतिक गुणधर्म इसके लिए नियत कार्य के अनुकूल हैं। ईंधन की गर्म पैलेटों तथा गर्म दाबित जल के प्रभाव को सहन करने की इस पदार्थ में काफी क्षमता है। साथ ही, इन के साथ इसकी कोई अभिक्रिया नहीं होती है। इसमें उच्च श्रेणी के वैल्ड, टी. आई. जी. या ई. बी. वेल्डन प्रक्रियाओं द्वारा सुविधापूर्वक किये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त, जर्केलाय का सक्रियकरण नहीं होता है और न ही स्टेनलैस स्टील, इनकोलाय आदि में पायी जाने वाली अन्तर्कणमय प्रतिबल संक्षारण चटकन (आइ. जी. एस. सी.

सी.) क्रिया इसके साथ घटती है। तथापि कुछ दुर्घटनाओं की स्थिति में यह हाइड्रोजन के संपर्क में आकर जिर्कोनियम हाइड्राइड (विकिरण द्वारा पानी के हाइड्रोजन तथा आक्सीजन में अलग होने से) तैयार करने में प्रभावी है। इसी प्रकार, जर्केलाय धातु भी पानी से अभिक्रिया के प्रति अति संवेदनशील है जिससे कि कतिपय दुर्घटना की स्थितियों में हाइड्रोजन के प्रमुक्तन के साथ, यह जिरकोनियम हाइड्रोक्साइड बनाने में सहायक हो सकता है। इनमें से एक ने थ्री माइल आइलैण्ड यूनिट -2 में 1979 में हुई दुर्घटना में भयानक रूप धारण किया था। सामान्य प्रचालनों के समय ईंधन ऊष्मा दरों सहित तंत्र के तापमान और दबाव को कम रखा जाता है ताकि धातु पानी अभिक्रिया या हाइड्राइड का निर्माण न हो सके।

विखंडन में उत्पादित रेडियोसक्रिय पदार्थों को भीतर ही रोके रखने के लिए एक दूसरा संरोधक भी होना है। प्राथमिक शीतलक दाब सीमा कहे जाने वाले इस दूसरे संरोधक के अन्तर्गत आते हैं, प्रेशर ट्यूब्ज, शीतलक फीडर तथा हैडर, प्राथमिक शीतलन पाइपिंग, बाष्प जनित्र का शेल तथा ट्यूब्ज, पी.एच.टी. पम्प का आवरण। दाब सीमा का अधिकतर भाग नाभिकीय बायलर पर लागू मानदण्डों के अनुसार उत्कृष्ट कार्बन स्टील द्वारा निर्मित होता है। इसे स्थापित करने से पहले और जहां कहीं आवश्यक हो, वहां प्रचालन के दौरान भी इसकी अखंडता के लिए इसकी विस्तृत रूप से जांच-पड़ताल, परीक्षण एवं मूल्यांकन का कार्य किया जाता है। दुर्घटना के कारण उत्पन्न उच्च दबाव से निबटने के लिए ऐसे उपकरण लगाये जाने जरूरी हैं, जिनसे दबाव कम किया जा सके (प्रेशराईज़र अथवा उसके बिना नियन्त्रित फीड एवं ब्लीड, और रिलीफ तथा सेफ्टी वाल्व)।

रेडियो सक्रियता को दबाव में या उच्च तापमानों पर रखने वाले सभी उपस्करों या प्रणालियों को रिएक्टर भवन में एक प्राथमिक संरोधन के भीतर रखा जाता है।

पूर्वकथित संरोधकों के होते हुए भी, ऐसी अप्रत्याशित कल्पित घटना के लिए जिसमें प्राथमिक दबाव सीमा को विनाशकारी क्षति पहुंच सकती है (जैसे लॉस ऑफ कूलैन्ट एक्सीडैन्ट में), प्रावधान करना आवश्यक है। दाबित भारी पानी रिएक्टर में रिएक्टर ईंधन, प्राथमिक तन्त्र की संचित ऊष्मा एवं अभिधारित धातु-पानी अभिक्रियाओं से उत्पन्न ऊष्मा के अवशोषण के लिए संरोधक की इमारत में ही एक निष्क्रिय उपकरण का प्रावधान किया जाता है। संरोधक का अभिकल्पन इस ढंग से किया जाता है कि बड़ी से बड़ी संम्भावित दरार पड़ने के फलस्वरूप, जैसे हैडर का फटना, लास आफ कूलैन्ट ऐक्सीडैन्ट के कारण, जो अधिकतम दबाव उत्पन्न होगा, उसके सहने की क्षमता इस संरोधक में होनी चाहिए। बाष्प को शीघ्रता से शान्त करने के लिए या तो ऊपर बने टैंक में (जैसा कि राजस्थान परमाणु बिजली घर में है) या अधोतल (बेसमैंट) में (जैसा कि अन्य इकाइयों में है) बहुत-सा पानी एकत्रित रखा जाता है, जिससे कि दबाव को कम किया जा सके। नरोरा संयंत्र एवं इसके बाद के संयंत्रों में संरोधक सामर्थ्य को बढ़ाने के लिए एक पूर्ण माध्यमिक संरोधक प्रयुक्त किया जाता है।

किसी नाभिकीय रिएक्टर में संभवतः सबसे महत्वपूर्ण अभियान्त्रिक सुरक्षा कार्य, इसे तत्काल ठप्प करने (शट डाऊन) का है। दाबित भारी पानी रिएक्टरों में यह सुनिश्चित करने के लिए कि रिएक्टर तुरंत बंद किया जा सके और जब स्थिति की मांग हो, तो इसे इसी अवस्था में रखा जा सके, दो स्वतन्त्र प्रणालियां अपनायी जाती हैं। रिएक्टर को बन्द करने का तरीका या तो क्रोड से गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से मंदक को बाहर गिराना (डम्प करना) है या रिएक्टर में ठोस छड़ों का जो न्यूट्रान अवशोषक होती हैं, गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव में गिरना या रिएक्टर में स्थित ट्यूबों में न्यूट्रान अवशोषक तरल भरना होता है।

रिएक्टर बन्द करने की प्रत्येक युक्ति किसी बाह्य, सक्रिय विद्युत स्रोत पर निर्भर न हो कर या तो गुरुत्वाकर्षण के माध्यम से कार्य करती है या एकत्रित (दबाव) ऊर्जा के द्वारा कार्य करती है। इसी प्रकार, ट्रिगरिंग यंत्र को अपने कार्य के लिए, ऊर्जा अविच्छिन्न विद्युत स्रोत से मिलती रहती है।

रिएक्टर क्रोड से ऊष्मा दूर करने के लिए निर्मित अभियान्त्रिक साधनों को कड़े सुरक्षा मानकों के अधीन अभिकल्पित, विनिर्मित किया जाता है। पी.एच.टी. पम्पों की संख्या दुगुनी रखी जाती है। एक रिएक्टर में ऐसे चार या आठ पम्प प्रयुक्त किये जाते हैं ताकि एक या दो पम्प उपलब्ध न होने पर भी, रिएक्टर कम बिजली पैदा करके अपना सामान्य प्रचालन जारी रख सके।

यह सुनिश्चित करने के लिए कि यदि प्रचालन के दौरान सभी पी.एच.टी. पम्प चलते हुए बन्द हो जाएं, तब भी कुछ सैकन्ड तक जल प्रवाह जारी रहे ताकि इस बीच में रिएक्टर बिना अधिक गरम हुए बन्द किया जा सके, प्रत्येक पी.एच.टी. पम्प में एक फ्लाइव्हील रहता है।

पी. एच. टी. पम्पों द्वारा उपलब्ध सामान्य शीतलन के साथ-साथ, बायलरों से वातावरण में वाष्प छोड़ कर तीव्रता से ठंडा करने की व्यवस्था रखी जाती है। तीव्रता से ठंडा करने की इस विधि द्वारा क्रोड के तापमान को न्यायोचित कम समय में 150 ^{0}से. तक कम किया जा सकता है। इसके अलावा, केवल बन्द करने के बाद की शीतलन प्रणाली द्वारा भी शीतलन की व्यवस्था की जाती है जिसमें दोगुने पम्प और ऊष्मा विनिमायक होते हैं जो केंद्र की आपात कालीन बिजली आपूर्तिव्यवस्था से बिजली प्राप्त करते हैं।

संयंत्र में या उसके आस-पास काम करने वाले व्यक्तियों को प्राप्त विकिरण को नियंत्रित रखने के लिए विभिन्न स्थानों को परिरक्षण (शील्डिग) प्रदान किया जाता है जिनमें निम्न शामिल हैं :

अ. रिएक्टर के चारों और परिरक्षण।

ब. ईंधन भरण मशीन और पी. एच. टी. प्रणाली के फीडर एवं हैडर के चारों ओर कंक्रीट परिरक्षण।

स. विकिरण धर्मी उपस्करों के चारों ओर कंक्रीट परिरक्षण।

द. रिएक्टर भवन के बाहर विकिरण स्तर को कम करने के लिए रिएक्टर भवन के अहाते का कंक्रीट से बनी दीवारों के रूप में परिरक्षण।

पूरे बिजली घर की प्रचालन प्रणालियों के सभी सहायक विद्युत-भारों एवं सुरक्षा/बचाव प्रणालियों के लिए बिजली की आपूर्ति हेतु पर्याप्त सहायक स्रोतों की व्यवस्था की जाती है। सहायक प्रणाली के प्राथमिक विद्युत शक्ति स्रोत को श्रेणी चार के बिजली स्रोत के रूप में जाना जाता है। सामान्यतः, यह दो स्रोतों, यूनिट जेनरेटर और ग्रिड से प्राप्त की जाती है। बिजली की आपूर्ति में इन दोनों में से किसी एक स्रोत के विफल हो जाने पर बिजली आपूर्ति का काम अपने आप ही वैकल्पिक स्रोत पर आ पड़ता है। श्रेणी चार की संपूर्ण बिजली आपूर्ति के विफल हो जाने की स्थिति में मुख्य उपस्कर, जैसे बायलर फीड पम्प, कंडैंसर, शीतलन पम्प आदि जो कि बिजली उत्पादन के लिए तो आवश्क हैं, परंतु सुरक्षा के मामले में गौण हैं, अपना कार्य करना बन्द कर देते हैं। श्रेणी चार की बिजली की आपूर्ति न होने पर आवश्यक भार, जैसे शट डाऊन शीतलन, मन्दक पम्प, आपातकालीन शीतलन पम्प आदि, एक दो मिनट के अन्दर दो डीजल जेनरेटरों में से किसी एक से बिजली प्राप्त कर सकते है, यद्यपि एक जेनरेटर ही पूरा आपातकालीन भार वहन कर सकता है, यह बात ध्यान देने योग्य है।

सुरक्षा/बचाव प्रणाली के लिए जो कि बिजली का एक पल का व्यवधान भी सहन नहीं कर सकती, श्रेणी दो की प्रणाली द्वारा बिजली प्रदान की जाती है। यह विद्युत प्रणाली सामान्यतः श्रेणी चार की बिजली आपूर्ति से ऊर्जा प्राप्त करती है। सुरक्षा प्रणाली, दो मोटर जेनरेटरों में से किसी भी एक से किसी भी समय बिजली प्राप्त कर सकती है। प्रत्येक सैट श्रेणी दो के आपातकालीन भार को वहन कर सकता है और दोनों जेनरेटर सेट एक दूसरे के सहायक होते है। ये जेनरेटर सैट श्रेणी चार की असफलता पर तब तक बिजली उत्पादन जारी रखने की क्षमता रखते हैं, जब तक कि कोई डीजल जेनरेटर सैट आपातकालीन भार वहन न करने लगे। आधुनिक अभिकल्पनों में मोटर जेनरेटर सैटों के स्थान पर विश्वस्त स्टैटिक इनवर्टर और रैक्टिफायर उपयोग में लाये गये हैं।

श्रेणी चार एवं श्रेणी तीन के असफल हो जाने पर ये मोटर जेनरेटर सैट अपनी बिजली केंद्र की बैट्रियों से प्राप्त करते हैं। केंद्र की बैट्रियां अति आवश्यक सुरक्षा कार्य के लिए भी दिष्ट धारा बिजली की आपूर्ति करती हैं और श्रेणी एक की बिजली आपूर्ति प्रणाली कही जाती हैं। सामान्य प्रचालन की अवस्था में ये बैट्रियां श्रेणी चार बिजली आपूर्ति द्वारा चालित रेक्टिफायर्स के माध्यम से पूर्णतया चार्ज रहती हैं और बीस मिनट तक श्रेणी दो का भार वहन करने में समर्थ होती है।

द) प्रशासनिक सुरक्षा विशेषताएं

विकिरण की विस्मयकारी, अदृश्य अभिघातक विशेषताओं के कारण विकिरण सुरक्षा से जुड़े व्यक्तियों की तत्संबंधी कोई भी बात सदा के लिए नहीं मान लेनी चाहिए। मरफी का यह नियम कि "यदि कुछ गलत घटित हो सकता है, तो वह होगा" नाभिकीय उद्योग में भी उसी प्रकार लागू होता है, जिस प्रकार वह रसायन क्षेत्र में (भोपाल), खनन क्षेत्र में

(चसनाला), रेलवे और मोटरकार उद्योग में (असंख्य), नौवहन तथा इसी प्रकार के अन्य प्रचालनों में लागू होता है। यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि सतत सतर्कता द्वारा ही सुरक्षा संभव होती है। अतः, हमारे परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम में सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए प्रशासनिक नियन्त्रण का अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रशासनिक नियन्त्रण का क्षेत्र अभिकल्पन से प्रारम्भ हो कर, उत्पादन पर प्रभावी होता हुआ सामान्य प्रचालन चरण तक होता है। प्रत्येक चरण में निष्पक्ष विशेषज्ञों द्वारा स्वतन्त्र रूप से उसकी जांच की जाती है ताकि अभिकल्पन और निर्माण में भूल से हुई त्रुटियों का पता लगाया जा सके और हार्डवेयर में परिवर्तित होने से पहले ही उसे सुधारा जा सके। भारत में विभिन्न निकायों, जैसे इकाई सुरक्षा समितियों, स्थानीय परिचालन पुनरावलोकन समिति और विभागीय सुरक्षा पुनरावलोकन समिति द्वारा दो या तीन स्तरों पर समीक्षा एवं जांच-पड़ताल की जाती है। परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद (ए.इ.आर.बी.) स्वतंत्र रूप से समय-समय पर विभागीय औद्योगिक सुविधाओं की जांच पड़ताल करती है। संयंत्र का प्रचालन एवं प्रचालकों के प्रशिक्षण का पुनरावलोकन भी इसी जाँच-पड़ताल के अन्तर्गत आता है।

अभिकल्पकों एवं प्रबंधकों द्वारा वर्णित सुरक्षा व्यवस्था को उपकरणों में तथा प्रक्रिया विधियों में व्यावहारिक रूप दिया गया है या नहीं, यह सुनिश्चित करने के लिए कार्यक्रम के विभिन्न स्तरों पर गुणवत्ता की जांच तथा अनुमति देने (विशिष्ट चरण प्रारम्भ व पूरा करने) की एक प्रणाली स्थापित की गयी है।

अनुमति देने का प्रथम चरण निर्माण कार्य शुरू करने के साथ शुरू होता है। निर्माण हेतु अनुमति पत्र देने से पहले नियामक निकाय इस बात से आश्वस्त हो लेता है कि संयंत्र का स्थान एवं वहाँ का पर्यावरण सुरक्षा के दृष्टिकोण से उचित है और यह कि निर्दिष्ट केंद्र इस प्रकार अभिकल्पित एवं विनिर्मित है कि वह सुरक्षा संबंधी सभी राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मानकों (नियमों) के अनुरूप है।

दूसरा अनुमति पत्र तब प्रदान किया जाता है, जब संयंत्र का निर्माण कार्य पूरा हो जाता है और यह कमीशनिंग (प्राधिचालन) परीक्षण के लिए तैयार हो जाता है। यहां एक बार फिर यह जांच की जाती है कि संस्थापित उपकरण एवं प्रणालियां अभिकल्पन उद्देश्यों एवं सुरक्षा संबंधी अपेक्षाओं को पूरा करती हैं या नहीं। संयंत्र प्राधिचालन का अनुमति पत्र प्रदान करने से पहले यह निश्चित करना अनिवार्य है।

प्राधिचालन परीक्षण के पूरा हो जाने पर पुनरावलोकन एवं नियामक निकाय एक बार फिर प्राधिचालन परीक्षण के दौरान प्रकाश में आयी विभिन्न प्रणालियों के निष्पादन का व्यौरा लेते हैं। एक बार फिर यह सुनिश्चित कर लेने पर ही कि अभिकल्पन के अनुसार संयंत्र की सुरक्षा विशेषताएं कार्य करने में समर्थ हैं और संभावित दुर्घटना के समय भी कार्मिक, जनता एवं पर्यावरण सुरक्षित रह सकते हैं, ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए अनुमति पत्र प्रदान किया जाता है।

कहना न होगा कि प्राधिकृत गतिविधि की अनुमति तभी तक है जब तक कि सुरक्षा संबंधी आवश्यक शर्तें पूरी रहती हैं। यदि कहीं ये अपेक्षाएं पूरी नहीं रहती हैं, तो विवश होकर उस संयंत्र को बंद करना पड़ता है और उसे उसी हालत में रखना होता है।

सुरक्षा प्रबंध कितना प्रभावी है, इसका पता आपातकालीन स्थिति से निपटने के लिए की गयी तैयारियों से ही लगता है। आपातकालीन स्थिति उसे समझा जाता है जब अभिकल्पित विशेषताओं द्वारा किसी दुर्घटना का सामना समुचित रूप से नहीं किया जा सकता है। यह आपात स्थिति मामूली भी हो सकती है, जैसे कि बहु-अभियान्त्रिक सुरक्षा प्रणाली का असफल हो जाना। आपात स्थिति की गम्भीरता चाहे कम हो या अधिक, किसी भी आपात स्थिति से जुड़े सम्भाव्य अथवा वास्तविक रेडियो धर्मिता के रिसाव के लिए हमें तैयार रहना है, क्योंकि आपात स्थिति की परिभाषा के अनुसार, सभी अभिकल्पित सुरक्षा संरोधकों के नाकाम होने पर आपात स्थिति का मुकाबला प्राथमिक तौर पर प्रशासनिक तौर-तरीकों से ही किया जाता है।

योजना में प्रथम प्रशासनिक कदम, संभावित आपात स्थितियों को उनकी उत्पत्ति, उनके प्रकार (अर्थात, रिसाव वायु जनित है या पानी-जनित, और क्या वे पानी/वाष्प, रेडियोधर्मी नोबल गैसों, रेडियो आयोडिनों या रेडियोधर्मी कणों से संदूषित हैं), उनकी सशक्तता (आसन्न या वास्तविक) और उनके विस्तार (अर्थात, संयंत्र के क्षेत्र तक, तात्कलिक संयंत्र पर्यावरण, या दूर की आबादी के क्षेत्रों तक सीमित) के अनुसार उन्हें मदवार वर्गीकृत करना है। प्रचालन कर्मचारियों एवं सहायक

कर्मचारियों को संयंत्र प्राचल, डिस्प्ले पैनलों या क्षेत्रीय मापन के तुरंत सर्वेक्षण द्वारा यह पहचानने व वर्गीकृत करने का प्रशिक्षण दिया जाता है कि किस प्रकार की आपात स्थिति है।

दूसरा महत्वपूर्ण कदम है आपात काल के दुष्प्रभावों को सीमित करने का प्रयत्न करना और उसके लिए साधन जुटाना। साथ ही, वायु दिशा द्वारा जिस क्षेत्र में रिसाव पदार्थ के पहुंचने की संभावना रहती है, उस क्षेत्र की जनता को रिसाव की सूचना देकर सावधान किया जाता है। साधारणतया, चेतावनी की स्थिति में घर के भीतर रहना ही वांछनीय है और आवश्यकता पड़ने पर प्रोफिलैक्टिक दवाइयों (स्थायी आयोडीन) का सेवन करना चाहिए।

गम्भीर रेडियोधर्मी रिसाव होने की सम्भाव्य स्थिति का सामना करने के लिए पहले से ही प्रभावित जन समुदाय को उस स्थान से हंटाने हेतु आवश्यक जन तथा सामग्री जुटाने की तैयारियां की जाती हैं। इसके लिए संयंत्र के कार्मिकों का स्थानीय सरकारी कर्मचारियों, नागरिक सुरक्षा संगठनों और टेलीफोन सेवाओं के साथ उचित तालमेल होना अति आवश्यक है।

हमारी आपातकालीन तैयारी की योजना ऐसे सभी संगठनों के परामर्श से तैयार की गयी है। आपातकाल का सामना करने की सतत क्षमता बनाये रखने के लिए आपातकालीन दस्तों का समय-समय पर प्रशिक्षण एवं अभ्यास आयोजित किया जाता है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त अवतरणों में हमारे नाभिकीय बिजलीघरों में अपनायी जाने वाली सुरक्षा युक्तियों के विभिन्न पहलुओं का विस्तृत विवरण दिया गया। खतरनाक समझे जाने वाले अन्य उद्योगों, जैसे ताप-विद्युत, रसायन, ऑटोमोबाइल, जहाजरानी एवं उड्डयन अन्तरिक्ष विज्ञान आदि की तरह ही नाभिकीय उद्योग में भी उच्च स्तर की सुरक्षा युक्तियां अपनायी जाती हैं। नाभिकीय बिजली उद्योग के अभिलेख को यदि देखा जाए, तो टी.एम.आई.-2 व चेरनोबिल को छोड़कर, घातक घटनाएं, शारीरिक हानियां एवं सम्पत्ति के नुकसान किसी अन्य उद्योग की तुलना में कम ही हैं। इसका उदाहरण चेरनोबिल दुर्घटना है जो कि भोपाल दुर्घटना से परिणामों में 100 गुनी कम भयंकर रही, जबकि दोनों दुर्घटनाओं की गम्भीरता लगभग एक-सी है, यद्यपि इस प्रकार की तुलना किसी भी हालत में किसी बात का औचित्य नहीं ठहराती है। नाभिकीय बिजली उद्योग में हम इस बात से अवगत हैं कि इस पर हिरोशिमा एवं नागासाकी के ध्वंसावशेषों पर खड़े होने का, "मूल पाप का" कलंक लगा हुआ है। हमें इस बात का अन्दाजा है कि हमारी गतिविधियों को एक बहुत बड़े सूक्ष्म दर्शी कांच से देखा जाता है और किसी अन्य उद्योग की गतिविधियों की तुलना में इन पर ज्यादा कड़ी नजर रखी जाती है। हम यह भी महसूस करते हैं कि हमारे लिए अभ्यास एवं गलतियों से सीखने का अवसर नहीं है। सी. हंटन (यू.के. 1957) ने इस बात पर निम्न शब्दों में जोर दिया था :

"सभी अन्य अभियांत्रिक प्रौद्योगिकियां अपनी सफलता के आधार पर विकसित नहीं हुई हैं, बल्कि वे अपनी असफलताओं के आधार पर विकसित हुई हैं। न टूटने वाले पुल की अपेक्षा, भार पड़ने पर टूट जाने वाला पुल निर्माण संबंधी ज्ञान में अधिक योगदान करता है। ठीक वैसे ही, दुर्घटना रहित बॉयलरों की अपेक्षा दुर्घटनाग्रस्त बायलर से हमें इसके अभिकल्पन के संबंध में अधिक सीखने को मिला है। तथापि, परमाणु ऊर्जा की विफलताओं द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर प्रगति करने की बात को मन से निकाल ही देना चाहिए।"

यह सुनिश्चित करने के लिए कि अभिकल्पन, निर्माण, प्रचालन एवं दुर्घटनाएं सुरक्षा उद्देश्यों की कसौटी पर खरी उतरती हैं या नहीं, हमारे यहां उनका निरीक्षण, पुनर्निरीक्षण एवं सुरक्षा ऑडिट करने की व्यवस्था है। हम दूसरे के प्रतिकूल विचारों को खुले तथा क्रियात्मक दृष्टिकोण से व विनम्रतापूर्वक सुनते हैं और अपनी व दूसरों की गलतियों से सबक सीखकर अपने संयंत्रों में सुरक्षा स्तर सुधारने का प्रयत्न करते हैं। हमारे परमाणु ऊर्जा नियामक मंडल के द्वार अपने सुरक्षा संबंधी पहलुओं पर वार्तालाप एवं चर्चा के लिए, विशेषकर प्रतिकूल विचार रखने वाले सुविज्ञ जनों के लिए सदैव खुले हैं।

प्रस्तुत लेख में हमने अपने दाबित भारी पानी रिएक्टरों में अपनायी जाने वाली सुरक्षा युक्तियों का वास्तविक चित्र आपके सामने रखने का प्रयत्न किया है। रिएक्टरों के लिए हमारे पास आधुनिकतम अतिरिक्त शट डाउन प्रणाली, रिसाव की दर को शून्य तक लाने हेतु दोहरा संरोधन और अपने संयंत्रों को चलाने के लिए योग्य प्रचालक हैं।

सुरक्षा संबंधी संभावी या वास्तविक कमियों का पता लगाने के लिए हम अभिकल्पन से लेकर निर्माण, संरचना एवं प्रचालन तक सुरक्षा संबंधी मामलों का अच्छी तरह पुनर्विवेचन एवं जाँच-पड़ताल करते हैं।

हम अपने बिजली घरों में कुशल कार्मिकों की नियुक्ति के मामले में कठोर नियमों का पालन करते हैं। केंद्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले तकनीकी कार्मिकों का इंजीनियरी या विज्ञान स्नातकों में से चन किया जाता है। हम अपने स्नातकों को अनिवार्यतः एक वर्ष का कुशल स्नातकोत्तर प्रशिक्षण देते हैं। तत्पश्चात उन सफल स्नातकोत्तर कर्मचारियों को उनके पूर्णतया प्रशिक्षित सहकर्मियों के साथ 6 या 8 वर्ष तक के लिए सहायक के रूप में कार्य करना होता है। तब सहायक शिफ्ट प्रभारी अभियंताओं के रूप में उनकी नियुक्ति पर विचार किया जाता है। प्रशिक्षण की इस अवधि में, प्रशिक्षणार्थियों के लिए नियमित रूप से प्रशिक्षण पाठ्यक्रम एवं परीक्षाएं आयोजित की जाती हैं। इसमें सफल प्रशिक्षणार्थियों को फिर मूल्यांकन एवं योग्यता आकलन हेतु विशेषज्ञों के पास भेजा जाता है जो विभाग की सुरक्षा पुनरावलोकन समिति के विशेषज्ञों के तत्वावधान में किया जाता है। कुछ वर्षों तक इस कार्य के अनुभव के बाद, इन सहायक शिफ्ट प्रभारी अभियंताओं का शिफ्ट प्रभारी अभियंता के लिए फिर से योग्यता मूल्यांकन किया जाता है। सफल होने के बाद वे एक इकाई या बिजलीघर का स्वतन्त्र रूप से नियन्त्रण कार्य करते हैं।

अपने लेखों एवं संगोष्ठियों तथा अन्य कार्यों के माध्यम से अपनी गतिविधियों में जनसामान्य को शामिल करने की पहल भी हमने की है। हम उन परामर्शों एवं आलोचनाओं का स्वागत करते हैं जिससे कि हमें अपने संयंत्रों, सुरक्षा-स्तर को बढ़ाने में मदद मिल सके।

• • •

(पृष्ठ 13 का शेष)

कीं, तो वे सुरक्षा गुणांक की बजाय अन्य सुरक्षित उद्योगों के जोखिम से तुलना के आधार पर थीं। चूंकि तत्कालीन जानकारी के अनुसार, सुरक्षापूर्ण उद्योगों में जोखिम दर 0.01 से 0.03% मृत्यु प्रति वर्ष थी, अतः विकिरण व्यवसायी वर्ग के लिए विकिरण की सीमा ऐसी निर्धारित की गयी, जिससे जोखिम दर इसी स्तर पर हो। इस प्रकार, यह सीमा 50 मिली सीवर्ट (5 रेम) प्रति वर्ष उचित मानी गयी। यह देखा गया कि इस सीमा के पालन करने पर व्यवसायी व्यक्तियों की प्रति व्यक्ति विकिरण मात्रा का औसत 5 मिली सीवर्ट प्रतिवर्ष रहता है। इस स्तर की विकिरण मात्रा से जोखिम का अनुमान 0.006% होता है।

1977 की संस्तुतियों में और भी कई परिवर्तन आये थे, जैसे रेडियोसक्रिय पदार्थ के अधिकतम शारीरिक बोझ के स्थान पर "अर्न्तग्रहण की वार्षिक सीमा" नाम का एक नया प्राचल (पेरामीटर) लाया गया। इसके अलावा, शरीर के विभिन्न अंगों के लिए महत्ता गुणांक निश्चित किये गये।

वर्ष 1990 में जो संस्तुतियों प्रस्तावित हुई हैं, इन्हें मूल्यों पर आधारित किया गया है। एक मुख्य बात यह है कि पिछले दशक में जो जानकारी प्राप्त हुई है, उसके अनुसार विकिरण से होने वाले कर्क रोग की संभावना पहलेवाले अनुमान से 2½ गुनी अधिक हो गयी है, अतः विकिरण की सीमा को 2½ गुना कम कर दिया गया है।

उपसंहार

इस संक्षिप्त विवरण से यह पता लगता है कि विकिरण संरक्षण के मापदण्ड समय के साथ बदलते रहे हैं। यह परिवर्तन आम तौर पर अधिक कड़ाई की दिशा में होता रहा है। अ.वि.सं. आयोग का कथन है कि विकिरण से डरिए नहीं, पर उसकी परवाह कीजिए। विकिरण के जोखिमों को अकेले नहीं, पर जीवन के अन्य जोखिमों के परिपेक्ष में देखिए। विकिरण संरक्षण के सम्बन्ध में निर्णय लेते समय विकिरण संरक्षण पर होने वाले व्यय तथा संरक्षण के उपाय करने के बाद जो लाभ होगा, इन दोनों के सन्तुलन का ध्यान रखना परम आवश्यक है। इस संन्तुलन की प्रक्रिया को इष्टतमीकरण कहा जाता है। विकिरण संरक्षण के उपायों में मात्रा-सीमाओं के पालन के अतिरिक्त, इष्टतमीकरण का अत्यन्त महत्व है। • • •

चिकित्सा में विकिरण संरक्षण कार्यान्वयन-अनुभव एवं सुझाव

आर. एन. एल. श्रीवास्तव,
एसोसियेट प्रोफेसर एवं वि. सु. अ.
रेडियोलाजी विभाग,
एस. एन. मेडीकल कालेज, आगरा

चिकित्सा विज्ञान में रोगों के निदान तथा उपचार की आधुनिक विधाओं में विकिरण का उपयोग कैंसर के अतिरिक्त हृदय, मस्तिष्क, यकृत आदि की संरचना एवं कार्यप्रणाली के अध्ययन में किया जा रहा है। इन कार्यों के सम्पादन में विकिरण की कुछ मात्रा रोगी के साथ-साथ चिकित्सकों तथा परिचारकों को भी मिलती है। मानव शरीर पर आयनीकारक विकिरण के हानिकारक प्रभावों को देखते हुए इससे सुरक्षा की प्रभावी विधियों एवं सुरक्षित कार्य प्रणाली का सम्यक ज्ञान आवश्यक है।

उद्देश्य

विकिरण संरक्षण कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्य निम्न मुद्दों को व्यवहारिक रूप प्रदान करना है :

(क) बिना किसी सकारात्मक परिणाम के विकिरण स्रोत का उपयोग चिकित्सकीय कार्यों में न किया जाय।

(ख) "जितना न्यायसंगत रूप से कम हो सके, उतना (ALARA)" के सिद्धान्त का पालन किया जाय। इसके अनुपालन में आर्थिक एवं सामाजिक पहलुओं पर भी ध्यान दिया जाय।

(ग) कर्मचारी एवं जनसाधारण को मिलने वाली विकिरण की मात्रा को अधिकतम अनुज्ञेय सीमा के अन्दर रखा जाय।

कानूनी प्रावधान एवं राष्ट्रीय संस्थाएं

विकिरण संरक्षण को प्रभावी रूप से कार्यन्वित करने हेतु परमाणु ऊर्जा अधिनियम, १९६२ की (१९६२ का ३३ की) धारा ३० और इस निमित्त केन्द्रीय सरकार को समर्थ बनाने वाली अन्य सभी शक्तियों का प्रयोग करते हुए १३ सितम्बर, १९७१ को विकिरण सुरक्षा नियम (आर. पी. आर:- ७१) का सृजन हुआ। इससे विकिरण संरक्षण कार्यक्रम को मूर्तरूप देने वाली राष्ट्रीय संस्थाओं को वैधानिक अधिकार मिल गया।

भारत वर्ष में विकिरण स्रोतों के अधिग्रहण भंडारण, रख-रखाव, आवागमन एवं निस्तारण में सुरक्षा व्यवस्था सुनिश्चित करने हेतु नवम्बर, १९८३ में परमाणु ऊर्जा अधिनियमों के अन्तर्गत परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद (ए.ई.आर.बी.) की स्थापना की गयी तथा निदेशक, परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद को आर.पी.आर.-७१ के नियम-२ के खण्ड (घ) के अनुसार "सक्षम अधिकारी" नियुक्त किया गया। इसके अतिरिक्त, विकिरण संरक्षण प्रभाग (डी.आर.पी.), भारतीय विकिरण संरक्षण एवं चिकित्सीय भौतिक शास्त्री संघ (आई.ए.आर.पी. एवं ए.एम.पी. आई.) भी विकिरण सुरक्षा से सम्बन्धित नियमों, कुशल एवं सुरक्षित कार्य प्रणालियों का समय-समय पर प्रतिपादन करके विकिरण संरक्षण के कार्यान्वयन में अपना योगदान देते रहते हैं।

विकिरण सुरक्षा अधिकारी (वि.सु.अ.)

विकिरण सुरक्षा नियम-७१ के अनुसार प्रत्येक विकिरण प्रतिष्ठापन (जिसमें क्ष-किरण प्रतिष्ठापन भी सम्मिलित है) का विकिरण सुरक्षा के विचार से उचित होना तथा संस्थान में "विकिरण सुरक्षा अधिकारी" की नियुक्ति अनिवार्य है। "प्रत्येक नियोजक सक्षम अधिकारी के अनुमोदन से या तो अपने आपको या किसी व्यक्ति को वि.सु.अ. के रूप में नामित करेगा। ऐसे व्यक्ति के पास सक्षम अधिकारी द्वारा निर्धारित योग्यता होनी चाहिए।"

पुनश्च, नियुक्त वि.सु.अ. से यह अपेक्षा की जाती है कि वह परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद, विकिरण संरक्षण प्रभाग एवं स्थानीय प्रशासन के मध्य सम्पर्क सूत्र, संस्थान में सुरक्षा नियमों को कार्यान्वित कराने, नियोजन, विकिरण यंत्रों का उचित रख-रखाव एवं स्थानीय प्रशासन द्वारा आबंटित शिक्षण कार्य आदि भी करेगा (यदि संस्थान में शिक्षण कार्य भी होता है)।

प्रायः विभिन्न विकिरण संस्थानों में कार्यरत चिकित्सा भौतिक शास्त्रियों (चि.भौ.शा.) को ही नियोजकों द्वारा वि.सु.अ. नामित किया गया। सकुशल कार्य संपादन हेतु विकिरण संरक्षण निर्देशिकाएं (जैसे RPG/GEN-1) भी प्रकाशित की गयीं, परन्तु इनमें वि.सु.अ. की जिम्मेदारियों एवं कर्तव्यों के

विस्तृत विवरण के अतिरिक्त उसके अधिकारों एवं शक्तियों का कोई उल्लेख नहीं किया गया। ऐसी परिस्थिति में, नामित अधिकारी अपने इस नये उत्तरदायित्व का निर्वाह किस प्रकार करेगा, यह एक विचारणीय प्रश्न है। क्या कोई अधिकार एवं शक्ति विहीन व्यक्ति किसी भी कर्तव्य का निर्वाह निर्बाध रूप से कर सकता है? क्या एक ही व्यक्ति पूर्ण रूपेण विकसित विकिरण संस्थानों के सभी विभागों (विकिरण निदान, उपचार, नाभिकीय औषधि व अन्य) में अपने स्थानीय दायित्व के अतिरिक्त सुरक्षा व्यवस्थाओं को सुनिश्चित कर पाएगा ? विशेष रूप से जबकि सभी विधाओं का विकास एवं विस्तार तीव्र गति से हो रहा है तथा बदलते आयाम में विकिरण मशीनों का विस्तृत ज्ञान, स्थापना, विवरण, सुरक्षित कार्यविधि, गुणवत्ता परीक्षणों आदि का सम्यक ज्ञान वि.सु.अ/चि.भौ.शा. को होना अति आवश्यक है। मेरे विचार से विकसित विकिरण संस्थानों के प्रत्येक विभाग में (लघु तथा अविकसित निजी क्षेत्र के प्रतिष्ठापनों को छोड़कर) पृथक-पृथक वि.सु.अ. की नियुक्ति अनिवार्य है।

कुछ वर्षों पूर्व परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद द्वारा निजी क्षेत्रों में स्थापित विकिरण प्रतिष्ठापनों में विकिरण सुरक्षा सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी देश के विभिन्न चिकित्सा महाविद्यालयों एवं सरकारी एवं अर्द्ध-सरकारी संस्थानों में कार्यरत वि.सु.अ. को ही सौंपने की संभावना व्यक्त की गयी थी। मेरी जानकारी के अनुसार इस दिशा में कुछ प्रगति भी हुई है। मैं इस सम्बन्ध में निम्न निवेदन करना चाहता हूँ।

विकिरण संस्थानों में कार्यरत वि.सु.अ/चि.भौ.शा. की व्यस्तता को ध्यान में रखते हुए, इस नयी जिम्मेदारी का निर्वाह करने में उसे अनेक आर्थिक एवं प्रशासनिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। अतः, मेरा सुझाव है कि प्रत्येक राज्य में मंडल/जिला स्तर पर विकिरण सुरक्षा इकाई की स्थापना परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद के तत्वाधान में की जाये। इसके प्रमुख के रूप में मंडल/जिला वि.सु.अ. की नियुक्ति अलग से की जाये। कर्तव्यों को निर्बाध रूप से सम्पादित करने हेतु मंडल/जिला वि.सु.अ.को आवश्यक धन, वाहन एवं प्रशिक्षित विकिरण कर्मी भी उपलब्ध करा दिये जायें तथा मंडल/जिला में स्थापित सभी विकिरण संस्थानों को स्थानीय वि.सु.अ.(यदि नियुक्त हो) के माध्यम से या सीधे ही मंडल/जिला वि.सु.अ.के प्रति उत्तरदायी बना दिया जाये।

यदि किन्हीं कारणों से ऐसा सम्भव न हो सके, तो विकिरण संरक्षण कार्यक्रम को प्रांतीय सरकारों के माध्यम से "राष्ट्रीय कार्यक्रम" के रूप में कार्यान्वित कराया जाये। इस व्यवस्था से केन्द्र व प्रांतीय स्तर पर नियुक्त विकिरण कर्मियों को होने वाली आर्थिक एवं प्रशासनिक कठिनाइयों का स्वतः ही निराकरण हो जायेगा। पुनश्च, मंडल/जिला स्तर पर भविष्य में होने वाली आकस्मिक आपदाओं, दुर्घटनाओं, जैसे नाभिकीय युद्ध, पर्यावरण में व्याप्त विकिरण प्रदूषण इत्यादि के लिए आवश्यक तैयारी सम्बन्धी कार्यों की जिम्मेदारी भी मंडल/जिला वि.सु.अ. को सौंपी जा सकती है।

विकिरण संरक्षण कार्यान्वयन में सम्भावित बाधाएं

स्थानीय स्तर पर- विकिरण सुरक्षा नियम-71 को स्थानीय विभागों में कार्यान्वित कराने में निम्न बाधाएं आती हैं :-

विकिरण निदान विभाग

(क) अति विशिष्ट रोगियों, गर्भवती महिलाओं, पागल रोगियों तथा बच्चों के क्ष-किरण परीक्षण।

(ख) त्रुटिपूर्ण विभागीय कार्य शैली एवं अव्यवहारिक नियोजित विभाग।

(ग) पुरानी तथा स्रावी विकिरण मशीनों का निरन्तर उपयोग।

(घ) विकिरण सुरक्षा उपकरणों की कमी, त्रुटिपूर्ण या बिल्कुल कार्य न करना।

(ड) अप्रशिक्षित कर्मियों द्वारा विकिरण मशीनों का संचालन एवं रख-रखाव।

(च) निम्न स्तर की क्ष-किरण मशीनों का उत्पादन एवं प्रचलन।

विकिरण उपचार विभाग

(क) त्रुटिपूर्ण विभागीय कार्यशैली, अव्यवस्थित नियोजन विभाग।

(ख) अति विशिष्ट रोगियों, गर्भवती महिलाओं (कदाचित) पागल रोगी एवं बच्चों का उपचार।

(ग) पुरानी तथा असुरक्षित मशीनों का निरन्तर उपयोग।

(घ) विकिरण सुरक्षा उपकरणों की कमी,त्रुटिपूर्ण या बिल्कुल कार्य न करना।

(ड) आधुनिक विकिरण उपकरणों की कमी।

(च) विकिरण निदान में सहायक उपकरणों का अभाव।

नाभिकीय औषधि विभाग

(क) त्रुटिपूर्ण कार्यशैली एवं अव्यवस्थित नियोजन विभाग (निदान,उपचार एवं संग्रह कक्ष)।

(ख) संदूषण की समस्या एवं संदूषित अपशिष्ट पदार्थों का निस्तारण।

(ग) स्थानीय प्रशासन का असहयोग एवं विभागीय सूझ-बूझ की कमी।

(घ) उपकरणों का संतोषजनक कार्य न करना।

सामान्य व्यवधान

कुछ सामान्य व्यवधान जो विकिरण सुरक्षा नियमों को लागू करने में बाधक होते हैं।

(क) विभागीय त्रुटिपूर्ण कार्यशैली, अव्यवस्थित नियोजन विभाग, प्रशासनिक एवं आर्थिक कठिनाइयाँ तथा विभागीय सद्भाव एवं सूझ-बूझ में कमी।

(ख) विकिरण उपकरण क्रय समिति का असंतुलित गठन।

(ग) सुरक्षा कार्यान्वयन परिषदों का विकेन्द्रित न होना।

(घ) विकिरण कर्मियों की तुष्टीकरण की कार्य शैली एवं दोहरा व्यक्तित्व।

(ड) अर्द्ध-प्रशिक्षित व्यक्तियों की विकिरण कार्य हेतु नियुक्ति।

सुझाव

अन्ततः,विकिरण सुरक्षा नियमों के सुनिश्चित अनुपालन हेतु कुछ आवश्यक सुझाव प्रस्तुत हैं।

(क) विकिरण कर्मियों की न्यूनतम योग्यता एवं अनुभव का निर्धारण कर इसे नियुक्ति के समय व्यायावहारिक रूप से कार्यान्वित किया जाये।

(ख) विकिरण सुरक्षा सम्बन्धी नियमों का उल्लंघन करने वाले व्यक्ति या नियोजकों के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जाये तथा परमाणु ऊर्जा अधिनियम के अन्तर्गत दण्डित किया जाये।

(ग) प्रशासनिक प्रक्रियाओं का सरलीकरण किया जाये ताकि विकिरण सुरक्षा सम्बन्धी नियमों को कार्यान्वित करने में अनावाश्यक विलम्ब न हो।

(घ) वि.सु.अ. की सेवाशर्तों में प्रावधान किया जाये कि वह प्रांतीय सेवा में स्थानीय नियमों के अन्तर्गत कार्यरत होते हुए भी विकिरण सुरक्षा नियमों के अनुपालन हेतु स्थानीय प्रशासन के लिए उत्तरदायी न हो।

(ड) वि.सु.अ. के लिए जारी दिशा निर्देशिकाओं में कर्तव्यों के साथ उसकी शक्ति एवं अधिकारों का भी उल्लेख किया जाये।

(च) विकिरण सुरक्षा कार्यक्रम को राष्ट्रीय कार्यक्रम के रूप में प्रांतीय सरकारों के माध्यम से अथवा परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद के तत्वाधान में प्रत्येक राज्य में मंडल/जिला स्तर पर विकिरण संरक्षण इकाई की स्थापना करके कार्यान्वित किया जाये।

(छ) विकिरण सुरक्षा के प्रति जन जागृति पैदा करने हेतु सरकारी प्रचार/संचार माध्यमों, वैज्ञानिक संगोष्ठियों तथा कार्यशालाओं का भी सतत् आयोजन किया जाना चाहिए।

(ज) विकिरण संरक्षण कार्यान्वित करने वाली परिषदों का विकेन्द्रीकरण कर दिया जाना चाहिए, ताकि सुरक्षा सम्बधी मार्गदर्शन एवं सहायता स्थानीय स्तर पर सुगमतापूर्वक उपलब्ध करायी जा सके ।

यद्यपि सुझाये गये उपाय बहुचर्चित हैं तथा अनेक वैज्ञानिक संगोष्ठियों में वाद - विवाद के विषय रहे हैं,फिर भी इनका मूर्त रूप में कार्यान्वयन नहीं हो पाया है । हमें इस कटुसत्य को एक चुनौती के रूप में स्वीकार कर ,इसे प्रभावी रुप से कार्यान्वित कराने में तन - मन और धन से योगदान करना चाहिए ताकि इस मानव कल्याणकारी कार्यक्रम को सफल बनाया जा सके ।

• • •

नाभिकीय अपशिष्ट प्रबंधन

नरेन्द्र कुमार जैन
अपशिष्ट प्रबंधन प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, ट्राम्बे, बम्बई - 400085

पर्यावरण प्रदूषण के प्रति आम जनता की जागरूकता आज विश्वव्यापी है एवं इस संदर्भ में रेडियो - सक्रिय अपशिष्ट का सही एवं सुरक्षित प्रबंधन बहुत ही महत्वपूर्ण है । हमारे देश में नाभिकीय ऊर्जा को प्रारंभ से ही बहुत महत्व दिया गया है तथा यह कार्यक्रम अब काफी विकसित अवस्था में पहुँच चुका है । इस शताब्दी के अंत तक परमाणु ऊर्जा से दस हजार मेगावाट विद्युत उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित किया गया है । इस बात को ध्यान में रखते हुए परमाणु ऊर्जा विभाग ने रेडियो - सक्रिय अपशिष्ट के प्रबंधन को भी उपयुक्त प्राथमिकता दी है, तथा पर्यावरण की सुरक्षा के हर सम्भव उपाय किये हैं । सम्बन्धित तकनीक का प्रयोग एवं विकास, नाभिकीय कार्यक्रम की प्रगति के साथ - साथ बराबर किया जा रहा है, जिसके फल स्वरूप हम आज अपशिष्ट प्रबंधन की एक प्रभावशाली योजना बनाने में सफल हुए हैं । इस योजना के अन्तर्गत यह ध्यान रखा गया है कि जो भी तकनीक हम अपनायें, वह सुरक्षित, सरल एवं स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल हो ।

अपशिष्ट के स्रोत एवं प्रकार

नाभिकीय अपशिष्ट मुख्यतः निम्नांकित स्रोतों से उत्पन्न होता है : 1) यूरेनियम की खानें, 2) नाभिकीय ईंधन केन्द्र , 3) परमाणु भट्टियाँ ,4) ईंधन पुनर्संशोधन केन्द्र, 5) चिकित्सा एवं औद्योगिक केन्द्र ।

नाभिकीय ईंधन चक्र का प्रथम चरण यूरेनियम की खानों से प्रारम्भ होता है । खानों से निकले अयस्क से यूरेनियम को शुद्ध एवं साँद्रित कर, छड़ों के रूप में नाभिकीय ईंधन बनाया जाता है, जिसका उपयोग परमाणु भट्टियों में किया जाता है । भट्टियों में दहन के उपरान्त , इन छड़ों से पुनर्संशोधन - संयंत्र में रासायनिक क्रिया द्वारा प्लूटोनियम पृथक किया जाता है तथा शेष द्रव को उच्चस्तरीय अपशिष्ट के रूप में सुरक्षित रखा जाता है। इस प्रकार, यूरेनियम के उत्पादन से लेकर ईंधन पुनर्संशोधन केन्द्र तक की समस्त प्रक्रिया को नाभिकीय ईंधन चक्र कहते हैं । इस चक्र के प्रत्येक चरण में रेडियो - सक्रिय पदार्थ ठोस, द्रव एवं गैस अपशिष्ट के रूप में उत्पन्न होते हैं । इनमें से कुछ की सक्रियता कम, कुछ की मध्यम एवं कुछ की बहुत - ही अधिक होती है । प्रबंधन के दृष्टिकोण से भी इन अपशिष्टों को रेडियो-सक्रियता के आधार पर तीन मुख्य वर्गों में विभाजित किया गया है, निम्न , मध्यम एवं उच्चस्तरीय वर्ग अपशिष्ट ।

अपशिष्ट प्रबंधन के तरीके

रेडियो -सक्रिय अपशिष्ट के प्रबंधन के मूलतः तीन सिद्धान्त हैं : 1. विलम्ब एवं क्षय, 2. तनुकरण एवं विसर्जन, 3. साँद्रीकरण एवं सुरक्षित रखाव ।

कुछ निम्न स्तर के तरल अपशिष्टों को निश्चित समय तक बड़ी-बड़ी भँडार टँकियों में सुरक्षित रखने के पश्चात, वातावरण में छोड़ा जा सकता है क्योंकि इस विलम्ब से उनकी रेडियो-सक्रियता स्वतः ही कम हो जाती है । इस तरह की विधि ज्यादातर परमाणु-भट्टियों में उत्पन्न हुए निम्न वर्ग के द्रव अपशिष्टों को निपटाने के लिए उपयोग की जाती है । रेडियो-रासायनिक-संयंत्रों एवं परमाणु-भटियों में उत्पन्न होने वाले गैसीय अपशिष्टों को पहले रसायन क्रियाओं द्वारा धुलाई करके, बाद में सूक्ष्म-फिल्टरों द्वारा साफ किया जाता है । तत्पश्चात इन गैसों को बहुत ऊँची (100 मीटर और अधिक) चिमनियों द्वारा वायुमण्डल में विर्सजित कर दिया जाता है । निम्न-स्तरीय द्रव अपशिष्ट के उपचार एवं निपटान की कई अन्य विधियाँ भी विकसित की गयी हैं, जिनमें मुख्यतः दो विधियों का प्रयोग हम करते हैं, रासायनिक उपचार, एवं आयन विनिमय । रासायनिक विधि के अन्तर्गत रेडियो-सक्रिय प्रदूषक को विशेष अवक्षेप के रूप में साँद्रित कर द्रव से पृथक कर लिया जाता है । आयन-विनियम विधि द्वारा भी कुछ विशेष रेडियो-सक्रिय नाभिकों को तरल-अपशिष्ट से पृथक कर, प्राकृतिक या कृत्रिम रेजिन में बाँध लिया जाता है । इस तरह से प्राप्त साँद्रित अपशिष्ट को सीमेंन्ट या पोलिस्टर - रेजिन आदि पदार्थों के साथ मिश्रित करके ठोस रूप में परिवर्तित कर, पक्के सीमेन्ट के गड्ढों में रखा जाता है ।

मध्यम स्तर के अपशिष्टों को मुख्यतः वाष्पीकरण प्रक्रिया द्वारा साँद्रित कर, ठोस पदार्थ में बदल लिया जाता है। "बिटुमिनाइजेशन" प्रक्रिया में अपशिष्ट को कोलतार के साथ एक विशेष प्रकार के वाष्पीकरण-यन्त्र में गर्म किया जाता है, जिसके फलस्वरूप अपशिष्ट साँन्द्रित होकर कोलतार के साथ एक-सा मिल जाता है। इस मिश्रण को लोहे के ड्रमों में भर कर, भूमिगत पक्के गड्ढों में गाड़ दिया जाता है।

उच्चस्तरीय अपशिष्टों का भँडारण, उपचार एवं निपटान एक जटिल समस्या है। इनकी रेडियो-सक्रियता का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि संपूर्ण ईंधन-चक्र में पायी जाने वाली रेडियो-सक्रियता का 99% भाग इनमें विद्यमान होता है तथा इससे निकलने वाले विकिरण से पैदा हुई ऊष्मा से इस अपशिष्ट का तापमान सामान्य से ऊपर ही रहता है। अतः, इनका भँडारण एवं रखरखाव करते समय इनको ठँडा रखने की विशेष व्यवस्था की जाती है। इसके अतिरिक्त, उपचार क्रियाएं तथा रखरखाव भी सुदूर रूप से नियंत्रित किये जाते है, ताकि इन संयंत्रों में कार्यरत व्यक्तियों पर विकिरण का हानिकारक प्रभाव न पड़े। इस तरह की कठिन एवं जटिल समस्या का भी हल हमारे वैज्ञानिकों ने विकसित कर लिया है। इन उच्चस्तरीय द्रव अपशिष्टों को सामान्यतः पुनर्संशोधन-संयंत्रों के पास ही भूमिगत स्टेनलेसस्टील की बड़ी-बड़ी टँकियों में रखा जाता है, परन्तु आज विश्वव्यापी सर्वमान्य धारणा यह है कि इन खतरनाक अम्लीय द्रव पदार्थों को लम्बे समय तक रखने के बजाय ठोस अवस्था में परिवर्तन कर, भँडारण करना ज्यादा उचित एवं सुरक्षित होगा। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए इन अपशिष्टों के ठोसीकरण की विधि भी हमारे देश में विकसित कर ली गयी है तथा इससे सम्बन्धित संयंत्र भी स्थापित कर लिये गये हैं। इस विषय में अगर देखा जाय, तो भारत का स्थान विकसित देशों से पीछे नहीं है।

इस विधि में सर्वप्रथम अपशिष्ट को वाष्पीकरण द्वारा साँद्रित करके काँच बनाने वाले रासायनिक अवयवों के साथ मिलाकर एक विशेष विद्युत भट्ठी में करीब 1100 ^{0}से.तक गर्म किया जाता है, जिसके फलस्वरूप सारा मिश्रण पिघलकर काँचीकृत हो जाता है। इस पिघले हुए काँच का स्टेनलेस - स्टील के ड्रमों में बन्द करके, सुरक्षित तथा नियन्त्रित भँडार-कक्ष में स्थानान्तरण कर दिया जाता है। इस भँडार-कक्ष में, इन काँचीकृत अपशिष्टों से भरे ड्रमों को लगातार ठंडा करने की विशेष व्यवस्था होती है, ताकि विकिरण द्वारा पैदा हुई ऊष्मा का लगातार विसर्जन होता रहे। चूंकि, यह उच्चस्तरीय अपशिष्ट बहुत ही सक्रिय एवं हानिकारक होता है, उपरोक्त सारी विधियों का संचालन सीमेंन्ट-कन्क्रीट के बने उपचार-कक्षों के बाहर से सुदूर-प्रचालन के उपकरणों द्वारा ही नियन्त्रित किया जाता है।

लगभग 20 वर्ष के सुरक्षित भँडारण के पश्चात, इन ड्रमों को धरती के अन्दर गहराई में स्थित चट्टानों में खदान बनाकर निपटान करने की योजना है। इस सम्बन्ध में शोध कार्य लगातार जारी है।

निम्न तथा मध्यम स्तर के ठोस अपशिष्टों का आयतन, दबाव की विधि से तथा भस्मीकरण द्वारा कम किया जाता है। तत्पश्चात इन्हें भूमिगत कन्क्रीट के गड्ढों में सुरक्षित गाड़ दिया जाता है।

उपसंहार

उपरोक्त अपशिष्ट निपटारण विधियों का प्रयोग एवं विकास पिछले तीन दशकों से भी ज्यादा समय से हमारे देश में किया जा रहा है। हमारा आज तक का अनुभव इस सम्बन्ध में बहुत अच्छा एवं सफल रहा है। अभी तक किसी भी भँडारण एवं निपटान सुविधा से सक्रिय अपशिष्ट का निकास बाहर के वातावरण में नहीं हुआ है। सारी उपचार विधियों एवं भँडारण तथा निपटारण सुविधाओं का विकास हमारे ही देश में वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों ने किया है। यह देखते हुए हम विश्वास के साथ कह सकते है कि भविष्य में भी रेडियो-सक्रिय अपशिष्ट द्वारा प्रदूषण की कोई संभावना नहीं है। फिर भी, हम चौकन्ने रहते हुए शोधकार्य में लगातार जुटे हुए हैं, ताकि और भी अधिक प्रभावशाली तकनीकों का विकास करके मानवजाति एवं पर्यावरण को नाभिकीय अपशिष्ट से होनेवाले हानिकारक प्रभावों से पूर्ण रूप से सुरक्षित रखा जा सके।

• • •

विकिरण संरक्षण में जन शिक्षा का महत्व

जी. वी. नाडकर्णी
निदेशक, (इ. एवं पी. ए.)
न्यूक्लियर पावर कार्पोरेशन, बंबई - 400 094

आज के वैज्ञानिक युग में आम आदमी औद्योगिक प्रगति के साथ-साथ होने वाले कुप्रभावों के बारे में भी काफी जागरूक हो रहा है, अतः वह नहीं चाहता है कि सुरक्षा के पहलुओं को नजर अंदाज किया जाय।

अब सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इस तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या और तेजी से बढ़ते हुए उद्योगों के बावजूद जनहित का पूरा ध्यान कैसे रखा जा सके। दूसरा प्रश्न यह है कि सरकार, नियामक अधिकारी और औद्योगिक प्रतिष्ठानों तथा उनके जनहित कार्यक्रम और सुरक्षा प्रयासों के बारे में लोगों को कैसे समझाया जाए।

आम आदमी को इस बात की जानकारी देना बहुत जरूरी है कि औद्योगिक प्रगति और पर्यावरण की सुरक्षा के कार्य, दोनों साथ चल सकते हैं। जन साधारण की जरूरतों को पूरा करने के लिए उत्पादित किये जाने वाले हर व्यापारिक उत्पादों से हमेशा पर्यावरण का नुकसान हो, ऐसा जरूरी नहीं है। राज्य स्तर और केंद्रीय पर्यावरण मंत्रालय, प्रदूषण नियंत्रण मंडल, परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद (ए. ई. आर. बी.) और विभिन्न संवैधानिक प्रावधान और उनका पालन इस बात का संकेत देते हैं कि पर्यावरण और जनसामान्य पर किसी प्रकार का कुप्रभाव न पड़े। इसके लिए सजग प्रयास किये गये हैं और चल रहे हैं।

जहां तक नाभिकीय उद्योग का प्रश्न है, जन शिक्षा के माध्यम से यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि नाभिकीय कार्यक्रम में सुरक्षा के पहलुओं पर विचार किसी भी परमाणु बिजलीघर की परिकल्पना के समय से आरम्भ हो जाता है। यह इसलिए किया जाता है कि परमाणु अभिक्रियाएं अन्य भौतिक घटनाओं के मुकाबले अत्यन्त तीव्र गति से होती हैं तथा इस दौरान उत्सर्जित अदृश्य विकिरणों के प्रभाव वंशानुगत होते हैं, अतः हर चरण पर सावधानी रखना इस उद्योग की एक संस्कृति बन गयी है। साथ ही, सुरक्षा के पहलुओं पर नजर रखने के लिए कई राष्ट्रीय और विश्व स्तर की संस्थाएं काम कर रही हैं, जैसे कि अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा संगठन (आई. ए. इ. ए) इंटरनेशनल कमिशन आन रेडियालॉजिकल प्रोटेक्शन (आई. सी. आर. पी.), यूनाईटेड नेशन्स साइन्टिफिक कमेटी ऑन इफेक्ट्स ऑफ एटामिक रेडिएशन (अनस्कीयर) इत्यादि।

जन शिक्षा में सर्वप्रथम नाभिकीय उद्योग में प्रचलित सिद्धांतों की जानकारी देना जरूरी है। जब तक यह पूर्णरूप से सुनिश्चित नहीं हो जाता कि अमुक प्रक्रिया से लाभ होगा, किसी प्रकार के विकिरण से किसी को भी उद्भासित नहीं किया जा सकता है। विकिरण उद्भासन जितना कम से कम हो सके, उसका प्रयास किया जाता है। विकिरण की अधिकतम मात्रा के लिए राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मापदण्डों का बड़ी सख्ती से पालन किया जाता है।

जन शिक्षा की एक अच्छी शुरुआत स्कूलों में पुस्तकों द्वारा, प्रदर्शनियों, क्विज़ कार्यक्रम, फिल्मों और पुस्तकालयों से हो सकती है। समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, रेडियो और टेलिविजन के माध्यम से इसका व्यापक प्रचार हो सकता है। इसके अलावा, संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, डाक्टरों और विधायकों की सहायता से गांव-पंचायतों में इस का प्रचार किया जा सकता है।

विकिरण संरक्षण के विभिन्न पहलुओं को ठीक उसी प्रकार समझाना चाहिए, जिस प्रकार बिजली, खाना पकाने वाली गैस, बस, ट्रक, रेल या कार के सुरक्षित प्रयोग की जानकारी आम आदमी को सरल रूप में दी जाती है। जनशिक्षा में इस बात को भी समझाना चाहिए कि विकिरण प्रकृति में हर जगह मौजूद है। प्राकृतिक विकिरण की तुलना में कितनी ज्यादा मात्रा के द्वारा उद्भासित होने पर, उसके दुष्प्रभाव होते हैं, इसकी जानकारी देना भी अत्यन्त आवश्यक है। तभी यह बात भी उभर कर आएगी कि विकिरण के द्वारा होने वाले कैंसर व वंशानुगत दुष्प्रभाव दूसरे प्राकृतिक कारणों की तुलना में बहुत ही कम हैं।

(शेष पृष्ठ 63 पर)

विकिरण संरक्षण एवं मरम्मत में थायोल यौगिकों का योगदान

मनोहर लाल
रसायनिकी प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,
ट्राम्बे, मुंबई - 400 085.

यह सर्व विदित है कि पानी को गामा से किरणित करने पर निम्नलिखित अभिक्रिया होती है :

$H_2O \rightarrow \dot{H}, \dot{O}H, e^-_{aq}, H_2O_2, H_2$ (1)
$G = 0.55, 2.75, 2.75, 0.7, 0.45$

पानी में घुले किसी पदार्थ को 100 इलेक्ट्रोन वोल्ट (eV) ऊर्जा देने पर उस पदार्थ की जितनी मात्रा की क्षति या उससे कोई दूसरा पदार्थ बनता है या जितनी संख्या में मूलक बनते हैं, उसे G-मात्रा कहते हैं। चूंकि जीवों में लगभग 80% पानी होता है, इस कारण शरीर को किरणित करने पर अभिक्रिया होना स्वाभाविक है और शरीर में $\dot{H}$, e^-_{aq} एवं $\dot{O}H$ मूलकों का बनना, और शरीर को क्षति पहुंचना भी स्वाभाविक है। $\dot{H}$ एवं e^-_{aq} तो ज्यादा क्षति नहीं पहुंचाते, लेकिन OH मूलक मुख्य क्षतिकारक माना जाता है।

कोशिकाओं एवं दूसरे जीवों में डी आक्सी न्यूक्लिक एसिड (DNA) एक बहुत महत्वपूर्ण एवं संकटकालीन लक्ष्य (critical target) समझा जाता है। डी एन ए की एक या दोनों लड़ियों का टूटना एक बहुत महत्वपूर्ण क्षतिकारक घटना है। दोनों लड़ियों के टूटने से पूरी कोशिका का निष्क्रिय एवं मृत होना सम्भव है।

इन्ही कारणों से ऐसे उन सब पदार्थों की जिनसे जीवों, मनुष्यों, कोशिकाओं एवं डी एन ए का विकिरण संरक्षण एवं प्रतिसंस्कार हो, 35 वर्ष पहले खोज शुरू हो गयी थी। हम उनमें से केवल थायोल यौगिकों के योगदान के बारे में संक्षेप में कुछ कहेंगे।

छोटे अणुभार वाले थायोल यौगिक जाने माने विकिरण संरक्षक एवं मरम्मत करने वाले समझे जाते हैं। काफी पहले ही यौगिकों की क्षमता परखने के लिए बहुत सारे थायोल यौगिकों की थोड़ी-थोड़ी मात्रा चूहों एवं स्तनधारी जीवों में प्रवेश करा कर उन्हें किरणित किया गया। इसी प्रकार, जीवाणुओं एवं स्तनधारी जीवों की कोशिकाओं में थोड़ा थायोल यौगिक डाल कर उन्हें किरणित किया गया, और पाया गया कि लगभग सभी थायोल यौगिक अति उत्तम विकिरण संरक्षक एवं सुधारक हैं।

थायोल यौगिकों से स्तनधारी जीवों में विकिरण संरक्षण एवं मरम्मत निम्नलिखित अभिक्रियाओं द्वारा समझायी गयी है:

1) प्राथमिक प्रजातियों की थायोल यौगिकों एवं जैविक लक्ष्य के बीच प्रतिस्पर्धा, क्योंकि प्राथमिक प्रजातियों का

$BH + \dot{O}H, \dot{H} \rightarrow \dot{B} + H_2O, H_2$ (2)
$RSH + \dot{O}H, \dot{H} \rightarrow R\dot{S} + H_2O, H_2$ (3)

सभी थायोल यौगिकों के साथ गति स्थिरांक (रेट कान्स्टेन्ट) काफी ज्यादा होता है (लगभग $5 \times 10^9 - 2 \times 10^{10}$, $M^{-1}S^{-1}$), इस कारण प्राथमिक प्रजातियां जैविक लक्ष्य के बजाय थायोल यौगिकों के साथ अभिक्रिया करती हैं।

2) क्षतिग्रस्त अणुओं का अस्थिर (labile) हाईड्रोजन परमाणुओं के स्थानान्तरण द्वारा मरम्मत हो जाना, जैसे

$BH + \dot{O}H, \dot{H} \rightarrow \dot{B} + H_2O, H_2$ (2)
$\dot{B} + RSH \rightarrow BH + R\dot{S}$ (4)

3) मिश्रित डाईसलफाईड बनना या बनाना, विकिरण संरक्षण का एक और तरीका है। यदि जैविक लक्ष्य कोई थायो ग्रुप वाली एनजाईम हो, तो उसका मिश्रित डाईसलफाईड बना कर संरक्षण किया जा सकता है। यह मिश्रित डाईसलफाईड काफी मजबूत होता है। जरूरत पड़ने पर मिश्रित डाईसलाफईड को किसी भी थायोल यौगिक के साथ क्रिया कर के थायोल ग्रुप वाली एनजाईम में बदला जा सकता है।

$EnzSSR + RSH \rightarrow EnzSH + RSSR$ (5)

हमारी प्रयोगशाला में सिस्टीन, ग्लूटाथायोन, मरकेप्टोइथानोल एवं डाईथायोथ्रीटोल यौगिकों की विकिरण

रसायनिकी एवं विकिरण अभिक्रियाओं का पूर्ण रूप से अध्ययन किया जा चुका है। हमारे द्वारा सुझायी गयी विकिरण अभिक्रियाएं एवं परिणाम पाठ्य पुस्तकों का हिस्सा बन चुके हैं।

हमने थायोल यौगिकों द्वारा टरशरी ब्यूटेनोल मूलक की मरम्मत का स्पंद रेडियोलीसिस तकनीक से अध्ययन किया है जिसका विवरण हम इस लेख में दे रहे हैं। एडम व उसके साथियों ने काफी पहले ही इथेनोल, मीथेनोल, टी-ब्यूटेनोल, ग्लूकोस एवं शक्कर इत्यादि मूलकों की सिस्टीअमीन द्वारा मरम्मत हो जाने की जानकारी प्राप्त की थी। इसी प्रकार, क्विन्तिलयानी व उसके साथियों ने ग्लूटाथायोन द्वारा ऐसे ही कुछ मूलकों की मरम्मत होने की जानकारी प्राप्त की थी। हमारे इस लेख में हमने बहुत सारे थायोल यौगिकों द्वारा टी-ब्यूटेनोल मूलक की मरम्मत की है एवं इसके गति स्थिरांक निकाले है।

स्पंद रेडियोलीसिस तकनीक का सिद्धान्त

जब किसी न्यादर्श (सैम्पल) को बहुत थोड़े समय में ऊंची ऊर्जा वाली इलेक्ट्रोन स्पंद से प्रदीप्त किया जाता है तो एक या दो प्रजातियां बनती हैं। इन प्रजातियों के किसी एक गुण, जैसे प्रकाशीय अवशोषण या विशिष्ट संवाहिता द्वारा इनकी सांद्रता ज्ञात की जा सकती है। साथ ही, काफी अधिक विभेदन काल भी आवश्यक है जिस से ऊपर दिये गये गुण को आरेखित (record) किया जा सकता है।

शुद्ध पानी में pH 6.5 - 9 का फास्फेट बफर बनाया जाता है। इस बफर में टरशरी ब्यूटिनोल की 1- 2 M सांद्रता एवं थायोल यौगिकों की 1-10 मिलीमोल सांद्रता वाले घोल को एक क्वार्ट्ज सैल में लेकर नाईट्रस आक्साईड गैस द्वारा संतृप्त किया जाता है। क्वार्ट्ज सैल को डाट लगा कर बंद करके इस मिश्रण को 25 नैनो सेकेन्ड की इलेक्ट्रोन स्पंद द्वारा किरणित किया जाता है। पी एच ~ 8.5 के बफर में घोले गये थायोल यौगिकों का साम्य इस प्रकार होता है :

$$RSH \Longleftrightarrow RS^- + H^+ \qquad (6)$$

नाइट्रस आक्साईड गैस से संतृप्त घोल के किरणित होने पर सारे e^-_{aq}, $\dot{O}H$ मूलकों में बदल जाते हैं और सारे $\dot{O}H$ मूलक टी-ब्यूटेनोल से

$$N_2O + e^-_{aq} \rightarrow N_2 + OH^- + \dot{O}H \qquad (7)$$

अभिक्रिया करते हैं। इसके बाद टी-ब्यूटेनोल मूलक थायोल यौगिक

$$(CH_3)_3\,COH + \dot{O}H \rightarrow \dot{C}H_2(CH_3)_2COH + H_2O \qquad (8)$$

से अभिक्रिया करके सुधर जाता है। थायोल मूलक

$$\dot{C}H_2(CH_3)_2COH + RSH \rightarrow (CH_3)_3COH + R\dot{S} \qquad (9)$$

$$R\dot{S} + RS^- \Longleftrightarrow \dot{R}SSR^- \qquad (10)$$

अब घोल में बचे थायोल एनायन RS^- से अभिक्रिया करते हैं। अभिक्रिया (10) में जो अस्थाई एनायन बनता है वह 410 नैनोमीटर तरंगदैर्घ्य प्रकाश को अवशोषित कर लेता है, जिससे आसिलोस्कोप पर एक निर्मित चिन्ह बनता है। यह निर्मित चिन्ह $RSSR^-$ (सिस्टीन, सिस्टीअमीन, ग्लूटाथायोन इत्यादि) या डाईथायोथ्रीटोल के क्रमशः 410 या 390 नै.मी. प्रकाश के अवशोषण के कारण होता है। हमने टी-ब्यूटेनोल मूलक को सिस्टीन, सिस्टीअमीन, ग्लूटाथायोन, मरकेप्टोइथानोल, डाईथायोथ्रीटोल, पेनसिलअमीन मरकेप्टोप्रोपिओनिक एसिड इत्यादि यौगिकों से हाईड्रोजन

तालिका - 1

क्र.	थायोल यौगिक	पी एच	गति स्थिरांक $\times 10^{-7}$/MS
1.	सिसटीन	8.9	3.5
2.	ग्लूटाथायोन	7.5	2.9
3.	सिस्टीअमीन	8.0	0.7
4.	पैनिसिलअमीन	8.0	1.5
5.	डाईथायोथ्रीटोल	6.5	2.0
6.	डाईथायोइराईथ्रीटोल	6.5	2.1
7.	मरकेप्टोइथानोल	7.5	0.15
8.	मरकेप्टोप्रोपिओनिक एसिड	7.5	0.08

(शेष पृष्ठ 43 पर)

सूक्ष्म तरंग विकिरण मापन एवं संरक्षण मापदंड निर्धारण

जितेन्द्र गुप्त एवं के. एस. वी. नम्बी
पर्यावरण मूल्यांकन प्रभाग, भा.प्र.अ. केन्द्र, बम्बई 400 085

सूक्ष्म तरंगें (माइक्रोवेव) विद्युत चुम्बकीय वर्णपट का एक भाग हैं। इन तरंगों की आवृत्ति 30 करोड़ से लेकर 300 अरब आवर्तन प्रति सेकंड (0.3-300 गीगा हर्ट्ज) आंकी गयी है। इन तरंगों में व्याप्त ऊर्जा इतनी कम होती है कि ये किसी भी अणु अथवा परमाणु को आयनित नहीं कर पातीं, परंतु प्रकीर्णन सम्बन्धी कुछ विशेष गुणों के कारण इन तरंगों का सबसे अधिक उपयोग राडार तथा प्रसारण में किया जाता है। आजकल भोजन को पकाने तथा उसे गर्म करने के लिए घरों में "माइक्रोवेव ओवन" का उपयोग होने लगा है।

जीवों पर प्रभाव

वैसे तो सूक्ष्म तरंगों के प्रभाव का जीवों पर अध्ययन 1926 से होने लगा था, लेकिन वैज्ञानिकों को सूक्ष्म तरंग क्षेत्र में कार्यरत परिचालकों के अक्सर सिरदर्द, चक्कर आना, उल्टी आना, जल्दी थक जाना, कार्य क्षमता का अभाव तथा निगाह की कमजोरी का पता चलने पर अधिक जिज्ञासा जागृत हुई। इन तरंगों के प्रभाव को जानने के लिए वैज्ञानिकों ने जानवरों तथा मानव शरीर में विद्यमान रसायनों पर विभिन्न दैर्घ्य की तरंगों के प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि जल तथा प्रोटीन, दोनों ही इन को अवशोषित कर लेते हैं। अवशोषण की यह क्षमता तरंगों की आवृत्ति पर निर्भर करती है। अध्ययनों से पता चला है कि 2.45 गीगा हर्ट्ज आवृत्ति की तरंगों को जल तथा प्रोटीन सबसे अधिक अवशोषित करते हैं। हमारे शरीर में जल की मात्रा लगभग 70% है। सूक्ष्म तरंगें जब शरीर में प्रवेश करती हैं, तो जल तथा प्रोटीन के अणु इन्हें अवशोषित करके शरीर का तापमान बढ़ा देते हैं। तापमान के बढ़ जाने के कारण ही मानव शरीर में सारे उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं। शरीर के विभिन्न भागों में जल की मात्रा विभिन्न होती है, अतः तापमान भी विभिन्न भागों में अलग- अलग बढ़ता है। सूक्ष्म तरंगों की मानव शरीर में प्रवेश करने की क्षमता तथा उनका अवशोषण तरंगों की आवृत्ति के अतिरिक्त शरीर की भौतिक एवं रसायनिक संरचना, उसके विद्युतीय गुणधर्म इत्यादि पर निर्भर करती है।

जानवरों को सूक्ष्म तरंगों से किरणित करने से प्राप्त परिणामों में से कुछ उदाहरणार्थ यहां दिये जा रहे हैं। 2.45 गीगा हर्ट्ज आवृति तथा मध्यम शक्ति की तरंगों में मेढक के दिल की धड़कनें कम हो गयीं जबकि इसी आवृत्ति तथा करीब 80 वाट शक्ति की तरंगों से कुत्ते की जांघों का तापमान 20 मिनट में 1 सें.मी. की गहराई पर 42 - 43 ^{0}से. तथा 5 सें.मी. की गहराई पर 40. ^{0}सें. हो गया। इस दौरान धमनियों में रक्त का प्रवाह भी बढ़ गया। 400 मिली वाट प्रति वर्ग सें.मी. के क्षेत्र में तो बेचारा सूअर 20 मिनिट में ही मर गया। एक अन्य प्रयोग में खरगोश की आंखों को 30 मिली वाट प्रति वर्ग सें.मी. की सूक्ष्म तरंगों से रोजाना एक घन्टा किरणित करने पर कुछ ही दिनों में उनमें जाला पड़ गया।

जानवरों पर किये गये प्रयोगों के परिणामों को मनुष्य पर सीधे लागू नहीं किया जा सकता, लेकिन सूक्ष्म तरंग क्षेत्र में कार्यरत परिचालकों के परीक्षण तथा अनुभव से स्पष्ट हो जाता है कि ये तरंगें हानिकारक प्रभाव डालती हैं। शरीर के जिस भाग में खून का प्रवाह जितना कम होता है, वहाँ पर हानिकारक प्रभाव भी उतना ही अधिक होता है, क्योंकि उस जगह का ताप अन्य जगह पर खून के द्वारा नहीं ले जाया जा सकता। कई परिचालकों की आंखों में जाला पड़ने की शिकायत का पता चला है। कम शक्ति की सूक्ष्म तरंगें अस्थाई बांझपन उत्पन्न करत हैं, जब कि अधिक शक्ति की तरंगों से उद्भासित होने पर स्थाई बांझपन हो जाता है। कुछ वैज्ञानिकों ने आकड़ों के हिसाब से पाया है कि सूक्ष्म तरंग क्षेत्र में काम करने वालों के यहाँ मादा बच्चे अधिक पैदा होते हैं। सोवियत वैज्ञानिकों का मानना है कि बहुत कम शक्ति की सूक्ष्म तरगें बिना तापमान बढ़ाये भी शरीर पर हानिकारक प्रभाव डालती हैं। ये तरंगें मस्तिष्क तंत्र को प्रभावित करके मनुष्य की कार्य प्रणाली में बाधा डालती हैं। इन तरंगों के प्रभाव से हृदय की धड़कन तथा रक्तचाप, दोनों ही कम हो जाते हैं।

अनुज्ञेय स्तर (संरक्षण मापदंड)

अमेरिका के वैज्ञानिक, शिवान एवं ली ने 1956 में सबसे पहले सूक्ष्म तरंगों के हानिकारक प्रभाव को जानने के

बाद संरक्षण मापदण्ड का निर्धारण किया। यह अनुज्ञेय स्तर वहाँ के लोगों के शारीरिक गठन, उनके भोजन स्तर तथा जलवायु को ध्यान में रख कर निम्न प्रकार से किया :

(क) 10 मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी. शक्ति की सूक्ष्म तरंगों में केवल 6 मिनट तक ही काम किया जा सकता है।

(ख) 100 मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी. से अधिक शक्ति की सूक्ष्म तरंगों के क्षेत्र में काम करना खतरनाक है। 10 से 100 मिलीवाट प्रतिवर्ग सें.मी. के सूक्ष्म तरंग क्षेत्र में एक निर्धारित समय तक के लिए काम किया जा सकता है। समय का निर्धारण निम्न सूत्र द्वारा करते हैं :
समय (मिनट) = 6000 / (श)^2

श = सूक्ष्म तरंग शक्ति प्रति इकाई क्षेत्र (मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी.)

चूँकि 2 मिनट से कम समय के किरणन काल को ठीक तरह से नहीं लागू किया जा सकता, इसलिए पश्चिमी देशों के वैज्ञानिकों ने 55 मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी. से अधिक शक्ति क्षेत्र को पूर्ण वर्जित घोषित किया हुआ है।

पूर्वी यूरोप के देशों के वैज्ञानिकों ने अपने यहाँ भिन्न मापदंड को लागू किया हुआ है। उन्होंने सूक्ष्म तरंग विकिरण क्षेत्र को चार भागों में बाँटा है :

(क) **सुरक्षित क्षेत्र** : 0.01 मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी.,

(ख) **मध्यम सुरक्षित क्षेत्र** : 0.01 मिलीवाट से लेकर 0.2 मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी. (इस क्षेत्र में केवल 8 घन्टे तक ही काम करने की आज्ञा है)।

(ग) **हानिकारक क्षेत्र** : 0.2 मिलीवाट से लेकर 10 मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी.। काम करने के लिए
समय मिनट = 53 / (श)^2

(घ) **खतरनाक क्षेत्र** : 10 मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी. से अधिक।

सोवियत रूस के वैज्ञानिकों के अनुसार 100 माईक्रोवाट प्रतिवर्ग सें.मी. के क्षेत्र में केवल 2 घन्टे तथा 1 मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी. क्षेत्र में 15-20 मिनट तक ही काम किया जा सकता है। पूर्व युरोपीय देशों तथा सोवियत रूस के वैज्ञानिकों के तर्क तथा उनके अनुज्ञेय स्तरों को जानने के बाद अमेरिकन नेशनल स्टैन्डर्ड इंस्टीट्यूट ने अब 5 मिलीवाट प्रतिवर्ग सें.मी. के सूक्ष्म तरंग क्षेत्र में अधिकतम 6 मिनट तक काम करने की अनुमति प्रदान की है।

सूक्ष्म तरंगों के मापन हेतु "विशिष्ट अवशोषण अनुपात", यानि वाट प्रति किलोग्राम को मान्यता दी गयी है। वस्तुतः, यह शरीर में अवशोषित सूक्ष्म तरंगों की मात्रा को शरीर के भार के अनुपात में दर्शाती है। वैज्ञानिकों के अनुसार 0.4 वाट प्रति किलोग्राम ही सुरक्षित सीमा मानी जा सकती है।

सूक्ष्म तरंग विकिरण शक्ति मापी यन्त्र

हमने एक सूक्ष्म तरंग विकिरण शक्ति मापन यन्त्र का विकास किया है जो 4 छोटी बैटरियों की सहायता से चलता है। यह 0.4 - 12.4 गीगा हर्ट्ज आवृत्ति की सूक्ष्म तरंगों की शक्ति माप सकता है। इससे शून्य से लेकर २० मिलीवाट प्रतिवर्ग सें.मी. की शक्ति को मापा जा सकता है।

सूक्ष्म तरंग उत्पादक संयंत्रों का सर्वेक्षण

हमने सूक्ष्म तरंग संयंत्रों में विकिरण क्षेत्र तथा विकिरणों की मात्रा का पता लगाने के लिए कुछ विभिन्न प्रकार के राडारों, सूचना एवं समाचार प्रसार के संयंत्रों तथा डायथर्मी उपकरणों का सर्वेक्षण किया। अधिकतर राडार संयंत्रों के अन्दर कहीं भी विकिरण क्षेत्रों का पता नहीं चला। एन्टिना के नज़दीक तथा उसके विकिरण क्षेत्र में आनेवाली जगहों पर 5 से 20 मिलीवाट प्रति वर्ग सें.मी. से भी अधिक शक्ति के विकिरण क्षेत्रों का पता चला जो कि स्वाभाविक भी है। इन विकिरण क्षेत्रों में कोई जाता नहीं है। सूचना प्रसार संयन्त्रों के अन्दर कुछ विकिरण क्षेत्र पाये गये जो युग्मों से रिस कर आ रहे विकिरण के कारण थे। इसी प्रकार, डायथर्मी यन्त्र में भी केबिल तथा एन्टिना के युग्म से बहुत अधिक शक्ति की विकिरणों के रिसने का पता लगाया गया। इन सब यन्त्रों से खराब युग्मों को बदल कर विकिरणों के रिसने को रोका गया।

हमारे देश में सूक्ष्म तरंग संयन्त्रों का जन साधारण के मध्य कोई विशेष उपयोग नहीं हो रहा है। फिर भी, जैसे- जैसे जीवन स्तर बढ़ता जा रहा है तथा देश में लोग पश्चिमी सुख सुविधा की ओर बढ़ रहे हैं, कुछ घरों में सूक्ष्म तरंग ओवन का उपयोग होने लगा है। यह आवश्यक है कि जनसाधारण को इन तरंगों के हानिकारक प्रभावों के प्रति जानकारी होनी चाहिए। हालांकि अभी हम लोग पश्चिमी देशों के ही संरक्षण मापदण्ड का अनुसरण कर रहे हैं, परंतु यहां के लोगों के शारीरिक गठन, भोजन, एवं जलवायु को ध्यान में रखकर अपना एक मापदण्ड निर्धारित करना उचित रहेगा। ● ● ●

स्थापत्य की दृष्टि से सुरक्षित विकिरण-कक्ष

मसूद अहमद
परमाणु ऊर्जा नियामक मंडल
सुधाकर ज. सुपे
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, बंबई - 400 085.

चिकित्सालय में विकिरणोपचार तथा निदान के लिए ऐसे कक्षों का निर्माण करना होता है, जिनमें न केवल विकिरण सुरक्षा का ध्यान रखना होता है, बल्कि वे कार्य किये जाने की दृष्टि से भी उपयुक्त होने चाहिए। साथ ही, आर्थिक पहलू को भी महत्व दिया जाता है। अतः, विकिरण कक्ष का क्षेत्र आवश्यकतानुसार व्यापक होता है, उसका आकार निर्धारित विकिरण-यंत्र की प्रविष्टि, स्थापना एवं सुरक्षित उपयोग के लिए उपयुक्त बनाया जाता है। उसमें विकिरण अवरोधक सामग्री का आवश्यकतानुसार उपयोग किया जाता है जिससे यंत्र चालक तथा अन्य उपस्थित लोग सुरक्षित रह सकें। इस संदर्भ में एक दूर-स्रोत उपचार कोष्ठ (टैली थैरेपी रूम) का प्रचलित अभिकल्प चित्र -1 में दर्शाया गया है। स्थापत्य कला की दृष्टि से, नये आकार -प्रकार के चिकित्सालय के निर्माण में यह वर्गाकार कक्ष बाधक सिद्ध होता है। इस कठिनाई के समाधान की चर्चा इस लेख में की गयी है।

स्थापत्य कला के कुछ मौलिक पहलू

स्थापत्य कला की दृष्टि से किसी भी भवन में नवीन आकारों तथा असामान्य आकृतियों के कक्षों के समावेश से विभिन्नता लायी जा सकती है, अतः वृत्ताकार तथा बहुकोणीय कक्षों के सम्मिलन से एक चिकित्सालय के भवन को नया रूप दिया जा सकता है, परन्तु कार्य करने की सुगमता की दृष्टि से इन कक्षों में कुछ विशेष भीतरी परिवर्तन आवश्यक हो सकते हैं। इस विषय को दूर-स्रोत उपचार कोष्ठ की चर्चा से स्पष्ट किया जा सकता है, क्योंकि इस कोष्ठ के निर्माण में सभी आवश्यक नियोजन तथा सुरक्षा संबंधित मापदंडों का ध्यान रखा गया है। इन मापदंडों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

(1) कक्ष की सभी दीवारों और छत की विकिरण अवरोधकता समुचित होनी चाहिए ताकि कक्ष के बाहर विकिरण मात्रा निर्धारित सीमा के अनुसार रहे।

(2) विकिरण कक्ष में प्रवेश परोक्ष दिशा से हो ताकि प्रवेश द्वार सीधे विकिरण स्रोत के सामने न पड़े। अधिक सुरक्षा की आवश्यकता हो, तो प्रवेश मार्ग और अधिक घुमावदार बनाया जा सकता है, जैसा चित्र -1 में दर्शाया गया है।

(3) यंत्र और दीवारों के बीच पर्याप्त रिक्त स्थान रहे जिससे यंत्र के उपयोग तथा उसकी देख रेख से संबंधित सभी कार्य नियम पूर्वक एवं सुगमता से किये जा सकें, अर्थात (क) चक्र प्रणाली का स्रोत-कोष (सोर्स हाउसिंग) बाधा रहित पूर्णतः परिक्रमा कर सके और दीवारों से अथवा उनके पास रखी किसी स्ट्रैचर से न टकराये, (ख) छत की ऊँचाई पर्याप्त हो ताकि यंत्र का कोई भाग उस से न टकराये, (ग) उपचार-शय्या भी बिना दीवारों से टकराये घरातल पर घुमायी जा सके, (घ) यंत्र के पीछे खड़े होकर यंत्र सम्बंधित सभी कार्य सरलता से करना सम्भव हो, और (त) यंत्र कोष के आगे स्रोत परिवर्तन के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध हो।

(4) विकिरण कक्ष के घुमावदार प्रवेश मार्ग की चौड़ाई एवं उस के सभी मोड़ों तथा द्वारों की चौड़ाई और छत की ऊंचाई पर्याप्त हो ताकि आरम्भ में विकिरण यंत्र को सरलता पूर्वक कक्ष में प्रवेश करा सकें और फिर रोगी शय्या बाधा रहित लायी-लेजायी जा सके।

(5) सभी धरातल सुदृढ़ हों ताकि तलको हानि पहुँचाये बिना भारी यंत्र लाये-लेजाये जा सकें।

(6) सीढ़ियों तथा अन्य तल-परिवर्तन के उन सभी स्थानों पर ढलान-पथ (रैम्प) उपलब्ध किये जायें, जहाँ से भारी यंत्र लेजाने हों।

(7) पर्याप्त पारदर्शिता और क्षीणन के सीसे युक्त कांच उन सभी झरोखों, खिड़कियों आदि में लगाये जायें, जो रोगी पर दृष्टि रखने के लिए बनाये गये हों।

(8) वातानुकूल-यंत्र लगाने के लिए दीवारों में बने झरोखों व रिक्त स्थानों के सामने पर्याप्त अवरोधकता के आवरण उपलब्ध हों।

(9) विद्युतीकरण तथा विकिरण मापन/संसूचन यंत्रों के तारों के लिए नियोजित सभी नलिकाएं विकिरण अवरोधक दीवारों आदि में इस प्रकार तिरछी रखी जायें कि उन के छिद्रों से बाधा रहित विकिरण न जा सकें।

(10) यंत्र कक्ष आवश्यकता से अधिक बड़ा न बनाया जाये ताकि विकिरण अवरोधक सामग्री की बचत हो सके।

(11) यदि दो कक्ष समान यंत्रों के लिए बने हों, तो उन को परस्पर ऐसे जोड़ना लाभदायक है ताकि दोनों के मध्य की दीवार एक प्रमुख विकिरण अवरोधक के रूप में उपस्थित हो।

विभिन्न आकार के कुछ विकिरण कोष्ठ चित्र- 2 से 5 में दर्शाये गये हैं। ये उपरोक्त नियमों की परिपूर्ति करते है। इन में रेखाओं के संकेत से वे सभी स्थान दिखाये गये हैं, जहाँ दीवारों की पारस्परिक दूरी तथा अवरोधक दीवारों की आकृतियाँ महत्वपूर्ण हैं।

इन प्रस्तावित चित्रों में छत आदि के परिच्छेद चित्र में नहीं दर्शाय गये है। चित्र-1 में दिये परिच्छेद चित्रों के आधार पर इनका चित्रण सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

अंत में यह कहा जा सकता है कि इस लेख में प्रस्तावित कक्षाकारों के उपयोग से विकिरण प्रतिष्ठानों की ऐसी स्थापना परियोजनाएं संभव हैं, जो स्थापत्य कला की दृष्टि से विभिन्न होते हुए भी सभी मापदंडों की संतुष्टि करती हैं। इन सुझावों के आधार पर उन सभी परिस्थितियों में परियोजनाएं तैयार की जा सकती हैं, जहाँ भवन निर्माण के लिए क्षेत्र का अभाव नहीं है तथा परिपूर्ण सुरक्षा के लिए अधिक निर्माण सामग्री का उपयोग आर्थिक दृष्टि से अधिक बाधा न बनता हो।

लेखक श्री सुधाकर द्वारकानाथ सोमण, अध्यक्ष, परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद के आभारी हैं जिन्होंने अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिये। डा. उडिपी मध्वनाथ, प्रमागाध्यक्ष, विकिरण संरक्षण प्रभाव, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, ने जो रुचि इस विषय में ली उसके लिए लेखक आभार प्रकट करते हैं।

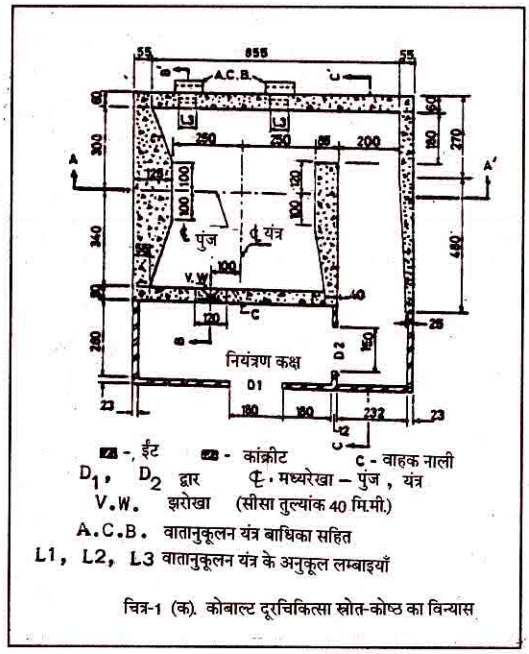

- ईंट - कांक्रीट C - वाहक नाली
D_1, D_2 द्वार ℄ - मध्यरेखा – पुंज, यंत्र
V.W. झरोखा (सीसा तुल्यांक 40 मिमी.)
A.C.B. वातानुकूलन यंत्र बाधिका सहित
L1, L2, L3 वातानुकूलन यंत्र के अनुकूल लम्बाइयाँ

चित्र-1 (क). कोबाल्ट दूरचिकित्सा स्रोत-कोष्ठ का विन्यास

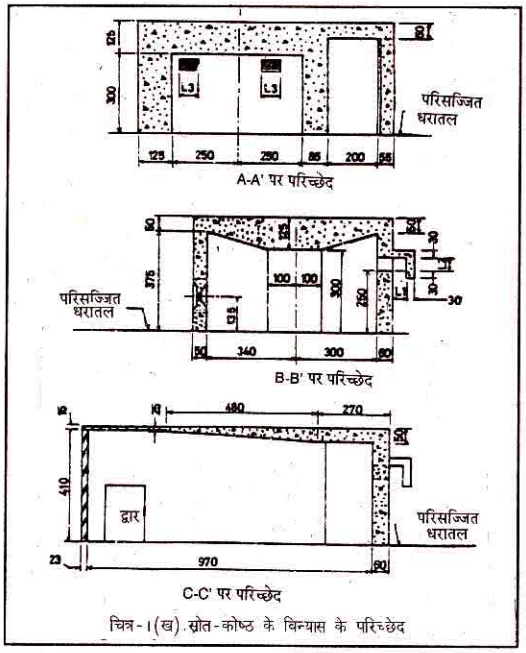

चित्र-1 (ख). स्रोत-कोष्ठ के विन्यास के परिच्छेद

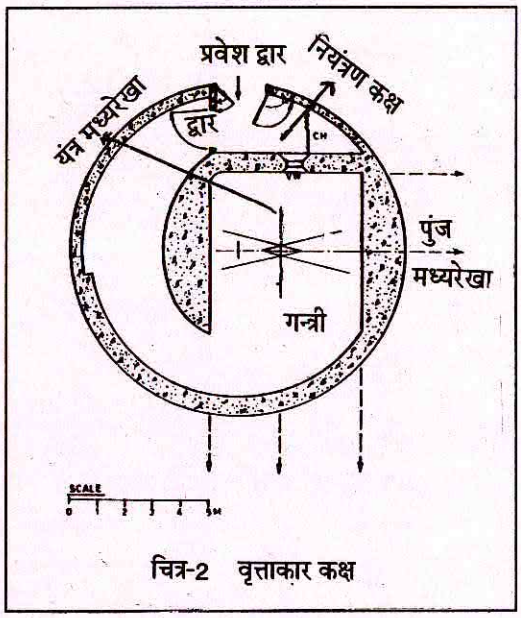

चित्र-2 वृत्ताकार कक्ष

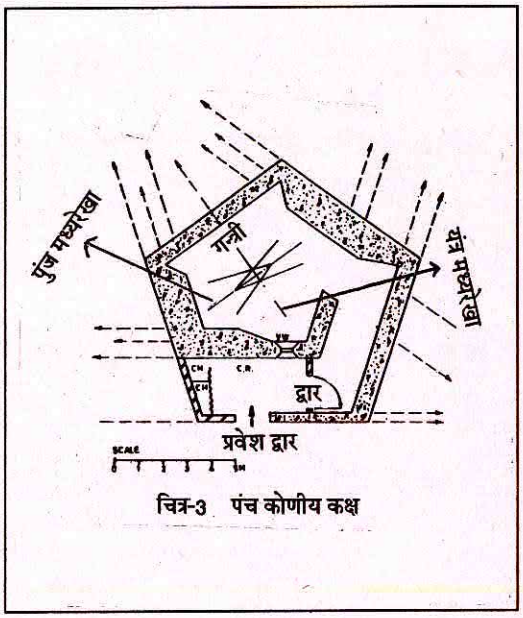

चित्र-3 पंच कोणीय कक्ष

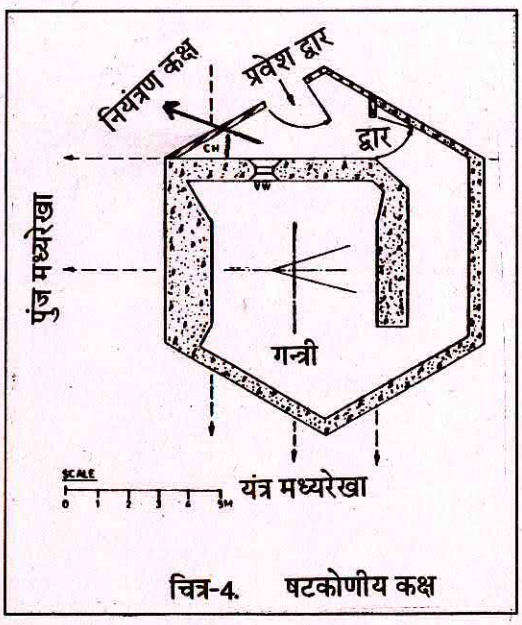

चित्र-4. षटकोणीय कक्ष

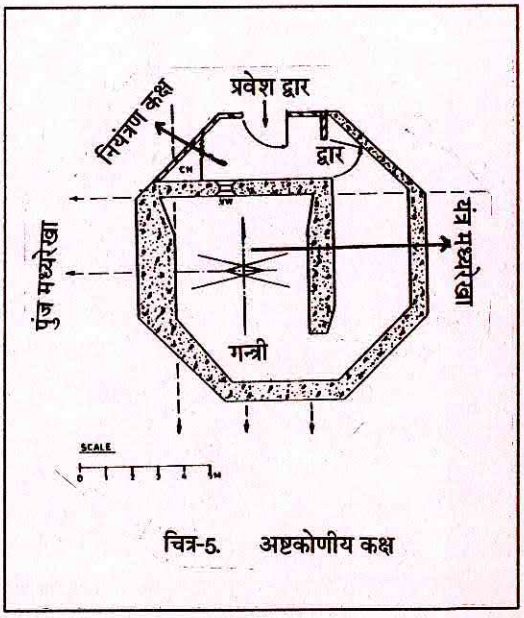

चित्र-5. अष्टकोणीय कक्ष

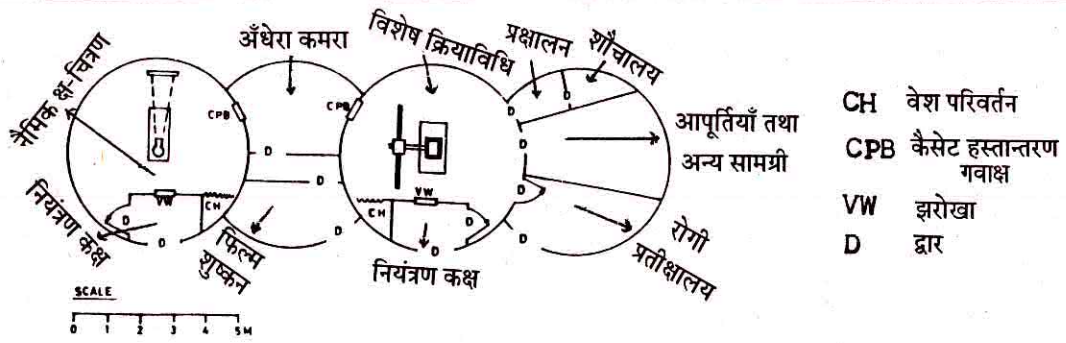

चित्र-6. दो क्ष-किरण यंत्रों के स्थापन हेतु प्रतिच्छेदी वृत्ताकार कक्षों का विन्यास

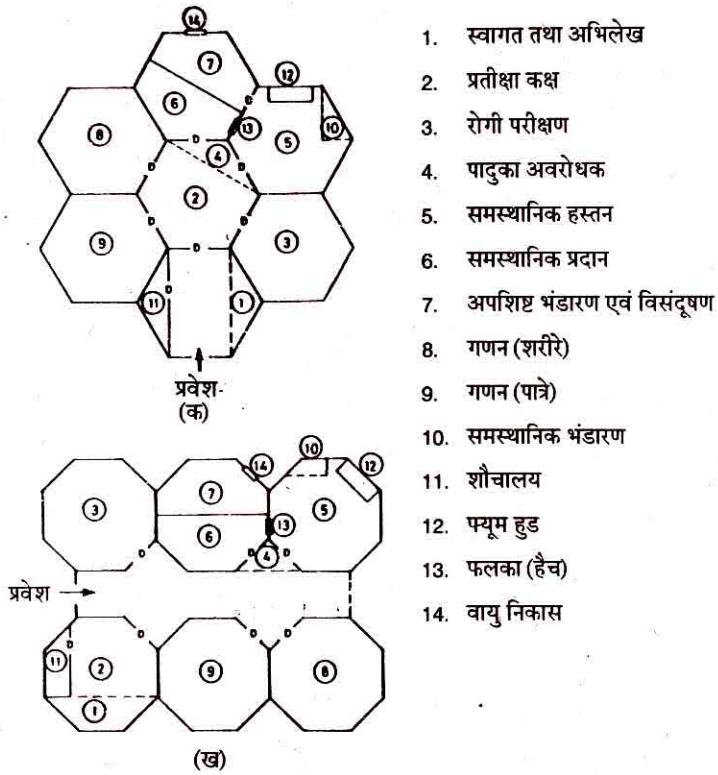

चित्र-7. नाभिकीय औषधि चिकित्सा प्रतिष्ठानों के (क) षटकोणीय, तथा (ख) अष्टकोणीय कक्षों पर आधारित विन्यास

द्रव संदीप्ति द्वारा विकिरण मात्रामिति

आइ. के. उम्मन, एस. सेनगुप्ता, टी. एस. अय्यंगार, एस.के. मेहता
विकिरण सुरक्षात्मक तंत्र प्रभाग, एवं
के. एस. वी. नाम्बि
पर्यावरणीय मूल्यांकन प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, बम्बई - 400 085

समुपयुक्त विलायकों में किरणित पदार्थों के विलय होने पर प्रकाशोत्सर्जन की क्रिया को द्रव संदीप्ति (द्र.सं.) कहते हैं। नाभिकीय प्रौद्योगिकी की विभिन्न सुविधाओं में द्र.सं. पर आधारित विकिरण मात्रामिति के अनुप्रयोग किये गये हैं। इस लेख के लेखकों ने (हाइड्रोक्सी मिथाइल) अमीनो मीथेन के जिसे संक्षेप में ट्रिस कहते हैं, द्रव संदीप्ति मात्रामिति संलक्षण और इलेक्ट्रान भ्रमि अनुनाद (इ.भ्र.अ.,ESR) प्रकाशित किये हैं। प्रस्तुत शोध लेख में ट्रिस के विभिन्न मात्रामितीय संलक्षणों, जैसे गामा मात्रा अनुक्रिया, स्थायित्व, उत्सर्जन वर्णक्रम तथा द्र.सं. उत्पाद पर आक्सीजन, मूलक अपमार्जक, विलायक तापमान तथा उसके pH के प्रभाव का विस्तार से विवेचन किया गया है। किरणित ट्रिस पर इ.भ्र.अ.मापन भी इसमें प्रस्तुत किये गये है।

प्रायोगिक क्रियाविधि

द्र.सं. प्रयोग (चित्र-1) में एक क्वार्ट्ज कोशा होती है जिसे एक प्रकाश-गुणक नलिका (PM tube, EMI-6255B) के ऊपर एक प्रकाशबंद सज्जा में लगाया जाता है। प्रकाश-गुणक नलिका और विलयन कोशा एक पट द्वारा अलग किये जाते हैं। पट की खुली हुई स्थिति में खिड़की का काम क्वार्ट्ज करता है।

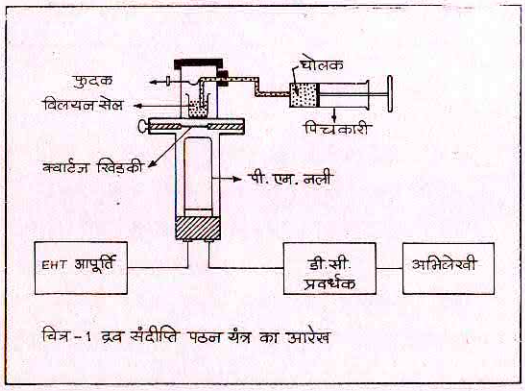

चित्र-1 द्रव संदीप्ति पठन यंत्र का आरेख

द्रव संदीप्ति मापन हेतु विलियन- कोशा में 5-10 मि.ग्रा. प्रतिदर्श (नमूना) रखा गया और 3-5 मि.लि. विलायक पिचकारी से विलयन - कोशा में डाल दिया गया। दूसरी विधि में, बाहरी क्रिया द्वारा विलयन कोशा के ऊपर बनाये गये फुदक से विलियन में प्रतिदर्श डाला जा सकता था। प्रकाश-गुणक नलिका को एक दिष्ट -धारा (डी.सी.) प्रवर्धक और स्ट्रिप चार्ट रिकार्डर से जोड़ा गया था। तात्क्षणिक द्र.सं प्रकाशोत्सर्जन को दिष्ट धारा प्रवर्धक के मापक - पठन से प्राप्त किया गया और इसका अभिलेख रिकार्डर से प्राप्त किया गया।

एक कोबाल्ट - 60 गामा - कोशा से ट्रिस का गामा किरणन 0.4 किलो ग्रे प्रति घंटा की दर से किया गया। ट्रिस पर उत्सर्जन वर्णक्रम मापन विस्तृत वर्णक्रमीय अनुक्रिया वाली प्रकाश-गुणक-नलिका (R-446-S, हमामत्सु, जापान) से अमिन्को बावमन (Aminco Bowmann) स्पेक्ट्रोफोटो फ्लुओरोमीटर का उपयोग करके किये गये। विभिन्न तरंग दैर्घ्यों पर प्रतिदर्श के प्रति मि.ग्रा. पर द्र.सं. की प्रखरता प्राप्त की गयी। उत्सर्जन वर्णक्रम का प्रकाश-गुणकनलिका की वर्णक्रमीय अनुक्रिया के अनुरूप संशोधन किया गया।

इ.भ्र.अ. वर्णक्रम मापन 100 किलो हर्ट्ज अधिमिश्रण (मोडुलेशन) और संसूचक लगाकर एक V-4502 वेरियन x-पट्ट इ.भ्र.अ. वर्णक्रममापी से किये गये। g-मान के निर्धारण के लिए एक डाइफिनाइल पिक्राइल हाइड्राज़िल (DPPH) प्रतिदर्श का उपयोग किया गया। भ्रमि सांद्रण का निर्धारण एक वेरियन मानक (KCl में पिच, Pitch) प्रतिदर्श से किया गया। क्वार्ट्ज की प्रतिदर्श-नलिका में गामा किरणित ट्रिस की एक तौली गयी मात्रा (100 - 130 मि.ग्रा.) इ.भ्र.अ. कोटर में रख दी गयी और परिवेश तापमान पर वर्णक्रम ले लिया गया।

परिणाम

द्रव संदीप्ति मापनों का मानकीकरण

1. **विलायक का चुनाव**: आसुत पानी, फ्लूरेसिन सोडियम, कापर सल्फेट, थैलस क्लोराईड, लूसिजेनिन तथा लूमिनोल जैसे विभिन्न विलायकों (4-5 मि.लि.) का प्रयोग द्र. सं. उत्पाद की अनुकूलतम परिस्थितियां ज्ञात करने हेतु किया गया। परिणामों से यह संकेत मिला कि इन विलायकों में 4 मि. ग्रा. प्रति लि. की सांद्रता का लूमिनोल सबसे अधिक कुशल द्र. सं. परिवर्धक है।

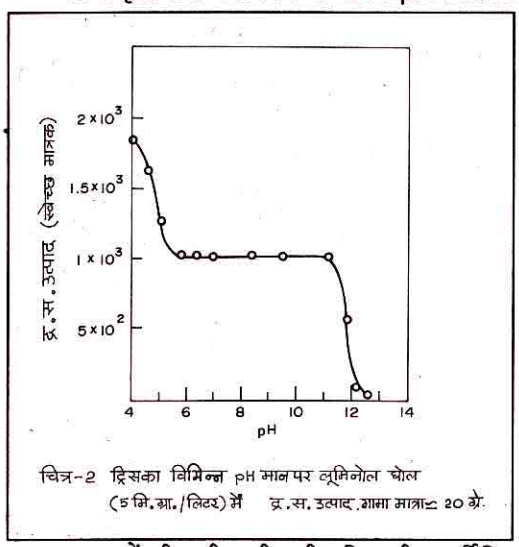

2. **pH का प्रभाव**: चित्र-2 में लूमिनोल विलयन में ट्रिस का द्र. सं. उत्पाद विभिन्न pH मानों के परास, 4-12 पर दिखाया गया है। pH के परास, 6-11 में ट्रिस का द्र. सं. उत्पाद स्थिर रहता है, जबकि 5.5 से कम pH पर द्र सं. में वृद्धि पायी गयी। 11 से अधिक pH पर द्र. सं. उत्पाद में भी कमी पायी गयी। ट्रिस की अन्तर्निहित क्षारीय प्रकृति (पानी में ट्रिस का 0.1 M घोल pH का मान (10.4 देता है) तथा उसकी समावस्थापक (बफर) क्रिया pH के चौड़े परास (6-11) के कारण द्र. सं. उत्पाद स्थिर रहता है। ऊँचे pH मानों पर द्र. सं. उत्पाद में कमी, इन मानों पर लूमिनोल की रसायनी-संदीप्ति में पूर्व-प्रकाशित कमी से मेल खाती है। ये परिणाम स्फुरक (फास्फर) में उपस्थित विसरण करते मुक्त मूलकों द्वारा लूमिनोल अणु में क्षारीय आक्सीकरण का संकेत देते हैं।

चित्र-2 ट्रिसका विभिन्न pH मान पर लूमिनोल घोल (5 मि. ग्रा./लिटर) में द्र. स. उत्पाद. गामा मात्रा≃ 20 ग्रे.

3. **आक्सीजन का प्रभाव**: परिवेश परिस्थितियों की अपेक्षा किरणित ट्रिस के द्र. सं. उत्पाद ने विलयन में नाइट्रोजन के बुलबुले उठती परिस्थिति में आसुत पानी में 87% की कमी और लूमिनोल विलयन (4 मिग्रा/लि) में 40% की कमी प्रदर्शित की। यह परिणाम संकेत करता है कि द्र. सं. प्रक्रम में आक्सीजन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पानी को विलायक के रूप में प्रयोग करके द्र. सं. प्रक्रम पर आक्सीजन के प्रभाव को इस प्रकार समझा जा सकता है कि घुलते हुए द्र. सं. पदार्थ में फँसे हुए मुक्त मूलकों का आक्सीकरण हो जाता है, जिससे पराक्सी मूलक बनते हैं, जो द्र. सं. प्रक्रम को आरम्भ करते हैं। लूमिनोल को जब विलायक के रूप में निष्क्रिय पर्यावरण में प्रयोग किया जाता है, तो सक्रिय आयतन में अपर्याप्त आक्सीजन रहने के कारण, लूमिनोल का क्षारीय आक्सीकरण दब जाता है, जिसके परिणामस्वरूप द्र. सं. उत्पाद घट जाता है।

4. **तापमान का प्रभाव**: चित्र-3 में विभिन्न विलायक तापमानों पर किरणित ट्रिस का द्र. सं. उत्पाद दिखाया गया है। साधारणतः, 5-80 ^{0}से. के तापमान परास में द्र. सं. उत्पाद के घटने की प्रवृत्ति देखी गयी। ऊँचे तापमानों पर द्र. सं. उत्पाद में कमी कदाचित् ऊँचे विलायक तापमानों पर मूलक पुनर्संयोजन अभिक्रिया के कारण होती है, क्यों कि इससे मूलक समाप्ति अभिक्रिया हो जाती है। आक्सीजन की भूमिका द्र. सं. प्रक्रम में महत्वपूर्ण होती है और विलायक में ऊँचे तापमानों पर घुली हुई आक्सीजन का सांद्रण घट जाता है, इसलिए द्र. सं. उत्पाद भी कम हो जाता है।

5. **मूलक अपमार्जकों का प्रभाव**: एक्राइल एमाइड, अलाइल अलकोहल, बीटा-नेफथोल, हाइड्रोक्विनोन, फारमेल्डिहाइड तथा एस्कोर्बिक अम्ल जैसे मूलक अपमार्जकों की उपस्थिति में द्र.सं. उत्पाद के मापन किये गये। इनके परिणाम यह संकेत करते हैं कि इन अपमार्जकों के अल्प सांद्रण भी द्र.सं. उत्पाद में भारी कमी कर देते हैं। ये परिणाम यह भी बताते हैं कि द्र. सं.

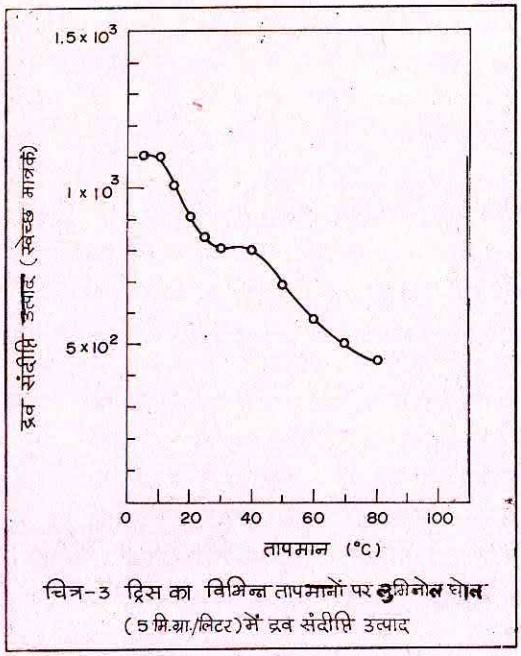

चित्र-3 ट्रिस का विभिन्न तापमानों पर लुमिनोल घोल (5 मि.ग्रा./लिटर) में द्रव संदीप्ति उत्पाद

प्रक्रम में विकिरण प्रेरित मुक्त मूलक प्रमुख कारणात्मक कर्मक होते हैं।

6. **द्र. सं. अनुक्रिया बनाम गामा मात्रा :** चित्र-4 में गामा मात्रा के अनुसार द्र.सं. अनुक्रिया दिखायी गयी है। 0.1

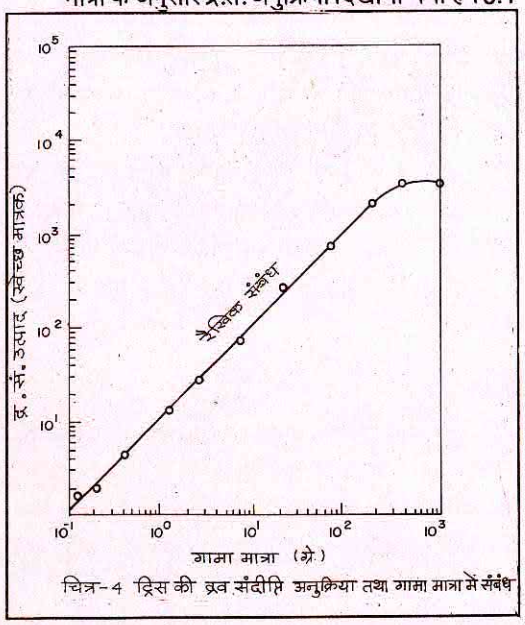

चित्र-4 ट्रिस की द्रव संदीप्ति अनुक्रिया तथा गामा मात्रा में संबंध

से 200 ग्रे तक की गामा मात्रा के साथ ट्रिस का द्र.सं. उत्पाद रैखिक रूप से बढ़ता है। 200 से 2000 ग्रे की मात्रा-परास में द्र. सं. उत्पाद संतृप्त हो जाता है। रसायनिक पृष्ठभूमि, यानि लूमिनोल में अकिरणित ट्रिस के घुलने पर प्रकाशोत्पादन, 0.05 ग्रे की गामा मात्रा के प्रतिदर्श उद्भासन द्वारा प्राप्त द्र. सं. उत्पाद के समतुल्य पाया गया। इस प्रकार, ट्रिस से द्र. सं. मात्रामिति द्वारा 0.05 से 200 ग्रे के परास में गामा मात्रा मापी जा सकती है। परिवेश परिस्थितियों में ट्रिस की द्र.सं. में 6 महीनों तक कोई क्षय नहीं देखा गया।

7. **उत्सर्जन वर्णक्रम :** गामा किरणित ट्रिस का उत्सर्जन वर्णक्रम 440 नैनोमीटर तरंगदैर्घ्य पर एक चौड़ा शिखर प्रदर्शित करता है (चित्र-5) जो उसी सांद्रण और pH पर लूमिनोल के प्रतिदीप्ति वर्णक्रम जैसा होता है। यह परिणाम यह संकेत करता है कि प्रकाशोत्सर्जन के लिए

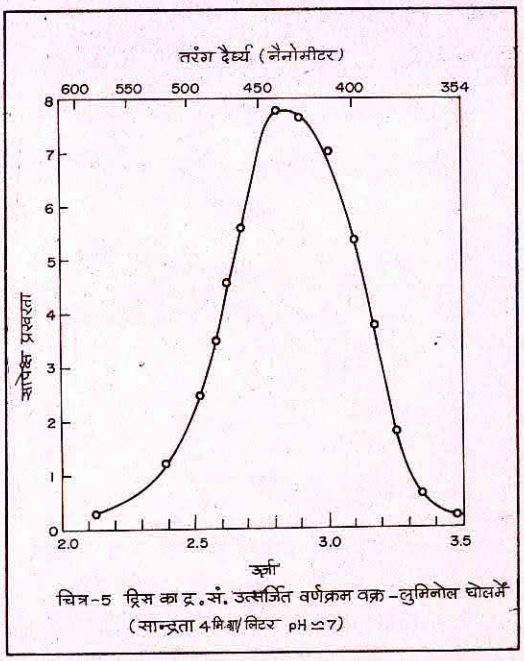

चित्र-5 ट्रिस का द्र.सं. उत्सर्जित वर्णक्रम वक्र-लुमिनोल घोल में (सान्द्रता 4 मि.ग्रा/लिटर pH ≃ 7)

विसरण करते मूक्त मूलकों से लुमिनोल अणु को ऊर्जान्तरण होता है।

8. **ट्रिस पर इ. भ्र. अ. (ESR) मापन :** विभिन्न गामा उद्भासनों पर किरणित ट्रिस के इ.भ्र.अ. वर्णक्रम चित्र-6

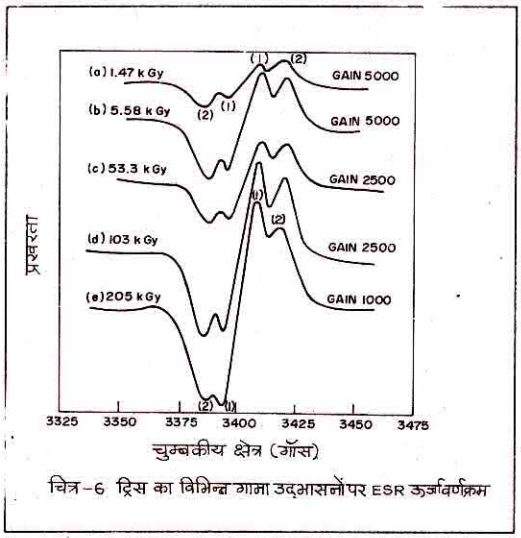

चित्र–6 ट्रिस का विभिन्न गामा उद्‌भासनों पर ESR ऊर्जावर्णक्रम

में दिखाये गये हैं। अकिरणित ट्रिस ने कोई इ. भ्र. अ. संकेत नहीं दिखाया। इन वर्णक्रमों के अध्ययन 1.4 से 700 किलो ग्रे तक के मात्रा परास में किये गये हैं। इ. भ्र. अ. का वर्णक्रमीय आयाम 300 किलो ग्रे की मात्रा तक गामा उद्भासन के साथ बढ़ता पाया गया (चित्र-7)।

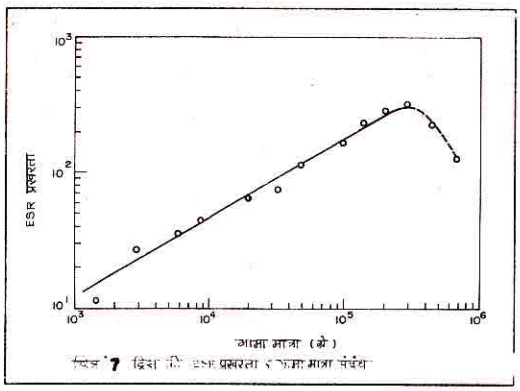

चित्र 7 ट्रिस की ESR प्रखरता व गामा मात्रा संबंध

प्रतिदर्श के प्रेक्षित वर्णक्रम तथा वेरियन मानक (KCl में पिच, Pitch) को दो बार समाकलित किया गया और भ्रमि सांद्रण की गणना की गयी। 300 किलो ग्रे की मात्रा पर अनुमानित मुक्त मूलक सांद्रण 6.8×10^{17} भ्रमि/ग्राम पाया गया।

प्रेक्षित इ. भ्र. अ. वर्णक्रमों में तीन अतिव्याप्त घटक पाये गये। मध्यवर्ती तथा बाहरी घटक गामा मात्रा के साथ बढ़ते पाये गये, परन्तु गामा उद्भासन के उच्च स्तरों पर मध्यवर्ती घटक की प्रेक्षित वृद्धि तदनुरूपी बाहरी घटक की अपेक्षा अधिक पायी गयी। मध्यवर्ती घटक और बाहरी घटक का अनुपात कम मात्रा (1.47 किलो ग्रे) पर 0.8, तथा उच्च मात्रा (200 किलो ग्रे) पर 1.2 पाया गया। इससे यह मालूम होता है कि उच्च मात्रा परास में एक भिन्न मूलक प्रजाति उत्तरोत्तर बढ़ती हुई मात्रा में बनती है, तथा तदनुरूपी इ. भ्र. अ. वर्णक्रम मध्यवर्ती घटक को अतिव्याप्त कर देता है। प्रेक्षित वर्णक्रमों की व्याख्या दो भिन्न-भिन्न प्रजाति के मूलकों द्वारा की जा सकती है। निम्न मात्रा परास पर बनी प्रबल प्रजाति के तीन घटक हैं। उच्च मात्राओं पर एकक इ. भ्र. अ. वर्णक्रम वाली एक दूसरी मूलक प्रजाति अपेक्षाकृत अधिक सांद्रण में बनती है। इस प्रकार, प्रेक्षित वर्णक्रम दो मुक्त मूलक प्रजातियों के कारण होता है, एक त्रि-घटक वर्णक्रम देती है, और दूसरी एकक वर्णक्रम। इ. भ्र. अ. वर्णक्रम का g-मान 2.0034 ± 0.0008 पाया गया। दोनों प्रजातियों के वर्णक्रम अतिव्याप्त हैं और मूलकों के g-मान लगभग समान हैं।

यह देखा गया है कि मापन योग्य इ. भ्र. अ. संकेत के अभिलेखन के लिए आवश्यक न्यूनतम गामा मात्रा (1.47 किलो ग्रे) वह है (चित्र-6), जिस पर द्र. सं. उत्पाद की संतृप्ति हो जाती है। 1 किलो ग्रे से अधिक उद्भासन पर इ. भ्र. अ. संकेत बढ़ते हैं, जबकि द्र. सं. में संतृप्ति और उसके बाद, धीरे-धीरे कमी दिखायी पड़ती है। इस मात्रा-परास में मध्यवर्ती घटक से सम्बन्धित मुक्त मूलक प्रजाति बाहरी घटक से सम्बन्धित प्रजाति की अपेक्षा उच्च वृद्धि प्रदर्शित करती है (चित्र-6)। ये परिणाम यह बताते हैं कि निम्न मात्राओं पर बनी त्रि-घटकी वर्णक्रम देने वाली मुक्त मूलक प्रजाति के कारण द्र. सं. उत्सर्जन होता है, तथा इ. भ्र. अ. एकक वर्णक्रम देने वाली प्रजाति द्र. सं. प्रक्रम को या तो दबा देती है, या इसमें कोई भूमिका नहीं निभाती है।

निष्कर्ष

ट्रिस द्रव संदीप्ति मात्रामापी 0.05-200 ग्रे मात्रा-परास में रैखिक गामा अनुक्रिया प्रदर्शित करता है। यह मात्रामापी विकिरण चिकित्सा, खाद्य पदार्थों के विकिरण संसाधन तथा उच्च ऊर्जा इलेक्ट्रान त्वरकों के क्षेत्रों में उपस्थित उच्च मात्रा

(शेष पृष्ठ 45 पर)

आयोडीन-131 द्वारा रेडियो सक्रियता मापन की चतुर्थ राष्ट्रीय अन्तर्तुलना

पी. के. श्रीवास्तव, एच. के. साहू और जी. डी. खेड़ा
विकिरण संरक्षण प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र,
बंबई - 400 085

इस देश में रेडियो समस्थानिक के मापन के कार्य का संयोजन करने के लिए तथा इन मापनों को राष्ट्रीय प्रधान मानक से अंकित करने के लिए आयोडीन-131 द्वारा रेडियो सक्रियता मापन की राष्ट्रीय अन्तर्तुलता के कार्यक्रम की कल्पना की गयी थी। इस कार्य के लिए आयोडीन-131 को इसलिए चुना गया है कि इसे नाभिकीय औषधि में प्रचुरता से प्रयोग में लाया जाता है और इसकी अर्धायु (8.021 ± 0.001 दिन) बहुत-ही सुविधाजनक है। पिछले वर्षों में तीन अन्तर्तुलनाएं हो चुकी हैं। चतुर्थ अन्तर्तुलना अभी हाल-ही में पूर्ण हुई है जो इस लेख में प्रस्तुत है।

अन्तर्तुलना की विधि यह है कि जितने भी सहभागी हैं, उनके पास एक मानकीकृत विलयन भेजा जाता है, परंतु उन्हें इसकी सही धर्मिता नहीं बतायी जाती है। उनसे यह कहा जाता है कि वे इस विलयन का अपने संसूचक पर मापन करें और परिणाम तथा प्रयोग किये हुए उपकरण का विवरण हमारे पास भेजें। इन परिणामों का हम विश्लेषण करते हैं तथा एक रिपोर्ट बनायी जाती है जिसमें सारे परिणाम और अन्य विवरण होते हैं। प्रत्येक सहभागी को इस रिपोर्ट की एक प्रति भेजी जाती है जिसमें उनके पास भेजे गये विलयन की सही धर्मिता अंकित होती है। सहभागी यदि चाहें तो वे अपने परिणाम का मूल्यांकन कर सकते हैं। यदि आवश्यक हुआ तो प्रयोग किये हुए अंशांकन गुणक का दुबारा परिकलन कर सकते हैं।

अन्तर्तुलना के सहभागी

अन्तर्तुलना के लिए अपने देश के 55 नाभिकीय औषधि केंद्रों के पास निवेदन - पत्र तथा प्रश्नावली भेजे गये, जो रोग निदान और रोगोपचार के लिए आयोडीन-131 प्रयोग करते हैं। इनमें से 20 केंद्रों ने इस अन्तर्तुलना में भाग लेने की इच्छा व्यक्त की तथा ब्योरे के साथ प्रश्नावली लौटायी। तालिका-1 में अंन्तर्तुलना के बारह वास्तविक सहभागियों के नाम दिये गये हैं।

मानक विलयन

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, बंबई के आइसोटोप ग्रुप से आयोडीन - 131 के 25 विलयन मंगाये गये जो कि कांच की उस शीशी में थे जिसमें अधिकतर रेडियो समस्थानिक नाभिकीय औषधि केंद्रों को भेजे जाते हैं। विलयन का आयतन 5 मि.लि. था। इनकी धर्मिता दो प्रकार की थी; (1) 37 मेगा बैक्वेरेल, और (2) एक मेगा वैक्वेरेल। इन सब को एक उच्च दबाव वाले अंतर्मुखी गामा आयनन चैम्बर पर मानकीकृत किया गया। इस आयनन चैंबर को $4\pi\beta - \gamma$ संपात विधि से तैयार किये गये राष्ट्रीय प्राथमिक मानक से अशंशोधित किया गया है। इसके अंशशोधन गुणक की ब्यूरो अन्तरनेसिनाल दे प्वा ये मेंज़ूर, फ्रांस से तथा विश्व की कई दूसरी राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं से पहिले ही तुलना की जा चुकी है।

आयोडीन - 131 के विलयन की परिशुद्धता की एक अतिशुद्ध जरमेनियम वर्णक्रममापी पर परीक्षा की गयी। इसकी धर्मिता गामा आयन कक्ष पर तीन अर्धायु तक मापी गयी। दोनों मापन से यह निष्कर्ष निकला कि गामा विलयन में गामा उत्सर्जन अशुद्धि 0.05% से कम है।

इन मानकीकृत विलयनों में से 20 उन केन्द्रों के पास जिन्होंने इस कार्य में रुचि दिखायी थी, एक-एक विलयन मापन हेतु आवश्यक निर्देशों के साथ भेजा गया। साथ ही, मापन के लिए 10 मई 1990, 12.00 दोपहर का समय निश्चित किया गया था।

12 सहभागियों द्वारा प्रयोग किये गये आइसोटोप कैलीब्रेटर के विवरण तालिका-2 में दिये गये हैं। इन परिणामों के विश्लेषण का तालिका-3 में गुप्तता बनाये रखने के लिए कूट (कोड) नम्बरों में सारिणीकरण किया गया है। अब एक रिपोर्ट बनायी जा रही है जिसमें परिणामों की विस्तृत जानकारी तथा यर्थाथता और विश्वस्तता सुधारने के लिए संस्तुतियाँ दी गयी होंगी।

इस अन्तर्तुलना में सहभागियों ने बहुत सहयोग दिया और इच्छा व्यक्त की कि ऐसे सर्वेक्षण जारी रहने चाहिए। यह भी सुझाव दिया कि दूसरे रेडियो नाभिक, जैसे टेक्नीशियम-99 एम को भी शामिल करना चाहिए। इससे यह स्पष्ट होता है कि वे अपने मापन की विश्वसनीयता में बहुत अभिरुचि रखते हैं।

तालिका- 3 से स्पष्ट है कि परिणामों में बहुत विक्षेपण है। लगभग एक-तिहाई परिणामों के अन्तर 10% से भी अधिक हैं। दुर्भाग्यवश, किसी भी केंद्र ने परिणाम की अनिश्चितता को रिपोर्ट नहीं किया है। अतः, यह कहना कठिन है कि सहभागी और हमारे परिणामों का अन्तर अर्थपूर्ण है या नहीं।

लगभग सभी केंद्रों ने आइसोटोप कैलीब्रेटर के निर्माता द्वारा दिये गये अंशांकन आंकड़ों को प्रयोग किया है। इस अन्तर्तुलना से ये संकेत मिलता है कि इन आंकड़ों पर सदा निर्भर नहीं रहा जा सकता है और अंशांकन गुणक किसी राष्ट्रीय मानक प्रयोगशाला से अंकित होना चाहिए।

किसी भी सहयोगी ने आयन कक्ष और उससे संबंधित इलेक्ट्रानिकी का परीक्षण करने के लिए लम्बी अर्धायु वाले संदर्भ स्रोत का प्रयोग नहीं किया है। आयन कक्ष और उसकी इलेक्ट्रानिकी की विश्वसनीयता हेतु सिज़ियम-137 जैसे संदर्भ स्रोत का प्रयोग बहुत आवश्यक है।

अन्तर्तुलना के परिणामों के विक्षेपण से यह संकेत मिलता है कि इस देश के नाभिकीय औषधि केंद्रों में आइसोटोप कैलीब्रेटर द्वारा धर्मिता मापन में कठिन समस्याएं हैं। इंग्लैंड और कनाडा में क्रमशः नेशनल फिजिकल लेबोरेटरी, टेडिंगटन और एटामिक एनर्जी आफ कनाडा लिमिटेड द्वारा किये गये इसी प्रकार के सर्वेक्षण से इसी प्रकार

तालिका - 3 .1990 की अंतर्तुलना का परिणाम

कूट नम्बर	विलयन नम्बर	अस्पताल का परिणाम (मेगाबैक्वेरेल में)	भा. प. अ. के. का परिणाम (मेगाबैक्वेरेल में)	अनुपात (अस्पताल भा.प.अ.कें.)
1.	टी - 8293	62.35	56.49	1.10
2.	टी - 8279	41.07	55.57	0.74
3.	टी - 8280	46.41	56.17	0.83
4.	टी - 8289	57.57	54.30	1.06
5.	टी - 8294	59.31	55.38	1.07
6.	कैप्सूल - 5	1.335	1.475	0.90
7.	टी - 8291	57.35	58.16	0.99
8.	टी - 8287	31.82	53.69	0.59
9.	टी - 8281	47.29	52.45	0.90
10.	टी - 8290	55.14	55.86	0.99
11.	टी - 8295	49.58	55.41	0.90
12.	टी - 8283	69.42	55.19	1.26

का निष्कर्ष निकलता है। अतः, इन मापनों की यथार्थता और विश्वसनीयता को सुधारने के लिए और अन्तर्तुलनाओं की आवश्यकता है।

आभार

श्री पी. गंगाधरन, प्रमुख, विकिरण मानक अनुभाग तथा श्री उ. मध्वनाथ, प्रभागाध्यक्ष विकिरण संरक्षण प्रभाग ने इस विषय में बहुत रुचि दिखायी और सहयोग दिया। इन दोनों के हम बहुत आभारी हैं।

तालिका-1. अन्तर्तुलना के सहभागियों के नाम

1. एम. एन. जे. कैंसर अस्पताल, हैदराबाद
2. सेना अस्पताल, दिल्ली छावनी
3. नाभिकीय औषधि तथा संबद्ध विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली
4. आर. एन. टी. मेडिकल कालेज, उदयपुर
5. बाम्बे अस्पताल, बंबई
6. आई. एन. एच. एस., अश्विनी, बंबई
7. आर. एम. सी., टाटा मेमोरियल अस्पताल, बंबई
8. एम. के. एल. जी. मेडीकल कालेज अस्पताल, बेरहामपुर, उड़ीसा
9. राजकोट कैंसर सोसाइटी, राजकोट
10. कृश्चियन मेडिकल कालेज, वेल्लौर
11. कैंसर अस्पताल और अनुसंधान संस्थान, ग्वालियर
12. रक्षा प्रयोगशाला, जोधपुर

तालिका - 2

सहभागियों द्वारा प्रयोग किये गये आइसोटोप कैलीब्रेटर

1. बी. ए. आर. सी/एम. आई. एस/ईडी - 4
2. ई. सी. आई. एल/आर. सी. 861 ए
3. पिकर कारपोरेशन (यू. एस. ए) 632 - 507
4. आर. ए. डी. एक्स - 225
5. विनटेन इंस्ट्रूमेन्ट्स, इंगलैंड, आईसोकेल - 2

• • •

(पृष्ठ 30 का शेष)

परमाणु के स्थानान्तरण द्वारा सुधार किया है और इस प्रकार, दूसरे क्रम के गति स्थिरांक निकाले हैं जो तालिका (1) में दिये गये हैं।

इन परिणामों के आंकड़ों से मालूम होता है कि (1) सभी थायोल यौगिक टी-ब्यूटेनोल मूलक की मरम्मत करते हैं, (2) टी-ब्यूटेनोल मूलक का मरम्मत गति स्थिरांक इथेनोल एवं मीथेनोल मूलक के मरम्मत गति स्थिरांक से कम है, (3) एमिनो एसिड थायोल यौगिकों का गति स्थिरांक सादे थायोल यौगिकों के गति स्थिरांक से काफी ज्यादा है, (4) डाईथायोथ्रीटोल एवं डाईथायोइराईथ्रीटोल का गति स्थिरांक एमीनो एसिड थायोल से कम, लेकिन सादे थायोल के गति स्थिरांक से ज्यादा है। इसका कारण है इन दोनों परमाणुओं में दो-दो थायोग्रुपों का होना, (5) प्रयोग करने के समय जो पी एच होता है वह बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि गति स्थिरांक,पी एच पर काफी निर्भर करता है, (6) हमारे द्वारा मालूम की गयी गति स्थिरांक की मात्रा पहले वाली मात्रा से काफी मिलती जुलती है, (7) टी ब्यूटेनोल मूलक एक उदासीन मूलक समझा जाता है। इस कारण यह OH मूलकों के लिए उत्तम संमार्जक (scavenger) है और विकिरण रसायनिक प्रयोगों में खूब इस्तेमाल किया जाता है। हमारे प्रयोगों से मालूम होता है कि टी-ब्यूटेनोल मूलक थायोल यौगिक के साथ अभिक्रिया करता है, इस कारण टी-ब्यूटेनोल को OH मूलक के संमार्जक के रूप में प्रयोग करते समय होशियारी बरतनी चाहिए। इन प्रयोगों के परिणाम एवं इस लेख में दी गयी अभिक्रियाओं की जानकारी जैविक क्षति के संरक्षण एवं मरम्मत के लिए सहायक हो सकती है।

आभार

डॉ जय पाल मित्तल, अध्यक्ष रसायनिकी प्रभाग को उनकी इस कार्य में रूचि व समय-समय पर किये गये उत्साह वर्धन के लिए लेखक धन्यवाद करते हैं।

• • •

परमाणु भट्टियों में विकिरण सुरक्षा

विनोद कुमार जैन
रिएक्टर सुरक्षा प्रभाग
भाभा परमाणु अनुसन्धान केंद्र, मुंबई - 400 085

ऊर्जा उत्पादन के पारंपरिक साधनों, जैसे कोयला और पानी के अतिरिक्त, अन्य साधनों में परमाणु ऊर्जा प्रमुख है और आज की परिस्थिति में आवश्यक भी। इस ऊर्जा-स्रोत का उपयोग फ्राँस, जापान, संयुक्त राज्य अमेरिका में और कई अन्य देशों में बड़े व्यापक रूप से हो रहा है। हमारे देश में तारापूर (महाराष्ट्र), रावत भाटा (राजस्थान), कलपाक्कम (तामिलनाडु) और नरोरा (उत्तर प्रदेश) में परमाणु बिजली घर काम कर रहे हैं और अनेक निर्माणाधीन हैं। दुर्भाग्यवश परमाणु ऊर्जा से हमारा परिचय बम विस्फोटों द्वारा हुआ - परीक्षणात्मक या विध्वसंक। फिर, हाल में दुनिया के सबसे उन्नत देश, संयुक्त राज्य अमेरिका में 'थ्री माइल आयलैंड' में और सोवियत संघ के चेरनोबिल में परमाणु बिजली घर की गम्भीर दुर्घटनाएं घटीं। पहली दुर्घटना पर तो पूर्ण रूप से काबू पा लिया गया और जनसामान्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, बिजलीघर को अवश्य बहुत क्षति पहुँची, परन्तु दूसरी दुर्घटना में परमाणु भट्टी नष्ट हो गयी और इसके फलस्वरूप, भट्टी में विद्यमान रेडियोधर्मिता बड़े पैमाने पर बाहर आ गयी और पर्यावरण में दूर-दूर तक फैल गयी। इस दुर्घटना के कई कारण थे और सुरक्षा उपायों में कमी भी थी। जैसा कि हम अभी जानेंगे परमाणु में सुरक्षा उपायों का प्रमुख ध्येय यही है कि रेडियोसक्रियता बाहर न निकलने पाए।

परमाणु ऊर्जा

प्राकृतिक यूरेनियम का द्रव्यमान क्रमांक 238 होता है और इसमें 0.7% एक समस्थानिक 235 द्रव्यमान का होता है। इस समस्थानिक में एक न्यूट्रॉन के अवशोषण से असंतुलन पैदा हो जाता है और इसका विखंडन हो जाता है। इस विखंडन के फलस्वरूप, परमाणु ऊर्जा, दो कम द्रव्यमान वाले तत्व और दो या तीन न्यूट्रॉन पैदा हो जाते हैं। यूरेनियम समस्थानिक, द्रव्यमान (235) और इन दो तत्वों व न्यूट्रॉन के द्रव्यमानों के जोड़ का अन्तर भौतिक शास्त्र के अनुसार ऊर्जा में बदल जाता है। इस यूरेनियम समस्थानिक को हम परमाणु ईंधन कहेंगे।

एक ग्राम परमाणु ईंधन से 1.0 मेगावाट दिन ऊर्जा प्राप्त होती है और साथ ही, बहुत से रेडियोसक्रिय समस्थानिक पैदा हो जाते हैं, जिनमें आयोडीन, सीजियम, स्ट्रॉंशियम, आरगन, प्लूटोनियम इत्यादि प्रमुख हैं। विखंडन क्रम को न्यूट्रान बनाये रखते हैं। इस प्रकार, परमाणु ऊर्जा के साथ बहुत बड़ी मात्रा में रेडियोसक्रियता भी पैदा हो जाती है। इन रेडियोसक्रिय तत्वों से विकिरण निकलते हैं और वे हमारे लिए हानिकारक है।

परमाणु भट्टी

परमाणु भट्टी में ऊर्जा प्राप्त करने के लिए परमाणु ईंधन के विखंडन की प्रक्रिया की जाती है। 235 मेगावाट बिजली बनाने वाले बिजलीघर की भट्टी में करीब 50 टन यूरेनियम डायआक्साइड होता है। जिसमें लगभग 0.3 टन या 300 कि. ग्रा. परमाणु ईंधन होता है। 235 मेगावाट बिजली पैदा करने के लिए लगभग 780 ग्राम परमाणु ईंधन प्रतिदिन विखंडित होता है, यानि जलता है। यदि इतनी ही बिजली कोयला जलाकर पैदा की जाय, तो प्रतिदिन 3000 टन कोयला जलाना पड़ेगा। इस प्रकार, यह स्पष्ट होता है कि परमाणु भट्टी ऊर्जा का बहुत सघन और सांद्रित स्रोत है। इस ऊर्जा से पानी की भाप बनायी जाती है और टरबाइन चलाकर बिजली। स्पष्ट है कि यदि यह ऊर्जा, लगातार भट्टी से बाहर न निकाली जाय तो भट्टी में तापमान बढ़ता रहेगा जिसका नतीजा अच्छा नहीं हो सकता। परमाणु भट्टी के सुरक्षापूर्वक काम करने का अर्थ यह है कि उसमें पैदा होने वाली ऊर्जा को लगातार पूर्णतया बाहर निकाला जाय और साथ-साथ पैदा होने वाले रेडियोसक्रिय तत्वों को निकलने न दिया जाय। इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पहले तो परमाणु ईंधन ही इस प्रकार का होता है कि उसमें विखंडन की प्रक्रिया होने के बावजूद, वह बिखरता नहीं है और 90% विखंडन उत्पाद उसी में समाये रहते हैं। दूसरे, इसे खुला न रखकर पतली - लम्बी नलियों में रखा जाता है। ये नलियां विशेष प्रकार की मिश्रधातु (ज़िरकालौय) से बनायी जाती हैं। इस प्रकार, पैदा होने वाले रेडियोसक्रिय तत्व आसानी से बाहर नहीं निकल

सकते। इन ईंधन नलियों को शीतलक से ठंडा किया जाता है। शीतलक भी ईंधन नलियों को अपने में डुबाये हुए एक बन्द लूप में बहता रहता है। ईंधन में पैदा होने वाली ऊर्जा शीतलक का तापमान बढ़ा देती है। इस शीतलक की ऊष्मा से सादे पानी की भाप बनायी जाती है जिससे टरबाइन-जनरेटर चलाकर बिजली पैदा की जाती है।

रेडियोसक्रियता अन्तर्विष्टीकरण

ईंधन नलियों में कुछ खराबी के कारण रेडियोसक्रिय तत्व बाहर यदि आ भी जायें, तो वे शीतलक में मिल जायेंगे। शीतलक की सफाई भी की जाती है और इस प्रकार, इन रेडियोधर्मी तत्वों को अलग कर दिया जाता है। शीतलक के बन्द लूप को इस प्रकार विशेष रूप से अधिक रेडियोधर्मी नहीं होने दिया जाता है। इस प्रकार, परमाणु भट्टी के सामान्य परिचालन में रेडियोसक्रिय तत्व पर्यावरण में नहीं आ सकते।

दूसरी आवश्यकता इस बात की है कि ईंधन का तापमान बढ़ने न पाए। इसे सुनिश्चित करने के लिए शीतलक और प्रक्रम जल का प्रवाह बनाये रखना नितांत आवश्यक है, यानि वे पम्प जिनके द्वारा यह प्रवाह बनाये रखा जाता है हमेशा काम करते रहने चाहिए। इसके लिए अतिरिक्त पम्पों की व्यवस्था की जाती है और बिजली की आपूर्ति के भी हर दशा में उपलब्ध रहने के लिए अतिरिक्त साधन मोहैया किये जाते हैं। इसी प्रकार, यदि किसी टूट-फूट के कारण पानी का प्रवाह रुकता है, तो परमाणु भट्टी को तुरंत बन्द करके एक अन्य लूप द्वारा परमाणु ईंधन को ठंडा रखा जाता है। कुल मिलाकर सामान्य परिचालन या छोटी-मोटी त्रुटि व टूट-फूट में रेडियोधर्मिता के बाहर आने की संभावना नहीं है।

अब सवाल उठता है दुर्घटनात्मक स्थिति का। परमाणु भट्टी में यह दशा ईंधन के किसी कारण से ठंडा न रह पाने पर पिघल जाने से उत्पन्न होती है। इस अवस्था में रेडियोसक्रिय तत्वों के बाहर आ जाने की संभावना रहती है। ऐसी स्थिति पर काबू पाने के लिए परमाणु भट्टी को बहुत से पानी से भर देने की व्यवस्था की जाती है जिससे यह जल्दी से जल्दी ठंडी हो जाय और रेडियोसक्रियता फैलने न पाये। फिर भी बाहर निकली रेडियोसक्रियता को पर्यावरण में जाने से रोकने के लिए, परमाणु भट्टी व शीतलक लूप, पम्प, बॉयलर इत्यादि के ऊपर एक संरोधन भवन बनाया जाता है जिससे कुछ भी बाहर न निकल पाए। विश्व की पहली गम्भीर दुर्घटना में (थ्री माइल आयलैंड के बिजली घर में) कुछ ऐसा ही हुआ था। दूसरी दुर्घटना में संरोधन भवन न होने के कारण रेडियोसक्रिय तत्व पर्यावरण में फैल गये।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते हैं कि परमाणु भट्टियों के परिचालन में सुरक्षा का एक मुख्य ध्येय है रेडियोसक्रियता को पर्यावरण में न फैलने देना। इसके लिए अनेक उपाय किये जाते हैं ताकि न केवल सामान्य स्थिति में, बल्कि दुर्घटनात्मक दशा में भी रेडियोसक्रिय तत्वों को पर्यावरण में जाने से रोका जा सके। इसके लिए चार रुकावटें लगायी जाती हैं। प्रथम, ईंधन का प्रकार जिससे विखंडन उत्पाद उसी में समाये रहें, दूसरे, ईंधन को बन्द नलियों में प्रयोग करना, तीसरे, इन नलियों को शीतलक लूप से घेरा जाना, और चौथे, इस सबके ऊपर संरोधन भवन का बनाया जाना। इस प्रकार, रेडियोसक्रियता को पूर्णतया अन्तर्विष्ट किया जाता है जिससे कर्मचारियों व जनता सब को विकिरण से पूर्ण सुरक्षा प्रदान की जा सके।

• • •

(पृष्ठ 40 का शेष)

स्तरों को मापने में उपयोगी है। प्रकाशोत्पादन हेतु किरणित स्फुरक में उपस्थित विसरण करते मुक्त मूलकों से संवेदनकारी (लूमिनोल) अणुओं में ऊर्जान्तरण की वर्णक्रमीय अध्ययन पुष्टि करते हैं। किरणित ट्रिस के इ.भ्र.अ. मापन दो प्रकार की मुक्त मूलक प्रजातियों की उपस्थिति प्रदर्शित करते हैं जिनमें से एक जिसके कारण द्र.सं. प्रकम होता है, निम्न विकिरण मात्राओं पर बनती है।

आभार

डा.कृ.च.पिल्लै एवं डा.एम.आर.अय्यर, दोनों की इस शोधकार्य में रुचि तथा उनके प्रोत्साहन के लिए हम आभारी हैं।

• • •

दाबित भारी पानी परमाणु बिजलीघरों में विकिरण कार्य पद्धति

एम. आर. सचदेव
नाभिकीय प्रशिक्षण केन्द्र,
रा. प. बिजलीघर, अणुशक्ति, कोटा

विकिरण संरक्षण का मूल सिद्धांत है कि विकिरण कर्मियों को विकिरण की मात्रा अधिकतम अनुज्ञेय विकिरण मात्रा से कम से कम मिले। विकिरण के खुले क्षेत्र में विकिरण संरक्षण अधिक आवश्यक हो जाता है क्योंकि इस क्षेत्र में विकिरण उद्भासन तथा रेडियोधर्मी पदार्थों के कारण दुर्घटनाएं हो सकती हैं और संदूषण फैल सकता है, अतः विकिरण क्षेत्र में कार्य करने हेतु अधिक सावधानियां लेनी पड़ती हैं, और विशेष कार्य प्रणाली अपनानी आवश्यक है ताकि कार्मिकों को न्यूनतम विकिरण मात्रा मिले।

कार्मिकों को विकिरण मात्रा दो तरह से मिल सकती है, बाह्य उद्भासन द्वारा एवं आंतरिक उद्भासन द्वारा।

बाह्य उद्भासन में विकिरण स्रोत शरीर से बाहर रहता है, उसका शरीर से किसी भी प्रकार का भौतिक स्पर्श नहीं होता। स्रोत के हटाते ही उद्भासन समाप्त हो जाता है, या दूसरी अवस्था में विकिरण क्षेत्र से बाहर निकलते ही उद्भासन क्रिया समाप्त हो जाती है। बाह्य उद्भासन सरलता से मापा जा सकता है, अतः वास्तविक खतरे को बहुत विश्वास के साथ आंका जा सकता है। बाह्य उद्भासन को नियंत्रित करने के लिए निम्न उपायों को उपयोग में लाते हैं :

(i) स्रोत से अधिकतम दूरी, (ii) न्यूनतम समय में कार्य समाप्त करना, (iii) शील्डिंग का प्रयोग।

दूसरी तरह से संदूषित होने पर मानव शरीर के अन्दर रेडियोधर्मी पदार्थ पहुँच जाते हैं। विकिरण क्षेत्र में कार्य समाप्त करने के पश्चात भी कार्मिक को विकिरण मात्रा मिलती रहती है। शरीर में पहुँचे हुए रेडियोधर्मी पदार्थ शरीर के अवयवों/अंगों में हमेशा के लिए भी रह सकते हैं, वे उन के अंग भी बन सकते हैं। उनका निष्कासन यदि संभव हो, तो भी बहुत कठिनाई से तीव्र किया जा सकता है। निष्कासन प्रक्रिया विभिन्न अवस्थाओं पर निर्भर करती है, अतः आंतरिक उद्भासन से होने वाले परिणामों का मूल्यांकन अति कठिन है। इसलिए मानवीय संदूषण संरक्षण पर अत्यधिक ध्यान दिया जाता है।

शारीरिक संदूषण (आंतरिक अथवा बाह्य) के कारण आंतरिक उद्भासन होता है। आंतरिक संरक्षण का अर्थ है रेडियोधर्मी तत्व शरीर पर अथवा शरीर में प्रविष्ट न हो सकें, अतः पर्यावरण को संदूषणरहित रखने के प्रयास किये जाते हैं, या फिर उसे स्वीकार्य न्यूनतम संदूषण तक सीमित रखा जाता है।

दूसरे विषाक्त पदार्थों की भांति रेडियोधर्मी पदार्थ शरीर में निम्न मार्गों द्वारा प्रवेश पा सकते हैं :

1) **अंतःश्वसन** : रेडियोधर्मी धूल, गैस अथवा वाष्प का सांस द्वारा शरीर में जाना,

2) **अंतर्ग्रहण** : संदूषित पानी पीने, संदूषित भोजन खाने इत्यादि से मुंह द्वारा रेडियोधर्मी पदार्थों का शरीर में प्रवेश,

3) **अवशोषण** : त्वचा अथवा घावों द्वारा रेडियोधर्मी पदार्थों का शरीर के अन्दर जाना।

आंतरिक संरक्षण उपाय रेडियोधर्मी पदार्थों के शरीर में प्रवेश मार्गों को अवरुद्ध करते हैं अथवा स्रोत और शरीर के मध्य के मार्ग में रुकावट डालते हैं। ये अवरोध स्रोत पर लगाये जा सकते हैं, उसे सील कर के, अथवा उसके पर्यावरण को पर्याप्त वायु के आवागमन और स्वच्छता अपना कर नियंत्रित किया जा सकता है, अन्यथा मानव शरीर पर अवरोधों का उपयोग किया जाता है, जैसे संरक्षण वस्त्रों तथा श्वसन यंत्रों के रूप में। ये तरीके अन्य उद्योगों में उपलब्ध होने वाले तरीकों जैसे ही है, परंन्तु परमाणु बिजली घरों में इन्हें अधिक सुचारु ढंग से उपयोग में लाया जाता है।

कार्य प्रणाली

भारतीय दाबित भारी पानी परमाणु बिजली घरों में अपनायी गयी कार्य प्रणाली के मुख्य अंग निम्न है :

1) कार्मिकों को विकिरण संरक्षण प्रशिक्षण, 2) बाह्य विकिरण मात्रा अल्प करने के उपाय, 3) रेडियोधर्मी पदार्थों

का शरीर में न्यूनतम प्रवेश,4) शारीरिक संदूषण की जांच एवं उसे दूर करना,5) विकिरण मात्रा की गणना,6) मानीटरन, 7) आपातकाल में पालन करने योग्य नियम।

विकिरण स्रोत नियंत्रण, संदूषण नियंत्रण, अवशेष का रखरखाव इत्यादि इन बिजली घरों की प्रमुख विशेषताएं हैं जो कार्मिकों के संरक्षण के लिए अपनायी जाती हैं। अंतर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोग तथा भारतीय परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद (AERB) द्वारा सुझायी गयी नीतियों का पालन भी किया जाता है।

योग्यता

परमाणु बिजली घरों में 18 वर्ष से कम आयु के व्यक्ति विकिरण संबंधी कार्य नहीं कर सकते। प्रत्येक कार्मिक का स्वस्थ होना तथा स्वास्थ्य संबंधी डाक्टरी प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना आवश्यक है।

प्रशिक्षण

विकिरण क्षेत्र में कार्य करने के लिए विकिरण संरक्षण ओरिंज पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण लेना अनिवार्य है। इस पाठ्यक्रम में विकिरण संबंधी जानकारी कार्मिक को दी जाती है तथा विकिरण के संभावित खतरों से उसे अवगत कराया जाता है। विकिरण क्षेत्र में कार्य प्रणाली, न्यूनतम प्राप्य विकिरण मात्रा, विकिरण संरक्षण के उपाय तथा सावधानियां, मानीटरिंग विधि, विकिरण मात्रा इकाई, विकिरण मापक यंत्र एवं उपकरण, संदूषण एवं उससे बचने के उपाय, आपातकाल में पालन करने योग्य नियम इत्यादि विषयों की जानकारी दी जाती है। साथ ही, विकिरण संबंधी शंकाओं एवं जिज्ञासाओं का समाधान भी किया जाता है। ओरिंज प्रशिक्षित कार्मिक स्वतंत्र रूप से काम नहीं कर सकता, उसे किसी ग्रीन प्रशिक्षित (विकिरण संरक्षण का सम्पूर्ण पाठ्यक्रम) व्यक्ति के निरीक्षण में कार्य करना होता है। ग्रीन प्रशिक्षित व्यक्ति कार्मिक की विकिरण मात्रा की गणना तथा आवश्यक संरक्षण उपाय एवं संरक्षण वस्त्रों तथा उपकरणों का प्रबंध करता है, वही उसे कार्य करने के निर्देश तथा सावधानियां भी समझाता है।

वर्क परमिट

विकिरण संबंधी कार्य करने से पहले विकिरण वर्क परमिट प्राप्त करना आवश्यक है। यह परमिट ग्रीन प्रशिक्षित व्यक्ति ही प्राप्त कर सकता है। स्वास्थ्य भौतिकी इकाई के सुपर वाइज़र इस पर विकिरण क्षेत्र संबंधी आवश्यक जानकारी दर्शाते हैं, तथा इस क्षेत्र में विकिरण संरक्षण हेतु आवश्यक उपकरण एवं वस्त्रों के विषय में निर्देश देते हैं, काम करने का समय एवं अन्य सावधानियां भी अंकित करते हैं। परमिट प्राप्तकर्ता इन निर्देशों को समझ कर उन्हें कार्यान्वित करता है। परमिट पर कार्मिक की पूर्व विकिरण मात्रा भी लिखी जाती है, जिससे वह अवगत होता है, तथा उसे मात्रानुसार उचित निर्देश दिये जाते हैं ताकि उसे नियत मात्रा से अधिक विकिरण मात्रा प्राप्त न हो। प्रत्येक व्यक्ति के लिए परमिट पर दिये गये निर्देशों का पालन करना आवश्यक है।

विकिरण मात्रा

विकिरण ऊर्जा का किसी भी माध्यम में अवशोषित होना विकिरण मात्रा अथवा अवशोषित विकिरण मात्रा कहा जाता हैं। इस मात्रा को अब ग्रे (विकिरण मात्रा इकाई) का नाम दिया गया है। एक जूल ऊर्जा के किसी माध्यम के एक किलोग्राम द्रव्यमान में अवशोषित होने को एक ग्रे कहा जाता है। विभिन्न प्रकार के विकिरणों से होने वाले जैविक प्रभाव विभिन्न होते हैं, अतः शरीर में एक जूल ऊर्जा प्रति किलो ग्राम से होने वाले विभिन्न प्रभावों की गणना करते हुए विकिरण मात्रा को सीवर्ट की संज्ञा दी गयी है।

प्रत्येक कार्मिक के लिए यह विकिरण मात्रा 5 मिली सीवर्ट (500 मिली रैम) मासिक निश्चित की गयी है। इस में बाह्य एवं आंतरिक उद्भासन, दोनों ही निहित हैं। योजना बद्ध कार्य में यह मात्रा उचित अधिकारी द्वारा दुगुनी, अर्थात 10 मिली सीवर्ट की जा सकती है। परमाणु बिजलीघर के कार्मिकों के लिए वार्षिक विकिरण मात्रा 50 मिली सीवर्ट है जोकि अंतर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोग के द्वारा सुझाया गया प्राथमिक मानक है। दैनिक वेतन के कार्मिकों के लिए वार्षिक विकिरण मात्रा 15 मिली सीवर्ट है। वार्षिक विकिरण मात्रा को दुर्घटना की स्थिति को छोड़कर, अन्य किसी भी अवस्था में बढ़ाया नहीं जा सकता। दुर्घटना की अवस्था में सम्पूर्ण जांच की जाती है।

विकिरण मात्रा मापकयंत्र

क) **बाह्य विकिरण मात्रा** : वैयक्तिक बाह्य विकिरण मात्रा जांचने के लिए दो प्रकार के उपकरणों को उपयोग में लाया जाता है :

i) डी. आर. डी. (डायरेक्ट रीडिंग डोजीमीटर), अर्थात प्रत्यक्षदर्शी विकिरण मात्रा मापक,

ii) टी. एल. डी. (थर्मोल्यूमिनिसेंट डोजीमीटर) अर्थात तापसंदीप्ति मात्रा मापक।

बिजली घर में जाते समय हर व्यक्ति को टी. एल. डी. बैज लगाना अनिवार्य है तथा हर बार बाहर जाते समय इसे निश्चित स्थान पर रख कर ही बाहर जाते हैं। यह बैज प्रत्येक उस कार्मिक को दिया जाता है जिसने विकिरण संरक्षण का न्यूनतम, औरेंज पाठ्यक्रम कर लिया होता है। प्रत्येक आगन्तुक दर्शक समूह को भी यह बैज लगाना आवश्यक होता है। दूसरे शब्दों में, इस बैज के बिना किसी भी व्यक्ति को बिजलीघर के प्रचालन द्वीप में प्रवेश करने की अनुमति नहीं है। यह बैज कमीज पर छाती के स्थान पर लगाया जाता है। इस बैज पर कार्मिक का नाम लिखा जाता है तथा उसका फोटो भी लगाया जाता है और इस बैज को एक विशिष्ट नम्बर दिया जाता है।

विकिरण क्षेत्र में कार्य करते समय टी. एल. डी. बैज के साथ-साथ, डी. आर. डी. का भी लगाना आवश्यक है। डी. आर. डी. और टी. एल. डी. छाती पर पास-पास लगाये जाते हैं ताकि दोनों में विकिरण मात्रा समान अंकित हो। डी. आर. डी. कार्मिक स्वयं पढ़ सकता है, परन्तु टी. एल. डी. प्रयोगशाला में परख कर विकिरण मात्रा की गणना की जाती है जिसे महीने में केवल एक बार पढ़ा जाता है। डी. आर. डी. जैसा कि नाम से स्पष्ट है, प्रत्येक कार्य के बाद अथवा जब भी आवश्यक हो पढ़ सकते हैं तथा विकिरण मात्रा का अनुमान लगा सकते हैं। कार्य के सुयोजन में डी. आर. डी. मुख्य भूमिका निभाता है। उसे वहीं पर ही लौटाया जाता है। इससे व्यक्ति को मिलने वाली विकिरण मात्रा की गणना तथा उसे सीमित रखने में सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त, विशिष्ट कार्यों में माथे अथवा कलाई पर लगाकर टी. एल. डी. तथा न्यूट्रॉन फिल्म का प्रयोग भी किया जाता है।

ख) **आंतरिक विकिरण मात्रा**: रेडियोधर्मी पदार्थ जब शरीर में प्रवेश कर जाते हैं तो वे शरीर को सारा समय विकिरण मात्रा देते रहते हैं। शरीर में इनकी मात्रा तथा स्थिति का अनुमान लगाना कठिन है, अतः इनसे विकिरण मात्रा आंकना भी कठिन है। दाबित भारी पानी बिजली घरो में आंतरिक उद्भासन का प्रमुख स्रोत ट्रीशियम है। ट्रीशियम जल वाष्प के रूप में पायी जाती है। रेडियो आयोडीन तथा अन्य रेडियोधर्मी कण भी पर्यावरण में पाये जा सकते हैं। ये शरीर में पहले बताये गये मार्गों द्वारा प्रवेश पा सकते हैं। रेडियोधर्मी कण श्वास द्वारा शरीर में प्रवेश न करें, इसके लिए ओरोनासल (श्वसनयंत्र) का प्रयोग करते हैं तथा आयोडीन को रोकने के लिए विशेष चारकोल फिल्टर वाले श्वसनयंत्र का प्रयोग करते हैं। (चित्र-1) यदि ये कण हवा में अधिक मात्रा में हों, तो स्वच्छ वायु श्वसन यंत्र (एयर लाइन) का प्रयोग करते हैं।

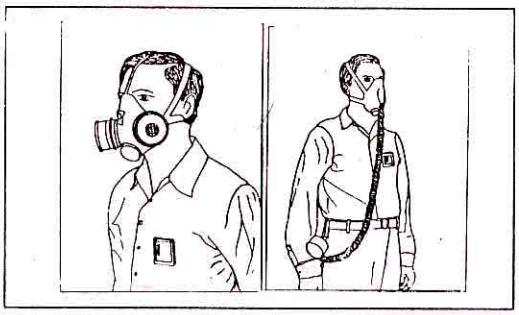

चित्र-1 : श्वसन यंत्र
क) कण छानक ख) एयर लान मास्क

ट्रीशियम संरक्षण

कम ट्रीशियम वाले वातावरण में कम समय के कार्य हेतु ट्रीशियम बोतल का उपयोग किया जाता है। मध्यम मात्रा वाले वातावरण में एअर लाइन श्वसनयंत्र का प्रयोग किया जाता है तथा अधिक ट्रीशियम की उपस्थिति में प्लास्टिक सूट का प्रयोग करते हैं (चित्र - 2) । श्वसनयंत्र प्रयोग में लाने से पहले परख लिये जाते हैं। ट्रीशियम बोतल 4-5 बार स्वच्छ पानी से धोते हैं। प्लास्टिक सूट को शुद्ध वायु की लाइन से जोड़ते हैं तथा हुड का प्रयोग भी करते हैं, तभी ट्रीशियम से उत्तम संरक्षण मिलता है।

प्लास्टिक सूट निकालते समय सबसे पहले हुड निकालकर एअरलाइन श्वसनयंत्र लगाते हैं। फिर, दस्ताने बदलकर प्लास्टिक सूट उल्टा उतार कर एक बैग में बंद कर

(शेष पृष्ठ 53 पर)

कोबाल्ट-60 से दूर चिकित्सा में विकिरण संरक्षण

सुनील कंठ मिश्र
संत तुकाराम चिकित्सालय एवं
आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र,
अकोला (महाराष्ट्र)

भारत जैसे विकासशील देश में कोबाल्ट-60 से दूर-चिकित्सा कर्करोग की रोकथाम का एक कारगर साधन सिद्ध हुई है। पिछले कुछ वर्षों से विकसित देशों में रैखिक त्वरकों का विकिरण दूर-चिकित्सा में उपयोग लोकप्रिय हुआ है, लेकिन इन दिनों वहाँ भी कोबाल्ट-60 दूर-चिकित्सा पर पुनर्विचार हो रहा है। पुनर्विचार के कारणों में सिर्फ आर्थिक कारण ही नहीं, बल्कि कोबाल्ट - 60 का कर्क रोगियों की चिकित्सा में सफल साधन सिद्ध होना भी है, साथ ही रोगी को जब चिकित्सा की आवश्यकता होती है, तब उसे इस सुविधा से चिकित्सा मिलने की संभावना, रैखिक त्वरकों की तुलना में अधिक है। परन्तु जहां कोबाल्ट - 60 दूर-चिकित्सा सुविधाओं में वृद्धि हो रही है, वहीं विकिरण स्वस्थ मनुष्य में कर्क रोग का कारण भी हो सकता है। इसे ध्यान में रखते हुए इस सुविधा में कार्यरत कर्मचारियों, चिकित्सालय में कार्यरत अन्य कर्मचारियों और आम जनता की विकिरण सुरक्षा की ओर ध्यान देना अत्यावश्यक हो जाता है।

विकिरण संरक्षण का मूल सिद्धांत है - विकिरण मात्राएँ कम से कम होनी चाहिए जो कि आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से तर्कसंगत साध्य हों। विकिरण संरक्षण में (1) रोगी का, (2) सुविधा से संबंधित कर्मचारियों का, (3) चिकित्सालय के अन्य कर्मचारियों का, और (4) आम जनता का विकिरण संरक्षण सम्मिलित है। इसे ध्यान में रखते हुए इस सुविधा में निम्नलिखित उपायों द्वारा विकिरण संरक्षण साध्य किया जा सकता है :

(1) कोबाल्ट-60 यंत्र का ढाँचा (विशेष कर ट्रीटमेन्ट हेड का ढाँचा और बनावट)

(2) चिकित्सा कक्ष का ढाँचा और बनावट

(3) विकिरण सुरक्षा उपकरणों तथा संबन्धित कर्मचारियों द्वारा परसोनेल मॉनिटरिंग फिल्म बॅजेस का उपयोग

(4) नित्य कार्य पद्धति और

(5) संबंधित कर्मचारियों का प्रशिक्षण।

इस लेख का उद्देश्य पहिले तीन उपायों की चर्चा नहीं है। फिर भी, हमारी सुविधा के मूल ढाँचे में तथा गामा जोन मॉनिटर में किये गये परिवर्तनों का यहां उल्लेख प्रासंगिक है।

हमारे चिकित्सालय में हमने रोगी का मॉनिटरन करने हेतु लेड इक्विवेलेन्ट व्यूइंग विंडो की बजाय C. C. T. V. प्रणाली को चुना। इसके मुख्य कारण थे - (1) नियंत्रण कक्ष में व्यूइंग विंडो के कारण विकिरण मात्रा का बढ़ना, (2) इस विशेष कांच का आयात और इस कारण उसका विकल्प C.C.T.V. प्रणाली से मंहगा हो जाना, (3) निर्माण कार्य के दौरान या भविष्य में भी इस कांच में दरार पड़ने या फटने से नियंत्रण कक्ष में विकिरण मात्रा के एकदम बढ़ जाने की संभावना। C.C.T.V. कैमरे को इस प्रकार लगाया गया है कि ट्रीटमेन्ट हेड और रोगी, यंत्र के प्रत्येक दिक्वलन में लगातार व्हिडियो मॉनिटर पर दिखें। C.C.T.V. के बिगड़ जाने की स्थिति में चिकित्सा कक्ष के दरवाजे में स्थित पीपिंग विन्डो कक्ष में रखे दो दर्पणों की सहायता से रोगी को तथा यंत्र को मॉनिटर किया जा सकता है।

हमने गामा जोन मॉनिटर में परिवर्तन करके उसका अलार्म और रिसेट स्विच नियंत्रण कक्ष में रखा है, जिससे किसी आपात स्थिति (विकिरण सोर्स का चिकित्सा समाप्त होने पर भी ऑफ स्थिति में नहीं जाना) का ज्ञान तकनिशयन को नियंत्रण कक्ष में हो जाए। चिकित्सा कक्ष में इस मॉनिटर को इस तरह लगाया गया है कि उसके मीटर की रीडिंग चिकित्सा कक्ष के दरवाजे में स्थित पीपिंग विन्डो से देखी जा सके और आपात स्थिति की गंभीरता का ज्ञान हो सके।

इस सुविधा के संदर्भ में गौर करना चाहिए कि यहां विकिरण को क्ष-किरण यंत्र या रैखिक त्वरकों के विकिरणों की तरह बिलकुल समाप्त नहीं किया जा सकता, बल्कि ट्रीटमेन्ट हेड से विकिरण का रिसाव लगातार होता है और इस के

अतिरिक्त, सोर्स के चिकित्सा समाप्त होने पर, सुरक्षित "स्थिति में ठीक से न पहुंचने की संभावना भी रहती है। इस स्थिति को आपात स्थिति कहते हैं। तकनिशियन तथा संबंधित कर्मचारियों को मिलने वाली विकिरण मात्रा का सर्वाधिक भाग रोगी को चिकित्सा स्थिति में स्थिर करते समय ट्रीटमेन्ट हेड से होने वाले रिसावी विकिरणों से मिलता है। इन विकिरण मात्राओं और आपात स्थितियों को रोकने में नित्य कार्यपद्धति और सम्बन्धित कर्मचारियों का प्रशिक्षण विशेष महत्व रखते हैं। इससे विकिरण सुरक्षा के अन्य उपायों को भी मॉनिटर किया जा सकता है।

नित्य कार्य पद्धति

नित्य कार्यपद्धति में निम्नलिखित मुद्दों को सम्मिलित किया जाना चाहिए :

(1) सामयिक डोसीमीट्री, अचूक भौतिक आंकड़ों का पाना, रोगी का चिकित्सा स्थिति में सही और अचूक स्थिरीकरण, रोगी का स्थायीकरण आदि रोगी की विकिरण सुरक्षा के लिए तथा अच्छी दूर-चिकित्सा के लिए आवश्यक है। नियमित डोसीमीट्री से सोर्स की पूर्णतः ऑन ऑफ स्थिति पर भी नजर रखी जा सकती है।

(2) सामयिक विकिरण सर्वेक्षण और उनका रिकार्ड रखना शील्डिग की पर्याप्तता और उन पर मॉनिटरन करने का उपयुक्त उपाय है। इसमें ट्रीटमेन्ट हेड से होने वाले रिसावी विकिरण का सर्वेक्षण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इस सर्वेक्षण से सोर्स हेड पर किसी 'स्पॉट', जहाँ से अधिक विकिरण का रिसाव हो रहा हो, का पता लगाया जा सकता है तथा तदनुसार तकनिशियन को हिदायतें दी जा सकती हैं, जिससे उसे रोगी को स्थिर करते समय न्यूनतम विकिरण मात्रा मिले। हमने दैनिक कार्य में परसोनेल मानिटरिंग बैजेस के साथ-साथ जेबी डोसीमीटर का प्रयोग करने की दिशा में भी कदम उठाये हैं। हम ऐसी सहायक प्रणाली भी बना रहे हैं जिससे रोगी के स्थिरीकरण में समय कम लगे और दूरचिकित्सा की अचूकता भी बढ़े।

(3) कोबाल्ट-60 यंत्र की निर्दोषिता और कार्य सुचारुता की दैनिक जाँच रोगी, टेकनिशियन और संबंधित कर्मचारियों के विकिरण संरक्षण के लिए अत्यावश्यक है। इस जाँच से किसी भी प्रकार की आपातस्थिति की संभावना कम की जा सकती है, जैसे ट्रीटमेन्ट टाईमर और दाब का सीधा सम्बन्ध सोर्स ड्राइवर की गति से है, इसलिए इनकी नियमित जाँच अत्यावश्यक है। साथ ही, विकिरण संरक्षण उपकरणों की कार्य सुचारुता भी उतनी ही आवश्यक है। हमने इसी को ध्यान में रखते हुए अपने चिकित्सालय मे कोबाल्ट 60 यंत्र के ऑपरेटर्स मॅनुअल का आधार लेते हुए तथा दैनिक विकिरण संरक्षण, साथ ही साथ यांत्रिक और विद्युत अपघात से सुरक्षा का ध्यान रखते हुए, कुछ मदों की दैनिक जाँच तालिका बनायी है। यह जाँच प्रतिदिन चिकित्सा के लिए रोगी लेने से पहिले की जाती है।

इन मदों की जाँच के विवरण के लिए एक हस्तपुस्तिका बनाई गई है। जाँच तालिका निम्नलिखित सारणी में दी है :

कोबाल्ट-60 दूर चिकित्सा हेतु दैनिक जाँच तालिका

1. मास्टर स्विच
2. रिसेट स्विच
3. गामा जोन मॉनिटर (रिसेट करें, यदि अलार्म बंद नहीं होता हो, तब हस्त पुस्तिका देखें)
4. C. C. T. V. व्हिडिओ मॉनिटर
5. ट्रीटमेन्ट इंडीकेटर लैंप्स (कंट्रोल पॅनेल, चिकित्सा कक्ष के दरवाजे पर)
6. एमर्जेन्सी स्टाप स्विच (बार) (कन्ट्रोल पॅनेल पर)
7. ट्रीटमेन्ट टाईमर (कम्प्रेसर के रुक जाने पर)
8. थैरेपी यूनिट मॉनिटर
9. डोअर इन्टरलॉक्स
10. सोर्स ड्राइवर की गति
11. सोर्स सूचक दंड (ट्रीटमेन्ट हेड पर)
12. T - दंड की नियंत्रण कक्ष में उपलब्धता
13. ऑपरेटर मॅन्युअल की नियंत्रण कक्ष में उपलब्धता
14. सर्वे मीटर की नियंत्रण कक्ष में उपलब्धता तथा उसकी कार्य सुचारुता

15. सभी सम्बन्धित कर्मचारी परसोनेल मॉनिटरिंग बॅजेस पहने हैं
16. कोच की ऊपर/नीचे की गति
17. कोच की ट्रान्सवर्स गति
18. कोच का रोटेशन लॉक
19. कोच का लेटरल मोशन लॉक
20. कोच पेडेस्टल लॉक
21. कोच पर स्थित इमर्जेन्सी बार
22. आप्टीकल डिस्टेन्स इन्डीकेटर
23. फील्ड इन्डीकेटर लाइट
24. फील्ड साईज सेन्टर की स्थिरता
25. गन्त्री की गति
26. गन्त्री पर लगे इन्डीकेटर लैम्प
27. आयसोसेन्टर की स्थिरता
28. बैंक पाईंटर
29. एक्सेसरी रेल्स
30. दाब

इस तालिका में मदों को इस प्रकार क्रमान्वित किया गया है कि जिससे यंत्र को ऑन करने पर किसी प्रकार का सोर्स मोशन हो, तो उसे नियंत्रण कक्ष में ही ज्ञात कर लिया जाय और चिकित्सा कक्ष विकिरण की दृष्टि से सुरक्षित होने का विश्वास कर लेने पर ही चिकित्सा कक्ष के अंदर जाकर यंत्र की जाँच की जाए। हमने देखा कि प्रतिदिन इन जाँचों पर 20 मिनट से अधिक समय नहीं लगता। इन जाँचों के दौरान तकनिशयनों को साथ रखा जाता है, जिससे उनकी विकिरण संरक्षण और यंत्र के बारे में जानकारी बढ़े।

(4) विकिरण संरक्षण और यंत्र की कार्य सुचारुता के लिए यंत्र निर्माता द्वारा दी गयी हिदायतों का पालन करना भी दैनिक कार्य पद्धति का महत्वपूर्ण अंग है। हमारे चिकित्सालय में ली जाने वाली सावधानियों में कुछ महत्वपूर्ण सावधानियां निम्नलिखित हैं :

(i) यंत्र से कोच के नीचे से दी जानेवाली चिकित्सा के दौरान चिकित्सा हेड में कुछ न गिरने देने की सावधानी (विशेषतः रोगियों को कोच के नीचे से चिकित्सा देते समय एक पतले प्लास्टिक पेपर को उनके नीचे रखना)।

(ii) चिकित्सा कक्ष में प्रत्येक चिकित्सा के बाद, प्रवेश करने से पहले व्हिडियो मॉनिटर पर सोर्स दंडक ट्रीटमेन्ट हेड पर दिखायी नहीं दे रहा है, यह विश्वास कर लें और रिसेट करने पर गामा जोन मॉनिटर पीं-पीं नहीं कर रहा है।

(iii) रोगी के साथ आये संबंधियों, भेंट करने वाले लोगों, व आम जनता को नियंत्रण कक्ष और चिकित्सा कक्ष में प्रवेश से रोका जाता है।

(iv) रोगी के स्थिरीकरण और प्लॉनिंग पर लम्बी चर्चा चिकित्सा कक्ष में प्रोत्साहित नहीं की जाती।

(5) सुविधा से संबंधित कर्मचारियों का प्रशिक्षण और उनके दैनिक कार्य का मॉनिटरिंग भी दैनिक कार्यपद्धति का ही अंग है। प्रशिक्षण में सबसे महत्वपूर्ण है कि वे आपातकालीन कार्यविधि से परिचित हों, जिसमें इस स्थिति को निश्चित करना और तदनुसार कदम उठाना सम्मिलित है।

निष्कर्ष

हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कोबाल्ट-60 दूरचिकित्सा सुविधा में, नित्य कार्यपद्धति विकिरण संरक्षण उपायों में एक महत्वपूर्ण उपाय है। कोबाल्ट यंत्र की निर्दोषता व कार्य सुचारुता, विकिरण सुरक्षा यंत्रों की निर्दोषता और कार्य सुचारुता की विकिरण संरक्षण में मुख्य भूमिका है और इनकी दैनिक जाँच दैनिक कार्यपद्धति का हिस्सा होनी चाहिए। यंत्रों की निर्दोषता और कार्य सुचारुता, नियमित रखरखाव से साध्य होती है। इससे सुविधा की कार्यक्षमता बढ़ती है तथा सुविधा में किसी भी समय रोगी को चिकित्सा मिलने की संभावना अधिक हो जाती है। इस लेख में चर्चित उपाय अन्य ऐसी ही सुविधाओं के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

• • •

होगी कितनी प्रभावकारी संभावित विकिरण आपातकाल से निपटने की हमारी तैयारी

मेघ सच्चदेव
स्वास्थ्य भौतिकी इकाई
राजस्थान परमाणु बिजलीघर
अणुशक्ति (कोटा) - 323 303

राष्ट्रीय स्तर, प्रांतीय स्तर, स्थानीय स्तर
तीन स्तरीय है हमारी
संभावित विकिरण आपातकाल से
उबरने की हमारी तैयारी
देश विस्तृत
विभिन्न अंचलों में
परमाणु बिजलीघर स्थापित
उनसे संबंधित
आपातकाल का अवलोकन
करे राष्ट्रीय कमेटी
प्रांत के विभिन्न
विभागों का तालमेल
बैठाती प्रान्तीय कमेटी
सुरक्षा उपायों को कार्यान्वित करेगी
स्थानीय कमेटी

परमाणु बिजलीघर के चारों ओर
सोलह किलोमीटर का घेरा
बांटा गया है चार वृत्तीय क्षेत्रों
और सोलह सेक्टरों में
एक दशमलव छह किलोमीटर का
जन-शून्य क्षेत्र
है प्लांट के अधिकारों में
पांच किलोमीटर तक नये विकास
नयी जनसंख्या पर पाबन्दी
आठ किलोमीटर का क्षेत्र
रेडियो मेघ से प्रभावित
होने की संभावना
सोलह किलोमीटर तक
रेडियोधर्मी पदार्थों के
पृथ्वी तल तक आने की संभावना
संभावित विकिरण मात्रानुसार
किये जाएंगे उपाय उपचार

आश्रय देंगे आयोडीन स्थाई
या फिर विस्थापन्न अस्थाई
पशु एवं जन साधारण
पूर्ण रक्षित होंगे सम्पत्ति जीवन

कार्यरत होगी सुरक्षा योजना
स्थानीय स्तर पर
अधीक्षक की सलाह पर
निर्देशक के निर्देश पर
योजना में संलग्न विभाग अनेक
पुलिस, यातायात, चिकित्सा, वन
विद्युत, जनसिंचाई, राशन
सुरक्षा, अग्निशमन, पशुधन
अन्य कई विभाग
लिए स्थानीय प्रशासन साथ

टेलीफोन वायरलेस
अपना काम कर जाएंगे
तभी संदेश
सभी को दे पाएंगे
अधिकारी आएंगे दूर शहर से
मिल पाएंगे तो पहुंचेंगे देर से
तब तक निर्णय का
अवसर निकल चुका होगा
आपातकाल अपना
कुचक्र चला चुका होगा

एक दृश्य अभ्यास का

महीनों पहले तैयारी होती
अधिकारी मिलते सभा होती
कार्य बँटते कार्यवाही होती
उनके शब्दों में तैयारी पूरी होती
सब वस्तुएं सब उपकरण
सब योजनाएं सब पद्धतियाँ
जांची जातीं परखी जातीं
और तैयारी पूर्ण हो जाती
स्टेशन से सूचना प्रसारित होती
कार्मिक एकत्र होते गणना होती
अधिकारियों तक सूचना
पहुंचाने के प्रयास होते
टेलीफोन न मिलता कभी
टेलेक्स वायरलेस शांत होते
हाट लाइन भी बेकार
बार-बार प्रयत्न होते
कहीं कोई अधिकारी मिल पाता
शायद सूचित सूचना से
तब वह सूचित हो पाता
देता अपने कनिष्ठों को
कई आदेश निर्देश
(जो पहले से होते ज्ञात)
मँगवाता पहले से ही तैयार
जीप अथवा कार
आपातकाल केन्द्र की ओर
फिर करता प्रस्थान
कितने समय में पहुँच पाता
स्वयं आप लगाएं अनुमान
स्थानापन्न के लिए
पहले से सूचित
बुलाई बसों का
विलम्ब से आना
कारण डीजल उपलब्ध न होना
चालक का मार्ग से अनभिज्ञ होना
सायंकाल संवाददाता सम्मेलन होता
औपचारिकताएं पूरी होतीं
पारस्परिक धन्यवाद प्रशंसा प्रस्तुत होती

कुछ रपटें बनतीं
चर्चा होती समीक्षा होती
इस प्रकार आपातकाल
अभ्यास प्रक्रिया सम्पूर्ण होती
ढाक के तीन पात की भांति
हर बार तैयारी सम्पूर्ण होती

थ्री माइल और चेरनोबिल
हैं बींधते हमारा दिल
होगी कितनी प्रभावकारी
आपातकाल से लड़ने की
हमारी तैयार योजना सारी
क्या टेलीफोन मिल पाएंगे ?
क्या गाड़ियां दिला पाएंगे ?
क्या अधिकारी आ पाएंगे ?
क्या जनता को बचा पाएंगे ?
हैं बत्तीसों एजेंसी
इसमें कार्यशील (लिप्त)
कौन करेगा काम ?
साझे बाप के कफन को
न देते बच्चे अन्जाम
जैसे दो मुल्लाओं में
हो जाती मुर्गी हराम
भूखी सोती सौ सुपुत्रों की माता
शायद खाना पाती एक कुपुत्र की माता
क्या बन नहीं सकता
एक छोटा नन्हा सा प्लान
जिसे दिया जा सके सुविधापूर्वक
आनन फानन में अंजाम

• • •

(पृष्ठ 48 से आगे)

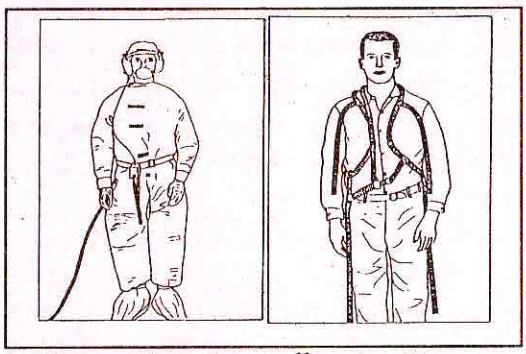

चित्र-2 : क) वायु वितरक हार्नेस ख) प्लास्टिक सूट

देते हैं। यदि कोई अन्य कार्मिक प्लास्टिक सूट उतारने में सहायता करे, तो उसे भी एअरलाइन श्वसनयंत्र तथा दस्तानों का प्रयोग आवश्यक है।

शरीर में पहुँची ट्रीशियम की मात्रा आंकने के लिए मूत्र का नमूना दिया जाता है। शरीर में प्रविष्ट अन्य रेडियोधर्मी पदार्थों को आंकने के लिए संपूर्ण काया गणित्र (होल बाडी काउंटर) का प्रयोग किया जाता है।

संदूषण क्षेत्र

उपकरणों अथवा स्थलपर रेडियोधर्मी पदार्थों का अवांछनीय लग जाना अथवा चिपक जाना संदूषण कहलाता है। संदूषण कई प्रकार से फैलता है। संदूषित वस्तुओं के सम्पर्क से हमारा शरीर तथा वस्त्र संदूषित हो जाते हैं और आवागमन से संदूषण सर्वत्र फैल सकता है। इससे कार्मिकों को अवांछनीय विकिरण मात्रा प्राप्त होती है, अतः संदूषण को फैलने से रोकने के प्रयास किये जाते हैं।

संदूषित क्षेत्र को लाल फीते से घेर लेते हैं तथा संकेत-पट पर संदूषण संबंधी जानकारी अंकित कर दी जाती है। इस क्षेत्र में कार्य सीमित, या फिर जहां संदूषण प्रसार की संभावना हो, वहां पर रबर स्टेशन स्थापित कर दिया जाता है ताकि इस क्षेत्र में आना जाना नियंत्रित किया जा सके। रबर स्टेशन ही इस क्षेत्र का प्रवेश एवं निकास द्वार होता है। कार्य समाप्ति पर रबर स्टेशन के बाहर लगाये गये विकिरण उपकरणों पर संदूषण की जांच कार्मिक स्वयं करता है। संदूषित पाये जाने की स्थिति में वह स्वयं संदूषण दूर करता है तथा बिजलीघर छोड़ने से पूर्व, मानीटरन कक्ष में संदूषण की जांच करता है। संदूषण का प्रसार रोकने के लिए बिजलीघर को चार भागों (क्षेत्रों) में विभक्त किया गया है, जिन्हें क्षेत्र-1, 2, 3, तथा 4 कहते हैं। जब भी कार्मिक क्षेत्र 4 से 3 की ओर या 3 से 2 और 2 से 1 की तरफ जाते हैं, तो उन्हें संदूषण की जांच करनी आवश्यक होती है। इसी प्रकार, उपकरण ले जाते समय भी संदूषण की जांच की जाती है। इन क्षेत्रों की सीमाओं पर विकिरण उपकरण उपलब्ध कराये गये हैं।

इस कार्य प्रणाली को अपनाकर परमाणु बिजली घरों में संदूषण प्रसार पर नियंत्रण रखा जाता है तथा कार्मिकों को प्राप्त विकिरण मात्रा भी नियंत्रित एवं न्यूनतम रखी जाती है।

• • •

ईंधन पुनर्संसाधन तथा अपशिष्ट पदार्थ संसाधनों में विकिरण संरक्षण

गोपाल शंकर जौहरी
स्वास्थ्य भौतिकी प्रभाग
भा.प.अ.केंन्द्र, बम्बई - 400 085.

नाभिकीय भट्टी से निकाले गये ईंधन में से शेष ईंधन (यूरेनियम), भट्टी में उत्पन्न प्लूटोनियम तथा अनेक अतिविकिरणशील विखंडन पदार्थों को रासायनिक क्रियाओं द्वारा एक दूसरे से अलग करने और परिमार्जित कर शुद्ध रूप में प्राप्त करने को ईंधन पुनर्संसाधन कहा जाता है। संपूर्ण ईंधन चक्र में यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण चरण है जो विशेष संस्थानों में सम्पन्न किया जाता है। इस चरण में अलग किये गये उच्च स्तरीय अपशिष्ट द्रव भी विशेष संयंत्र में ठोस रूप में परिवर्तित किये जाते हैं। हमारे देश ने इन कार्यविधियों में पर्याप्त दक्षता प्राप्त कर ली है। इन संयंत्रों का निर्माण, प्रचालन व रख-रखाव अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय स्तर के सुरक्षा मापदंड व नियमानुसार किया जाता है। कार्मिकों की विकिरण उद्भासन मात्रा को सीमा के भीतर रखा जाता है।

कार्यविधि

सरल रूप से कहें, तो ईंधन पुनर्संसाधन संयंत्र विकिरण रासायनिक कार्यशाला है, जहां ठोस नाभिकीय ईंधन को नाइट्रिक अम्ल में घोला जाता है। फलतः यूरेनियम, प्लूटोनियम और विविध विखंडन उत्पाद द्रव नाइट्रेट रूप में आ जाते हैं। अगले चरणों में यूरेनियम, प्लूटोनियम को विखंडन उत्पादों, जैसे स्ट्रान्शियम, सीजियम, सीरियम इत्यादि से अलग कर के उनका परिमार्जन व शोधन किया जाता है। द्रव विखंडन उत्पादों को सान्द्र करके कुछ वर्ष टंकियों में भंडारित करने के बाद, एक अलग संयंत्र में ठोस पदार्थों में परिवर्तित किया जाता है। इन सब चरणों में निम्न स्तर के विकिरणशील अपशिष्ट पदार्थ भी प्राप्त होते हैं। सभी संयंत्रों को नियंत्रण कक्ष से चलाया जाता है। इन संयंत्रों के निर्माण के समय अचल व स्थाई सुरक्षा साधनों पर बल दिया जाता है। मुख्य उद्देश्य यह रहता है कि कार्मिक विकिरणशील पदार्थ के संपर्क में न आयें। एक से दो मीटर मोटी कंक्रीट की विकिरण अवरोधक दीवारें, लोहे व सीसे-कांच की खिड़कियां, पदार्थों को वातावरण की अपेक्षा कम दबाव में रखना, वातायन, उत्तम स्तर के वायुछानक, हवा को चिमनी द्वारा फेंकने वाले पंखे, सुरक्षा के यंत्र, द्रव तथा गैस को अतिउत्तम स्तर से छाजना इत्यादि, से कार्मिकों तथा पर्यावरण की सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं। साथ ही, काम व रख-रखाव के समय दूरी से काम करने वाले अनेक यंत्र तथा रोबोटों का प्रयोग निरंतर बहुलता से किया जाता है।

स्वास्थ्य सुरक्षा कार्यनियम

नाभिकीय क्षेत्र में विश्व के प्रत्येक प्रगतिशील देश के अनुरूप भारत में भी विकिरण मात्रा के मापदंड व सीमाएं है। यह नियम परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद व सारकोप द्वारा निर्धारित किये जाते हैं तथा अन्तर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण आयोग की सिफारिशों पर आधारित हैं। ये सीमाएं मानक हैं, तथा विकिरण मात्रा को इन सीमाओं के अन्दर रखना हर संयंत्र चालक की जिम्मेदारी है। स्वास्थ्य भौतिकी विभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के वैज्ञानिक इन संयंत्रों में विकिरण मात्रा को इन सीमाओं के अंदर रखने में सहायता करते हैं। इस प्रकार के संयंत्र में लगभग बीस सदस्य स्वास्थ्य भौतिकी प्रभाग के होते है। विकिरण के स्तर को तथा वायु में आये रेडियोधर्मी पदार्थों को मापना, कार्मिकों की विकिरण मात्रा को मापना, पर्यावरण में छोड़े गये विकिरण पदार्थों की माप व गणना, सब विकिरण स्रोतों की सुरक्षा की जांच, मात्रा-रिकार्ड रखना, विकिरणशील पदार्थों के आवागमन में सुरक्षा प्रदान करना, इत्यादि इन वैज्ञानिकों का उत्तरदायित्व है। संयंत्र द्वारा प्रस्तावित नयी योजनाओं की सुरक्षा संबंधी राय देना भी इनका कर्तव्य है।

विकिरण का संसूचन केवल उपयुक्त यंत्रों द्वारा किया जा सकता है। इसके मापन व गणना आदि के लिए लगभग 70-100 विविध प्रकार के उपकरण इस प्रकार के संयंत्र में हर समय चालू रहते हैं। स्थिर उपकरण अलग-अलग कार्यस्थलों की विकिरण स्थिति की सूचना स्थानीय तथा केन्द्रीय नियंत्रण कक्ष में हर समय देते रहते हैं। यंत्रों में अलार्म की सुविधा होने के कारण विकिरण स्थिति बदलने पर तुरंत सूचना मिलती है। विभिन्न उपकरणों की विविधता निम्नलिखित है :

हाथ में ले जाने वाले बैटरी पर चलने वाले यंत्र, शरीर पर पहनने वाले छोटे तापसंदीप्ति मात्रामापी (टी.एल.डी.) बैज व पेन्सिल मात्रामापी, हवा, ठोस कण व द्रव के नमूने प्राप्त करनेवाले उपकरण, उक्त नमूनों में विकिरण की माप व गणना करनेवाले उपकरण, शरीर, कपड़ों व जूतों पर विकिरण मापक यंत्र, इत्यादि।

विकिरण संरक्षण की कार्यविधियां

विकिरणशील पदार्थ मानव को दो प्रकार से प्रभावित करते हैं,

(1) जब पदार्थ शरीर के बाहर हो, और

(2) जब पदार्थ किसी मार्ग से शरीर के अंदर पहुंच जाए।

पहली स्थिति में, केवल भेदक क्षमतावाली किरणें मुख्य हैं, तथा दूसरी स्थिति में, अल्फा कण देनेवाले पदार्थ आंतरिक प्रभाव की दृष्टि से विशेष महत्व रखते हैं। इस प्रकार, मोटे तौर से सुरक्षा की भूमिका निश्चित की जा सकती है। संरक्षण का मुख्य उद्देश्य है कि परमाणु ऊर्जा का अधिकाधिक लाभ लेते हुए विकिरण से हानि की संभावना निम्नतम हो। अभिकल्पना में लगाये गये सुरक्षा साधनों के अलावा, अन्य सरल विधियां जो सरलता से विकिरण मात्रा कम करने में सहायक हैं, निम्नलिखित हैं:

विकिरण स्रोत को उनकी मात्रानुसार उचित अवरोधक के भीतर रखा जाता है जिससे बाहर काम करनेवाले कार्मिकों को वार्षिक मात्रा सीमा का एक अंश ही मिले। रख-रखाव के दौरान ऐसी स्थिति हमेशा ही नहीं रहती। ऐसे में तीन विधियों को प्रयोग किया जाता है, (1) कार्यकाल का समय (2) स्रोत से दूरी और, (3) अवरोधकता।

(1) मात्रा और कार्यकाल में सीधा संबंध है। अतः, किसी विशेष मात्रा-दर पर कार्यकाल का समय नियंत्रण कर के मात्रा को सीमा के भीतर रखा जाता है। इसके साथ शरीर पर ऐसा मात्रामापी पहना जाता है जो पूर्वनिश्चित मात्रा जमा होने पर ध्वनि/प्रकाश संकेत देता है। अक्सर एक कार्य को पूरा करने के लिए अनेक कार्मिकों की आवश्यकता होती है।

(2) विकिरण की मात्रा दूरी के अनुसार तेजी से घटती है। यदि स्रोत को एक बिंदु में केंद्रित मान लें, तो विकिरण स्तर दूरी के वर्ग के अनुलोमानुपात में घटता जाता है। अतः, लम्बे हैंडल वाले औजारों का प्रयोग तथा काम को दूर से निरीक्षण करने से कार्मिक विकिरण क्षेत्र में कार्य कर पाता है।

(3) स्थाई अवरोधकों के अतिरिक्त, रख-रखाव के समय अस्थाई शील्डिंग को कार्मिक व स्रोत के बीच रखने से मात्रा कम होती है। उदाहरणतया, कंक्रीट/सीसे की ईंटें, सीसे की ऊन के कंबल या लोहे की चादरें, गामा व बीटा किरणों से उचित बचाव प्रदान करते हैं। इन साधनों की विशेषता यह है कि ये आवश्यकतानुसार लगाये और हटाये जा सकते हैं।

आंतरिक मात्रा को कम करने में मुख्यतः स्रोत को खुला नहीं रखा जाता, जिससे वह कार्मिक की श्वास द्वारा उसके शरीर में न जा सके। संयंत्र अभिकल्पना में हवा का ऋणात्मक दबाव, वातायन, स्रोत परिसीमन, वायु का चलायमान बदलाव आदि जोड़ देने से वायु संदूषण की संभावना कम हो जाती है। रखरखाव के दौरान श्वास लेने में बचाव (ब्रीदिंग प्रोटेक्शन) के साधन प्रयोग किये जाते हैं। बाह्य संदूषण से बचाने के लिए पतले प्लास्टिक के बने वस्त्र तथा हवा छाजने वाले मास्क तथा शुद्ध वायु प्रदान करने वाले विविध श्वासकों का प्रयोग आंतरिक विकिरण हानि की संभावना से बचाता है।

इस प्रकार, उपर्युक्त सरल व सस्ती विधियों के मिले-जुले प्रयोग से विकिरण संरक्षण का कार्य सुचारु रूप से किया जाता है। • • •

"वैज्ञानिक" का शुल्क

पाठकों से अनुरोध है कि यदि उनका "वैज्ञानिक" का शुल्क समाप्त हो गया हो, तो उसे भेज कर इसका नवीनीकरण करा लें। "वैज्ञानिक" के लिफाफे पर शुल्क सम्बन्धी जानकारी दी जाती है। यदि सम्भव हो तो आजीवन सदस्य बन जाएँ।

— संपादक

अपशिष्ट नाभिकीय ईंधन - विकिरण संरक्षण

दिलीप भाटिया
अभियंता, ईंधन भरणीय अनुभाग,
रा.प.बिजलीघर, अणुशक्ति-323 303 (कोटा)

राजस्थान परमाणु बिजलीघर की इकाई 1 एवं 2 में रिएक्टर से अपशिष्ट ईंधन निकालकर नवीन ईंधन भरने की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। विद्युत उत्पादन जारी रखते हुए ईंधन भरणीय संयंत्र द्वारा यूरेनियम डाई- आक्साइड ईंधन डाला जाता है। वर्तमान क्षमता पर औसत 400 ईंधन गट्ठे प्रति माह दोनों रिएक्टरों से निकाले जाते हैं। ईंधन स्थानान्तरण संयंत्र द्वारा इन्हें ईंधन संग्रहागार में भेजा जाता है। रिएक्टर से निकला हुआ ईंधन गर्म व रेडियोसक्रिय होता है, अतः स्थानान्तरण व संग्रहागार में इसकी शीतलता बनाये रखना आवश्यक है। हर कदम पर अपशिष्ट ईंधन से विकिरण संरक्षण भी अत्यन्त आवश्यक है।

अपशिष्ट नाभिकीय ईंधन, साधारणतया दो ईंधन गट्ठे एक-साथ एक से दूसरे उपकरण तक भेजे जाते हैं। यूरेनियम डाइ-आक्साइड ईंधन गट्ठे की लम्बाई 49.53 सें.मी. व बाहरी व्यास 8.12 सें.मी. होता है। एक ईंधन गट्ठे में 19 पेंसिलें होती हैं। प्रत्येक पेंसिल का बाहरी व्यास 1.52 सें.मी. व आन्तरिक व्यास 1.437 सें.मी. होता है। प्रत्येक ईंधन पेंसिल में 24 पैलेट होते हैं। प्रत्येक पैलेट की लम्बाई 2.007 सें.मी. व व्यास 1.42 सें.मी. होता है। ईंधन भरणीय संयंत्र व ईंधन स्थानान्तरण संयंत्र का डिजाइन इस प्रकार का होता है कि एक समय ऐसे दो ईंधन गट्ठों का परिवहन एक उपकरण से दूसरे उपकरण तक किया जा सके। रिएक्टर भवन से सेवा भवन तक इस अपशिष्ट ईंधन को शटल में रखकर स्थानान्तरण ट्यूब द्वारा ईंधन संग्रहागार में भेजा जाता है। ईंधन निरीक्षण पूल में ये प्रथम बार आते हैं। इस पूल की क्षमता 25,500 इम्पीरियल गैलन पानी की होती है व इसका आकार 11' x 24' x 15' 5" (गहराई) होता है। इस निरीक्षण पूल में ईंधन गट्ठों को पूर्ण बारीकी से जांचा जाता है व यह सुनिश्चित किया जाता है कि ईंधन गट्ठों की सभी पेंसिलें, शीथ (आवरण) तथा एण्ड प्लेट्स ठीक व सही हैं। इसके पश्चात, ईंधन गट्ठे के जोड़े को ईंधन संग्रहागार पूल में संग्रह के लिए स्थानान्तरित कर दिया जाता है, जिस की क्षमता, 2,51,000 इम्पीरियल गैलन पानी की होती है व इसका आकार 68' 5" x 25' x 23' 6" (गहराई) होता है। इस संग्रहागार पूल में एक ग्रिड में स्टेनलेस स्टील की 30 ट्रे होती हैं व हर ट्रे की क्षमता 11 ईंधन गट्ठे रखने की होती है। अपशिष्ट ईंधन, निरीक्षण पूल व संग्रहागार पूल की शीतलता बनाये रखने व रेडियोधर्मिता नियंत्रित करने और विकिरण संरक्षण के उद्देश्य से शीतलन व स्वच्छीकरण संयंत्र निरन्तर कार्य करता रहता है, व खनिज सहित साधारण पानी की रासायनिक जांच करके पी एच मूल्यांकन व कन्डक्टिविटी मापन नियमत रूप से किया जाता है। बीटा-गामा विकिरण, आयोडीन-131 व अन्य विकिरण मानों का भी मापन किया जाता है। पम्प, वाल्व, ऊष्मा विनिमायक, आयन विनिमायन हॉपर्स व अन्य उपकरणों का संचालन व अनुरक्षण सुरक्षित तरीके से किया जाता है ताकि संरक्षण मापदंडों की निर्धारित सीमाओं के अन्दर विकिरण रहे।

अपशिष्ट ईंधन संग्रहागार की क्षमता प्रारम्भिक अवस्था में 24,200 ईंधन गट्ठे रखने की थी। ईंधन पुर्नसंसाधन संयंत्र की सीमित क्षमता व अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड के नियंत्रण के कारण अपशिष्ट ईंधन निर्धारित अवधि के बाद रिएक्टर स्थल से पुनर्संसाधन संयंत्र तक नहीं भेजा जा सका, किन्तु 485 दिन संग्रहागार में रखने पर इसकी रेडियोधर्मिता व गर्मी इतनी कम हो जाती है कि इसे भेजा जा सकता है। पुनर्संसाधन संयंत्रों में इस अपशिष्ट ईंधन से प्लूटोनियम निकाला जाता है। रिएक्टर स्थल से इस संयंत्र तक ईंधन को 70 टन क्षमता वाले स्टेनलेस स्टील के फ्लास्क में भेजा जाता है, जिसमें 220 ईंधन गट्ठे भरे जाते हैं। फ्लास्क को सील बन्द करके विसंदूषित किया जाता है व यह भी सुनिश्चित कर लिया जाता है कि यह लीक प्रूफ है। रेल मार्ग द्वारा स्पेशल ट्रेन से इसे भेजा जाता है। प्रशिक्षित व लाईसेंसशुदा दक्ष कर्मचारी साथ में जाते हैं व सुरक्षा विभाग के कर्मचारी व विकिरण संरक्षण अनुभाग का एक सदस्य भी साथ में रहता है। संचार व्यवस्था व आपातकालीन उपायों का भी प्रावधान किया जाता है ताकि अपशिष्ट ईंधन के परिवहन के समय विकिरण संरक्षण बना रहे। आपातकालीन डीजल

जनरेटर सेट भी लगा होता है। फ्लास्क के बाहरी आवरण पर विकिरण की मात्रा नगण्य होती है। वायुमंडल, पर्यावरण व जनता को इस अपशिष्ट ईंधन के परिवहन से कोई नुकसान या हानि नहीं होती है क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण नियमों का कड़ाई से पालन किया जाता है।

ईंधन संग्रहागार पूल की क्षमता बढ़ाने व रिएक्टर से निकलते रहनेवाले अपशिष्ट ईंधन के सुरक्षित संग्रह के लिए पूल में दो ट्रे व ग्रिड के बीच की दूरी कम की गयी व एक ग्रिड में 10 ट्रे के प्रारंभिक प्रावधान से इसे शनैः शनैः 20, 24 व अब अधिकतम सीमा 30 ट्रे तक बढ़ा दिया गया है। फ्लोर लोडिंग क्षमता व शीतलन संयंत्रों की क्षमता का भी मूल्यांकन किया गया व जल की सतह पर विकिरण मापन किया गया। संयंत्र के तकनीकी प्रावधानों व निर्देशों के अनुसार, सबसे ऊपर वाली ट्रे के ऊपर कम से कम 2 मीटर पानी की गहराई होना परम आवश्यक है। इस प्रावधान का पूरा ध्यान रखा जाता है। पानी की सतह पर गामा विकिरण की मात्रा में मात्र 1 से 2 मिलीरेम प्रति घंटा की वृद्धि मापी गयी व संग्रहागार के वायुमंडल में इस संग्रह का प्रभाव नगण्य पाया गया। क्षमता बढ़ाने से 30% अतिरिक्त ईंधन संग्रह किया जा सकता है व वर्तमान में अब इस पूल की क्षमता 31,820 ईंधन गठ्ठे रखने की हो गयी है।

अपशिष्ट ईंधन के साधारण संग्रह के अतिरिक्त, कभी-कभी दोषयुक्त नाभिकीय ईंधन को भी रिएक्टर से निकालकर संग्रह किया जाता है। ताप संवहन प्रणाली में आयोडीन-131 की मात्रा प्रति दिन तीन बार मापी जाती है। अधिक मात्रा दोषयुक्त ईंधन होने का संकेत देती है। विलम्बित न्यूट्रान मापन से दोषयुक्त चैनल का पता लगाकर शीघ्रातिशीघ्र इस दोषयुक्त ईंधन को रिएक्टर से निकाल लिया जाता है। निरीक्षण पूल में इस दोषयुक्त ईंधन का अतिरिक्त सावधानीपूर्वक वरिष्ठ कर्मचारियों द्वारा निरीक्षण किया जाता है व पेरीस्कोप यंत्र द्वारा बारीकी से सूक्ष्म विश्लेषण किया जाता है। आयोडीन-131 की मात्रा वायुमंडल में मापी जाती है व सेवा भवन में विकिरण न फैले, इसके लिए संग्रहागार के दरवाजों को बन्द करके सील कर दिया जाता है। अगला ईंधन भेजने के पूर्व, संग्रहागार के वायुमंडल का विकिरण मापन करके यह सुनिश्चित कर लिया जाता है कि विकिरण मात्रा निर्धारित सीमाओं के अंतर्गत ही है। इस दोषयुक्त ईंधन को अलग सील्ड डिब्बे के अन्दर रखने के प्रावधानों पर कार्य चल रहा है, ताकि दोषयुक्त ईंधन की रेडियोधर्मिता सम्पूर्ण पानी में फैलने नहीं पाये।

राजस्थान परमाणु बिजलीघर की पहली इकाई में अब तक 1584 रिएक्टर चैनल व दूसरी इकाई में 2275 रिएक्टर चैनल से अपशिष्ट ईंधन निकाला जा चुका है व इस समय रिएक्टर संग्रहागार में 27179 अपशिष्ट ईंधन गठ्ठे संग्रहीत हैं। प्रशासनिक, तकनीकी व सुरक्षा प्रावधानों का कड़ाई से पालन व अन्तर्राष्ट्रीय विकिरण संरक्षण मापदंडों का परिपालन करने के कारण, इस विद्युत गृह में अभी तक कोई भी अपशिष्ट ईंधन संबंधित दुर्घटना नहीं हुई है। हम पूर्णतया आश्वास्त हैं कि हम अपनी उज्जवल व निर्मल छवि हो हमेशा बनाये रखेंगें। अतिरिक्त सुरक्षा प्रावधानों व संयंत्रों का भी शीघ्र-ही समावेश करके अपशिष्ट ईंधन को और भी अच्छे तरीके से रखा जा सकेगा। विकिरण संरक्षण के हर पहलू का पूर्ण सावधानी व तत्परता से पालन करने के लिए हम वचनबद्ध हैं व रहेंगे।

• • •

"वैज्ञानिक" के एजेन्टों से निवेदन

"वैज्ञानिक" अध्ययन हेतु पत्रिका है; इसमें केवल पढ़ने के लिए सामग्री नहीं के बराबर होती है। अतः, एजेन्टों से निवेदन है कि अपनी आवश्यकतानुसार ही इसकी प्रतियां मंगाएं। "वैज्ञानिक" की सामग्री कभी पुरानी नहीं होती है। अतः, बिकी हुई प्रतियों को वापस लेने की कोई व्यवस्था नहीं है।

— संपादक

प्रश्नोत्तरी

विज्ञान अथवा प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित यदि आपका कोई ज्ञान वर्धक, तर्कसंगत प्रश्न हो, तो कृपया हमें लिख भेजिए। हम उसे इस स्तंभ के अन्तर्गत छाप देंगे। प्रश्नों के छपने से एक महीने अन्दर (आजकल हम अपने अंकों को समय से नहीं छाप पा रहे है) अद्येताओं में से किसी का संक्षिप्त एवं सुस्पष्ट उत्तर प्राप्त होने पर हम उसे भी इस स्तंभ के अन्तर्गत छाप देंगे।

सुरक्षा एवं उपयोगिता दृष्टिकोण - एपरन बनाने में

बी. एम. शाह
शाह कार्पोरेशन, बम्बई

निदान में प्रयुक्त क्षः किरणों से कार्य करने वाले कार्मिकों की विकिरण सुरक्षा के लिए आवश्यक है कि वे किसी परिरक्षक का प्रयोग करें, क्योंकि कार्मिकों को ही सबसे अधिक विकिरण मिलने की संभावना होती है। इसके लिए परिरक्षक एपरन प्रयोग किया जाता है। सामान्यतः एपरन रबर और सीसे के मिश्रण से बनाये जाते हैं। ऐसे एपरन अधिक उपयोगी नहीं होते हैं व इनमें जल्दी दरारें पड़ जाती हैं। हमने इस दिशा में कार्य किया और पाया कि रबर के स्थान पर विनायल का उपयोग करने से यह समस्या काफी हद तक हल हो सकती है। लेख में विनायल एपरनों के गुणों के बारे में चर्चा की गयी है।

एपरन कैसा हो

राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय मापदण्डों के अनुसार एपरन की परिरक्षकता 0.25 मि.मी. सीसे के तुल्य होनी चाहिए ,परन्तु यदि विकिरण कार्य अधिक करना हो तो, परिरक्षकता 0.5 मि.मी. सीसे के तुल्य भी हो सकती है। इसका मापन 80 किलोवोल्ट की क्षः किरणों द्वारा किया जाना चाहिए। एपरन लचीला एवं हल्का हो जिससे उसको पहनकर काम करने में अधिक असुविधा न हो।

वजन कितना हो

एपरन का आकार यदि 90 सें.मी. x 60 सें.मी. लें, तो 0.25 मि.मी. सीसे की शीट का भार 0.025 x 11.4 x 5400 = 1.539 कि.ग्रा. होगा, अतः एपरन का भार 1.5 कि.ग्रा. के आसपास होना चाहिए।

विकास का इतिहास

I. सबसे पहले सीसे की चद्दर पर चमड़ा चढ़ाते थे। चूंकि उचित दाम पर सीसे की चद्दर की मोटाई कम से कम 1 मि.मी. ही उपलब्ध होती थी, अतः एपरन का कम से कम भार 6-10 कि. ग्रा. होता था। इसके अतिरिक्त, चमड़ा फट जाता था, इसमें लचीपापन नहीं होता था और इसे विभिन्न आकारों में बनाना संभव नहीं होता था।

II. एपरन का भार कम करने के लिए सीसे को चद्दर के रूप में प्रयोग न करके बुरादे के रूप में प्रयोग करने की योजना बनायी गयी और रबर के साथ इसको मिश्रित करके उसकी चादर बनायी गयी। इस प्रक्रिया से 1 मि.मी. से 0.25 मि.मी. तुल्यांक मोटाई के एपरन बनाये जा सके, पर मिश्रण होने के कारण उनमें समरूपता नहीं लायी जा सकी। इसके अतिरिक्त, मिश्रण होने के कारण यह भी देखा गया कि सीसा धीरे-धीरे नीचे खिसक जाता था जिसके कारण समरूपता पर बहुत असर पड़ता था। नीचे की ओर अधिक सीसा होने से कार्मिक उसका ठीक से उपयोग नहीं कर पाते थे। साथ- साथ यह भी देखा गया कि जल्द ही इसमें दरार भी पड़ जाती थी।

विनायल सीसा एपरन

उपरोक्त कमियों को दूर करने के लिए रबर के स्थान पर विनायल का उपयोग अब किया गया है। विनायल सीसे के साथ मिश्रण न बनाकर यौगिक बनाता है, जिसके कारण पूर्ण समरूपता संभव हो जाती है, लचीलापन भी प्राप्त हो जाता है एवं यह खिसक कर नीचे नहीं आता। इसके फलस्वरूप रबर -एपरन की तुलना में इसका भार 15 % कम रहता है, तथा इसको वर्षों तक बिना किसी क्षति के रख सकते हैं एवं इसमें दरार भी नहीं पड़ती। 0.1 मि.मी. तुल्यांक तक की चद्दर भी इससे बनायी जा सकती है।

निष्कर्ष

रबर सीसा युक्त एपरन की तुलना में विनायल सीसा युक्त एपरन हल्का व लम्बे समय तक बिना दरार पड़े रखा जा सकता है। इसे इच्छित आकार में भी बनाया जा सकता है।

• • •

संगणकीय रेडियोग्राफी

बुद्धिराम वर्मा
रेडियो डायग्नोसिस विभाग,
संजय गांधी आयुर्विज्ञान संस्थान, लखनऊ

विल्हेम कानरैड रौन्जन द्वारा वर्ष 1896 में विकिरणी-चित्रण (रेडियोग्राफी) की खोज के बाद, वैज्ञानिकों में आगे की खोजों की होड़-सी लग गयी थी, जिसके फलस्वरूप वर्ष 1920 में "ईस्टमैन कोडक" ने विकिरणी-चित्रण के लिए प्रतिदीप्ति पट / क्ष-किरण पट्टिका विधि (स्क्रीन/फिल्म सिस्टम) का विकास किया तथा वर्ष 1970 में "लाकहीड" ने अतिसंवेदनशील "रेअर अर्थ स्क्रीन" का विकास किया।

फ्लुअरोग्राफी के क्षेत्र में सर्वप्रथम "डी अवरू एवं कोगा" ने 1936 में लेन्स कैमरा का उपयोग करके एक उपकरण तैयार किया। इससे अधिक संवेदनशील उपकरण का विकास वर्ष 1950 में दर्पण कैमरा का उपयोग करके, ओडेल्का द्वारा किया गया। वर्ष 1970 में फिलिप्स ने अतिसंवेदनशील **प्रतिबिंब तीव्रकारी नलिका** (Image intensifier tube) का विकास किया। उपरोक्त सभी तकनीकों ने विकिरणी-चित्रण के क्षेत्र में अपनी संवेदनशीलतानुसार अधिक सूचनाएं प्रदान की हैं, फिर भी (क) रोगी को मिलने वाला विकिरण उद्भास अधिक रहता था, (ख) द्विलेपीय पट्टिका (डबल कोटेड फिल्म) का प्रयोग महँगा पड़ता था, (ग) एक ही रास्ते में विद्यमान विभिन्न अंगों को देखने के लिए विभिन्न विकिरण मात्रा देना पड़ती थी।

पिछले बीस वर्षों में, विभिन्न सिद्धान्तों पर आधारित कई तकनीकों ने जन्म लिया, जैसे संगणकीय टोमोग्राफी, पराश्रव्य (अल्ट्रा-साउण्ड), चुम्बकीय अनुनाद प्रतिबिंबन एवं पोजीट्रान उत्सर्जन टोमोग्राफी। इन सभी तकनीकों ने विकिरण निदान में अतिरिक्त सूचनाएं प्रदान की हैं, क्योंकि नयी तकनीकें संगणक आधारित हैं, अतएव उनके द्वारा प्राप्त सूचनाओं को अंकीय रूप में अभिलेखित (रिकार्ड) एवं पुनः प्राप्त किया जा सकता है। फिर भी, परम्परागत विकिरणी-चित्रण का प्रयोग 90% से अधिक रोगियों में होता रहा है। परम्परागत विकिरणी-चित्रण को अंकीय रूप में अभिलेखित एवं पुन : प्राप्त नहीं किया जा सकता है, इसलिए परंपरागत विकिरणी-चित्रण में अंकीय क्रान्ति की अति आवश्यकता थी।

संगणकीय रेडियोग्राफी का मुख्य लक्ष्य स्क्रीन/फिल्म को बदलना है, अतएव उपकरण ऐसा होना चाहिए जिसकी (i) प्रतिबिम्ब गुणवत्ता, संवेनदाशीलता, प्रतिबिम्ब संसाधन क्षमता, प्रतिबिम्बन स्वतन्त्रता परम्परागत रेडियोग्राफी से अधिक या समकक्ष हो एवं प्रतिबिम्बन मूल्य कम हो, (ii) उपलब्ध उपकरण का उपयोग हो सके, (iii) अंकीय तकनीक के प्रयोग से नैदानिक क्षमता एवं परिशुद्धता बढ़ायी जा सके, (iv) प्रतिबिम्ब का अधिक समय तक भण्डारण एवं पुनःप्राप्ति सम्भव हो।

संगणकीय रेडियोग्राफी की संकल्पना

संगणकीय रेडियोग्राफी की आधारभूत संकल्पना है कि : 1) विकिरण उद्भास की मात्रा कम हो, (2) अधिक नैदानिक सूचना, सुस्पष्ट प्रतिबिम्ब एवं अधिक परास (लैटीट्यूड) प्रदान किया जा सके, (3) प्रतिबिम्ब संसाधन द्वारा नयी नैदानिक तकनीकें विकसित की जा सकें, (4) क्ष-किरण सूचनाओं का अंकीय संदेश में परिवर्तन, भण्डारण, पुनःप्राप्ति एवं सम्प्रेषण किया जा सके।

उपरोक्त संकल्पना पर सर्वप्रथम जापान की 'फूजी' कम्पनी ने 1980 में पहला "फूजी कम्प्यूटेड रेडियोग्राफी" उपकरण तैयार किया।

फूजी संगणकीय रेडियोग्राफी उपकरण

यह उपकरण मुख्यतया प्रतिबिंब पाठक (इमेज रीडर), प्रतिबिंब संसाधक (इमेज प्रोसेसर), प्रतिबिंब लेखक (इमेज प्रिंटर), संगणक, प्रतिबिंबन पट्टिका भारक (इमेजिंग प्लेट लोडर), परिचय पत्र लेखक (आई.डी. कार्ड राइटर) और परिचय अन्त्य निवाचक (आई. डी. टर्मिनल) से मिलकर बना होता है। उच्च कोटि एवं संवेदनशीलता की प्रतिबिंब सूचना, संसूचन एवं अभिलेखन हेतु एक नये क्षेत्र संसूचक, प्रतिबिंबन पट्टिका (इमैजिंग प्लेट) का प्रयोग किया जाता है (चित्र - 1)।

प्रतिबिंबन पट्टिका पर अभिलेखित संदेश को पढ़ने एवं पढ़े गये संदेश को समय क्रम संदेश में बदलने के लिए अधिक यथार्थता का प्रकाशीय क्रमवीक्षक (आप्टिकल स्कैनर) प्रयोग

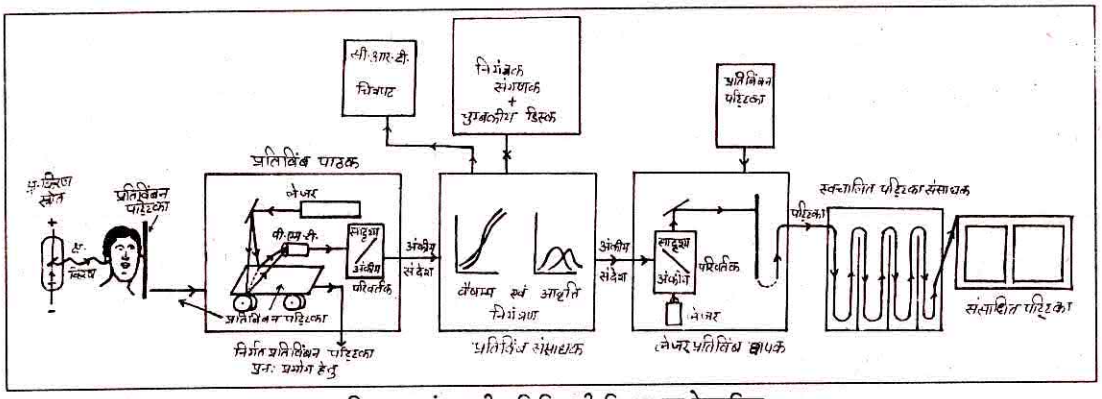

चित्र-1 : संगणकीय विकिरणी-चित्रण का रेखाचित्र

किया जाता है। निर्गत प्रतिबिंब के अभिलेखन हेतु अधिक यथार्थता का "लेजर प्रकाशीय क्रमवीक्षक" प्रयोग किया जाता है।

प्रतिबिंबन पट्टिका (इमैजिंग प्लेट)

यह एक नया लचीला, क्षेत्र संसूचक है जिसे संगणकीय विकिरणी - चित्रण के लिए परम्परागत विकिरणी-चित्रण उपकरण में "प्रतिदीप्तिपट/क्ष-किरण पट्टिका" के स्थान पर प्रयोग किया जाता है। इस पालिस्टर पट्टिका पर द्विसंयोजी यूरोपियम आयन द्वारा क्रियाशील कराये गये बेरियम फ्लूरो-हैलाइड क्रिस्टल (फोटो स्टिमुलेबल फास्फर) का लेप लगाकर तैयार किया जाता है। यह फास्फर एक विशिष्ट प्रतिदीपक (ल्यूमिनीसेन्ट) पदार्थ है जो क्ष-किरण ऊर्जा अवशोषित करता है और प्रकाश से उद्दीपित कराने पर अवशोषित क्ष-किरण ऊर्जा के समानुपात में प्रकाश उत्सर्जित करता है (चित्र-2,3)।

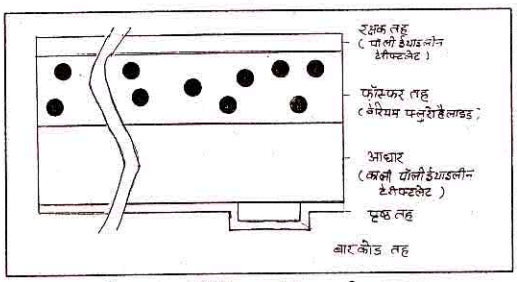

चित्र-2 : प्रतिविंबन पट्टिका की बनावट

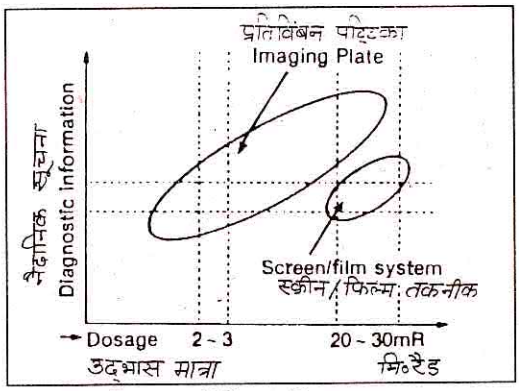

चित्र-3 : प्रतिविंबन पट्टिका का परास

प्रतिबिंबन पट्टिका की बनावट

यह चार स्तरों की बनी होती है। प्रथम स्तर "बैकिंग स्तर" है जो पालीमर का बना होता है एवं पट्टिका को घर्षण से बचाता है। दूसरा सपोर्ट स्तर जो लचीली काली, पाली इथाइलीन टेरीफ्टलेट का बना होता है जो फॉस्फर तह को बाहरी दबाव से बचाता है तथा लेजर को परावर्तित नहीं होने देता है, फलस्वरूप सुस्पष्टता बढ़ती है। तीसरा स्तर फॉसफर का होता है जो पांच से दस माइक्रो मीटर व्यास वाले, द्विसंयोजी यूरोपियम आयन द्वारा क्रियाशील कराये गये बेरियम फ्लूरो हैलाइड क्रिस्टल का बना होता है। चौथा स्तर प्रोटेक्टिव स्तर है जो पतला, पारदर्शी, पाली इथाइलीन टेरीफ्टलेट का बना होता है और पट्टिका को भौतिक क्षति से बचाता है। बैकिंग

स्तर के पीछे बार कोड स्तर होता है जिस पर उस पट्टिका का अंक अंकित रहता है।

प्रतिबिंबन पट्टिका के प्रकार एवं आकार

प्रकार	उद्देश्य	आकार
एस.टी.(स्टेन्डर्ड)	साधारण विकिरणीचित्रण	14x17", 14x14", 10x12", 8x10"
एच.आर. (हाई रिजोल्यूशन)	स्तनचित्रण (मेमोग्राफी)	8x10"
एस.बी.(सबट्रैक्शन)	अंकीय व्यवकलन	14x14", 10x12"
एम.एस. (मल्टीसेक्शन)	बहुस्तरीय टोमोग्राफी	14x14", 10x12"

प्रतिबिंबन पाठक (इमेज रीडर)

प्रतिबिंबन पट्टिका पर अभिलेखित प्रतिबिंब, विशेषतया अखंड सादृश्य सूचना (कॉन्टिन्युअस एनालॉग इन्फार्मेशन) है जिसे पढ़ने एवं अंकीय संकेत में बदलने के लिए अधिक यथार्थता का लेजर प्रकाशीय क्रमवीक्षक प्रयोग किया जाता है। क्रमवीक्षण प्रकाश के लम्बवत् लगे बहुफलकीय घूर्णनशील दर्पण से अभिसरित लेजर प्रकाश के क्रमवीक्षण द्वारा अभिगमनशील प्रतिबिंबन पट्टिका के सभी स्थानों का द्विआयामी क्रमवीक्षण किया जाता है।

प्रकाश उद्दीपन के फलस्वरूप, लेजर प्रकाशबिन्दु द्वारा उत्सर्जित प्रकाश को फोटो मल्टीप्लायर नलिका से गुजारकर वैद्युत संकेत प्राप्त किया जाता है जो संकेत प्रकाश उद्दीपन के उपरान्त उत्सर्जित प्रकाश के समानुपाती होता है। इन संकेतों को प्रवर्धित एवं लघुगणकीय परिवर्तन के उपरान्त ए/डी कनवर्टर से गुजारकर अंकीय संदेश प्राप्त किया जाता है। इस प्रक्रिया को बारंबार कराकर प्रतिबिंबन पट्टिका पर अभिलेखित क्ष-किरण प्रतिबिंब का "समयक्रम अंकीय संदेशक्रम" प्राप्त किया जाता है। प्रतिबिंब को पढ़ने के बाद प्रतिबिंबन पट्टिका पर बचे हुए चित्र को मिटा दिया जाता है जो दुबारा प्रयोग में लायी जाती है।

प्रतिबिंब संसाधक (इमेज प्रोसेसर)

प्रतिबिंब संसाधक निदान के योग्य प्रतिबिंब को संसाधित करके प्रदर्शित करता है। प्रदर्शन के अभिलक्षण विशेषतया ढलान (ग्रेडेशन), आवृत्ति एवं व्यवकलन संसाधक स्वतन्त्र रूप से नियंत्रित किये जाते हैं। कम या अधिक उद्भासन के कारण प्रतिबिंबन अभिलक्षण के स्वनियंत्रण के लिए "प्रतिबिंब परिसर स्वव्यवस्थित प्रक्रिया" प्रतिबिंब पाठक में तैयार की जाती है। (चित्र-4) इसमें जिस तथ्य का प्रयोग किया

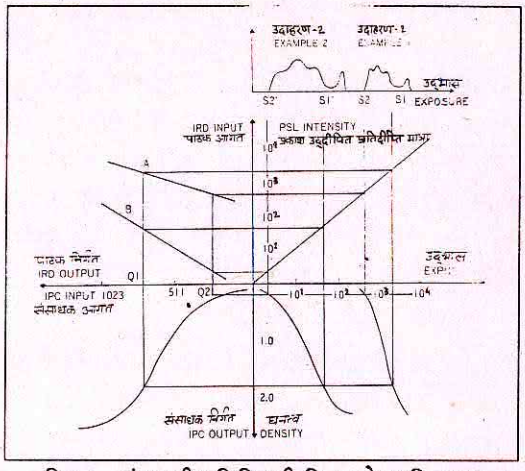

चित्र-4 : संगणकीय विकिरणी-चित्रण के अभिलक्षण

गया है वह यह है कि किसी भी क्ष-किरण प्रतिबिंब का हिस्टोग्राम शारीरिक क्षेत्र एवं तकनीक (प्लेन, टोमो या कन्ट्रास्ट स्टडी) के अनुसार, एक निश्चित प्रकार का होता है। प्रतिबिंब पाठक के पढ़ने के पहले ही सूचना को अल्प लेजर प्रकाश से पढ़कर उस प्रतिबिंब का हिस्टोग्राम तैयार कर लिया जाता है। शारीरिक क्षेत्र एवं तकनीक के प्रयोग से अपेक्षित हिस्टोग्राम के अभिलक्षण से "स्वनियंत्रित प्रतिबिंब परिसर" तैयार हो जाता है।

ढलान संसाधन अवयव हैं : ढलान प्रकार (ग्रेडेशन टाइप), घूर्णन केन्द्र (रोटेशन सेन्टर), घूर्णन मात्रा (रोटेशन एमाउण्ट), घनत्व अंतरण (डेंसिटी शिफ्ट)।

आवृत्ति संसाधन अवयव हैं : आवृत्ति कोटि (फ्रीक्वेन्सी रैंक), आवृत्ति प्रकार (फ्रीक्वेन्सी टाइप), संवृद्धि मात्रा (डिगरी आफ इन्हंस्मेन्ट)।

संसाधित प्रतिबिंब आंकड़ा, प्रतिबिंब लेखक को स्थानान्तरित किया जाता है जो वहाँ रखी पट्टिका पर आंकड़े को छाप देता है।

लेजर छापक (लेजर प्रिंटर)

छपाई के लिए मुख्यतया दो विधियाँ प्रचलित हैं : बहुरूपण (मल्टीफारमैट) कैमरा और लेजर प्रिंटर।

वर्तमान कालिक निदान में अधिक गुणवत्ता के प्रतिबिंबों की आवश्यकता है एवं सही उपयोग के लिए छपी हुई पट्टिका की अत्यावश्यकता है। बहुरूपण कैमरा से अधिक गुणवत्ता का प्रतिबिंब पाना, कैथोड-रे ट्यूब के फास्फर नोयज एवं फ्लेअर तथा प्रकाशीय प्रतिबिंब क्षरण के कारण बहुत ही मुश्किल है, जबकि लेजर प्रिंटर उपरोक्त खराबी से मुक्त है। इससे प्रतिबिंब की गुणवत्ता बढ़ायी जा सकती है और अभिलेखन प्रकाश की मात्रा को अंकीय संदेश से नियंत्रित किया जा सकता है। इसीलिए, संगणकीय विकिरणी-चित्रण में लेजर छापक का प्रयोग किया गया।

लेजर-छापक पट्टिका की पूरी सतह का द्वि-आयामी एवं क्रमागत क्रम-वीक्षण, बहु-फलकीय घूर्णनशील दर्पण की सहायता से पट्टिका पर लम्बवत केन्द्रित किया गया लेजर प्रकाश बिंदु द्वारा करता है।

उपरोक्त कार्य सम्पादन के लिए प्रकाशीय नियामक (आप्टिकल माडुलेटर) का प्रयोग, लेजर उत्सर्जी एवं घूर्णनशील दर्पण के बीच किया जाता है। यह नियामक बाह्य विद्युत संकेत के समानुपात में प्रकाश मात्रा को नियंत्रित करता है।

इस प्रकार, संगणक द्वारा प्राप्त क्रमिक प्रतिबिंब संकेतों को नियामक की सहायता से लेजर प्रकाश द्वारा, लेजर प्रकाश संवेदनशील पट्टिका पर द्वि-आयामी चित्रण किया जाता है।

संगणकीय विकिरणी चित्रण पट्टिका (सी. आर. फिल्म)

यह एक विशेष प्रकार की पट्टिका है जो लेजर प्रकाश की 633 नैनो-मीटर आवृत्ति से संवेदनशील पायस (इमल्शन) को एक तरफ लेप करके बनायी गयी होती है।

आंकड़ा भण्डारण (स्टोरिंग आफ डेटा)

प्रतिबिंब पाठक द्वारा निर्गत अंकीय संदेशों को संगणक में लगी हुई प्रकाशीय (आप्टिकल) डिस्क में सीधे अभिलेखित किया जाता है। यह अभिलेखन चुम्बकीय डिस्क या चुम्बकीय टेप में भी किया जा सकता है, जो आवश्यकतानुसार पुनः प्राप्त (रीट्रीव), संसाधित एवं संप्रेषित किया जा सकता है।

पश्च संसाधन (पोस्ट प्रोसेसिंग)

पश्च संसाधन निम्नलिखित ढलान एवं आवृत्ति संवृद्धि अवयवों के द्वारा किया जा सकता है

1. **ढलान प्रकार :**
ए. से ओ., 15 प्रकार के वैषम्य पैदा करने वाले तिरछे वक्रों का प्रयोग किया जाता है। वक्र ए. एक सीधी रेखा है जिसके प्रयोग से खाल एवं अस्थि को ठीक से देखा जा सकता है। वक्र एम. के प्रयोग से विपरीत घनत्व का प्रतिबिंब प्राप्त किया जाता है।

2. **घूर्णन मात्रा :**
किसी निश्चित केन्द्र पर इसके प्रयोग से वैषम्य वक्र के ढलान को नियंत्रित किया जाता है जिसके फलस्वरूप, उक्त केन्द्र पर स्थित अंग का अधिक या कम वैषम्य का प्रतिबिंब प्राप्त होता है। इसका परिसर +0.1 से 9.9 एवं --- 0.1 से --- 9.9 है।

3. **घूर्णन केन्द्र :**
वैषम्य वक्र के जिस केन्द्र पर ढलान को घूर्णन मात्रा द्वारा नियंत्रित किया जाता है उसे घूर्णन केन्द्र कहते हैं। इसका परिसर प्रकाशीय घनत्व 0.3 से 2.6 है। अस्थि का प्रकाशीय घनत्व न्यूनतम होता है।

4. **घनत्व अन्तरण :**
इसके प्रयोग से सम्पूर्ण वैषम्य वक्र को क्षैतिज में दाहिने या बायें अंतरित करके क्रमशः कम या अधिक घनत्व का प्रतिबिंब प्राप्त किया जाता है। इसका परिसर --- 1.44 से +11.44 है।

5. **आवृत्ति कोटि :**
इस अवयव द्वारा आवृत्ति संवर्धन की सीमा का निर्धारण किया जाता है। इसका परिसर 0 से 9 है।

6. **आवृत्ति प्रकार :**
प्रतिबिंब के घनत्व के अनुसार आवृत्ति की प्रतिक्रिया के निर्धारण के लिए 9 प्रकार की आवृत्तियों का प्रयोग किया जाता है जो एफ. एवं पी. से वी. हैं।

7. **आवृत्ति संवर्धन :**
इस अवयव द्वारा आवृत्ति संवर्धन के लिए आवृत्ति स्तर का निर्धारण किया जाता है जो 1 से 5 है ।

संगणकीय विकिरणी-चित्रण की मुख्य उपलब्धियां

1. अतिविकसित नैदानिक यथार्थता एवं उपयोग
   - उच्च प्रतिबिंब गुणवत्ता (लेजर बिन्दु स्कैनिंग - 10 पिक्सेल/मि.मी.10 बाइट/पिक्सेल),
   - विकसित प्रतिबिंब संसाधन एवं अभिलेखन स्वतंत्रता,
   - युग्म प्रतिबिंब की प्राप्ति,
   - साधारण कार्य सामान्य प्रकाश में सम्भव ।
2. न्यूनतम विकिरण उद्भास की मात्रा
   - परम्परागत विकिरणी-चित्रण के 10 से 25% विकिरण का प्रयोग,
   - अल्प उद्भास, छोटे विकिरण उत्सर्जन बिन्दु का प्रयोग,
3. उपलब्ध उपकरण में कोई परिवर्तन की आवश्यकता नहीं,
4. प्रति जांच पर कम खर्च, एकदिश पायस लेपीय एवं समान आकार की पट्टिकाओं का प्रयोग,
5. अधिक कार्य क्षमता, स्वनियंत्रित अवस्था में 60 से 75 प्रतिबिंब प्रति घंटा,
6. पैक्स के साथ संयुग्मन सम्भव ।

सन्दर्भ

1. कम्प्यूटेड रेडियोग्राफी - वाई. तातेनो, टी. ईनुमा, एम. तकानो ।
2. जे.एल.जानसन, डी.एल.एबेनथी, 1983 रेडियोलॉजी, **146** : 851-53 ।
3. एम.इशिदा, के.दोई, एल.एन.लू, सी.ई.मेट्ज, जे.एल. लहर, 1984 रेडियोलॉजी, **150** : 569-575 ।

• • •

(पृष्ठ 28 का शेष)

जन शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए, विकिरण संरक्षण की खुली जानकारी । इसी के द्वारा आम आदमी का भय और शंका का निराकरण किया जा सकता है । साधारण जनता की शंकाओं, भावनाओं और आकांक्षाओं का आदर करते हुए ही इस क्षेत्र में जन शिक्षा सफलता पा सकती है । इस क्षेत्र में शिक्षक को ईमानदारी से यह भी समझाना पड़ेगा कि बिजलीघर चलाने में मानवीय गलतियां भी होने की संभावना होती है । साथ ही, यह भी बताना जरूरी है कि ड़िजाइन, निर्माण और नियामक नियंत्रण को अधिकतम सुरक्षात्मक बनाने के लिए लगातार प्रयत्न किये जाते हैं । इन प्रयत्नों से परमाणु बिजली घर में दुर्घटना होने की संभावना को अत्यधिक कम किया जा सका है । इतनी कम संभावना होने के बावजूद भी यदि कोई दुर्घटना हो भी जाये, तो उसके कर्मचारी, जनता और पर्यावरण के ऊपर कम से कम प्रभाव पड़ेगा, इसका भी पूरा प्रावधान किया जाता है । आम आदमी को यह बताना भी जरूरी है कि नाभिकीय उद्योग ने 'थ्री माइल आयलैंड' और 'चर्नोबिल' दुर्घटनाओं से कई सबक सीखे हैं । इन अनुभवों का लाभ उठाते हुए नाभिकीय सुरक्षा और जन-सुरक्षा पूरे ईंधन चक्र में अधिक बढ़ायी गयी है । अपशिष्ट प्रबंधन तक इन अनुभवों को पूरी तरह आत्मसात किया गया है । यदि कोई भी 5000 रिएक्टर वर्षों के चलाने के अनुभव का किसी भी दूसरी औद्योगिक गतिविधि से तुलना करे, तो वह पाएगा कि परमाणु बिजलीघरों का रिकार्ड बेहतर है ।

भारतीय परमाणु बिजली कार्यक्रम एक राष्ट्रीय कार्यक्रम है, इसलिए नाभिकीय उद्योग और परमाणु बिजलीघरों के प्रति जन-आस्था और जन-स्वीकृति अर्जित करना ही शिक्षा का मौलिक उद्देश्य होना चाहिए, और यही राष्ट्रीय हित में है ।

• • •

शिशुओं के क्ष-किरण चित्रण में मात्रा कम करने की विधि

डा. एस. के. चुतुर्वेदी
प्रोफेसर, रेडियोडाग्नोसिस
सवाई मानसिंह चिकित्सालय, जयपुर

क्ष-किरणों का रोग निदान क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। शिशुओं के रोग निदान में भी क्ष-किरण परीक्षणों का उपयोग अत्यन्त महत्वपूर्ण है, परन्तु क्ष-किरणों से उत्पन्न कुप्रभाव भी एक आवश्यक चिन्तन का विषय है। शिशु रोगियों में क्ष-किरणों से उत्पन्न निम्न कुप्रभावों की संभावना बनी रहती है :

1. शिशुओं के विकास एवं प्रगति पर पड़ने वाले कुप्रभाव,
2. थॉयरायड व जनन ग्रंथियों पर पड़ने वाले कुप्रभाव,
3. अनुवांशिक अनियमितताओं का आरम्भ,
4. कैंसर जैसे रोगों की संभावना।

यदि कोई भी विधि जो शिशु रोगियों में विकिरण की मात्रा कम रख कर वांछित जानकारी प्रदान करे, तो शिशुओं के रोग निदान में वह अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है।

ग्रिड का उपयोग क्ष-किरण परीक्षण के दौरान अवांछित प्रकीर्णित क्ष-किरणों को कम करने के लिए किया जाता है जिससे वांछित रेडियोग्राफी काँट्रास्ट प्राप्त होता है। विकिरण से उत्पन्न कुप्रभावों को ध्यान में रखते हुए, कुप्रभावों को कम करने की दिशा में, यह अध्ययन किया गया है जिसमें निम्न प्रयोग किये गये :

ग्रिड को हटाकर व एम.ए.एस. कम करके परीक्षण किये गये। इसमें रोग निदान के लिए वांछित स्तर के परिणाम प्राप्त हुए। इससे पूर्व इस प्रकार के अध्ययन का एक ही उदाहरण है जो डूरी के द्वारा 1980 में किया गया था।

सामग्री एवं विधि

इस अध्ययन में ग्रिड सहित एवं ग्रिड रहित तुलनात्मक क्ष-किरण परीक्षण किये गये। इस अध्ययन को भिन्न-भिन्न आयु, शारीरिक अवस्था व लिंग के सौ शिशु रोगियों में किया गया।

ये सभी परीक्षण सवाई मानसिंह चिकित्सालय, जयपुर से सम्बद्ध सर पदमपथ मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य संस्थान में किये गये जिसमें आई. जी. ई. कम्पनी की 700 मिली एम्पियर की क्ष-किरण मशीन का उपयोग किया गया। इसमें फ्लूरोस्कोपिक नियंत्रण के अन्तर्गत स्पॉट फिल्म युक्ति का प्रयोग किया गया। उक्त मशीन में 8:1 अनुपात के ग्रिड का प्रयोग किया गया। एक ही स्थिति में ग्रिड सहित एवं रहित परीक्षण के परिणाम प्राप्त करने के लिए क्ष-किरणों की अलग अलग मात्रा (एम.ए.एस.) पर लगभग स्थिर वोल्टेज रखकर अध्ययन किये गये (सारणी-1)। वोल्टेज 40 से 50 किलो वोल्ट के लगभग प्रयोग किया गया। वोल्टेज स्थिर करके एम. ए. एस. ग्रिड सहित परीक्षण में 40 एम. ए. एस. एवं ग्रिड रहित परीक्षण में 24 एम. ए. एस. रखा गया। प्राप्त परिणामों की रेडियोग्राफिक श्यामता का माप डैन्सिटोमीटर द्वारा किया गया।

परिणाम

इस अध्ययन में विभिन्न विशेष परीक्षण, जैसे बेरियम भोजन, सोलो व एनिमा, सिस्टोयूरिथ्रो ग्राम्स, जनाइटो ग्राम,

सारणी - 1

परीक्षण विधियों के अध्ययन में रोगियों की संख्या

	परीक्षण विधि	रोगी संख्या	प्रतिशत
1.	थेरियम एनिमा	35	35 %
2.	बेरियम या कोनरे स्वालो	26	26 %
3.	बेरियम या कानरे मील	20	20 %
4.	मिक्र सिस्टोयूरियोग्राम	15	15 %
5.	जीनाईटोग्राम	2	2 %
6.	नेफ्रोस्टोयोग्राम	2	2 %
	कुल योग	100	100 %

सारणी - 2

आयु पर आधारित रोगियों का विभिन्न उद्भासन मात्रा के साथ वितरण

आयु	संख्या	शारिरिक मुटापा		किलोवोल्ट	एम. ए. एस.	
		सुप्राप्यूबिक (सें.मी.)	एपिगेस्ट्रिक (सें.मी.)		ग्रिड सहित	ग्रिड रहित
2 वर्ष तक	50	6 - 9	7 - 12	40 - 45	40	24
2-6 वर्ष तक	26	7 - 11	9 - 14	45 - 50	40	24
6-10 वर्ष तक	15	8 - 13	10 - 15	50 - 55	40	24
10-14 वर्ष तक	9	10 - 14	12 - 16	50 - 55	40	24
कुल	100					

नेफ्रोस्टोग्राम्स किये गये। ग्रिड रहित व ग्रिड सहित रेडियोग्राफी के परिणामों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। अध्ययन में शामिल शिशुओं की उम्र निम्न प्रकार थी :

दो वर्ष से कम - 50%

दो से छः वर्ष - 26%

छः से चौदह वर्ष - 24%

(कृपया सारणी-2 देखें)

रोगियों के शारीरिक मोटेपन को सुप्रापियूबिक व इपीगेस्ट्रिक रीजन में नापा गया व उसके आधार पर वांछित वोल्टेज का प्रयोग (40 से 55 कि. वो. तक) किया गया। इस दौरान एम.ए.एस. ग्रिड सहित व ग्रिड रहित परीक्षणों में क्रमशः 40 एवं 24 एम. ए. एस. स्थिर रखा गया। प्राप्त परिणामों में लगभग समान श्यामता ही प्राप्त हुई जिसे डिजिटल डेन्सिटो मीटर द्वारा मापा गया।

एम. ए. एस. की मात्रा ग्रिड रहित परीक्षण में 40 से कम करके, 24 रखने पर कॉन्ट्रास्ट में कमी आयी, परन्तु निदान की दृष्टि से वांछित स्तर की रही। कॉन्ट्रास्ट में कमी मोटापे व रोगी की उम्र पर आधारित पायी गयी। इसके विपरीत, फील्ड साइज को कम करके अधिक उम्र के बच्चों में भी (सात वर्ष से अधिक) वांछित स्तर का कॉन्ट्रास्ट प्राप्त किया गया।

ग्रिड का प्रयोग क्ष-किरण परीक्षणों में उत्पन्न द्वितीयक विकिरणों के द्वारा होने वाली कॉन्ट्रास्ट की कमी को कम करने के लिए किया जाता है, परन्तु ऐसा करने से रोगी को अधिक मात्रा में विकिरण मात्रा प्राप्त होती है, क्योंकि क्ष-किरणों की मात्रा (एम.ए.एस) को बढ़ाया जाता है। जब लगभग एक जैसी सघनता एवं अवशोषण गुणांक के ऊतकों की जाँच की जाती है तो प्राप्त इमेज कॉन्ट्रास्ट महत्वपूर्ण रहता है एवं ग्रिड के उपयोग की आवश्यकता को दर्शाता है। इसके विपरीत, यदि बेरियम सल्फेट व ऑयोडीन रेडेड कॉन्ट्रास्ट का प्रयोग किया जाता है, तो यह इतना महत्वपूर्ण नहीं रहता, कॉन्ट्रास्ट मीडिया वाले परीक्षण, जैसे भोजन, एनिमा, स्माल बाडल परीक्षण। 2 वर्ष से कम उम्र के शिशुओं से प्राप्त परिणामों में ग्रिड सहित व ग्रिड रहित परिणामों में अस्पष्ट अन्तर प्राप्त होता है, या अन्तरहीन प्रतीत होता है। परन्तु, उम्र बढ़ने के साथ-साथ, इमेज कॉन्ट्रास्ट में गिरावट प्राप्त होती है। फिर भी, यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार के प्रयोग से 7 से 8 वर्ष तक के शिशुओं में वांछित इमेज कॉन्ट्रास्ट प्राप्त किया जा सकता है। इससे अधिक उम्र के शिशुओं में छोटी फिल्मों का प्रयोग कर एवं उद्भासित क्षेत्र को नियंत्रित करके उचित परिणाम प्राप्त किये जा सकते है।

(शेष पृष्ठ 70 पर)

प्रदेशीय चिकित्सालयों में विकिरण सुरक्षा के प्रबन्ध

डॉ. एम. के. गुप्ता
विकिरण सुरक्षा अधिकारी
रेडियोडायग्नोसिस विभाग, एवं
डॉ. गुलशन राय एवं डॉ. एच. आर. माली,
रेडियोथैरैपी विभाग, किंग जार्ज मेडिकल कालेज, लखनऊ

विकसित देशों की भाँति भारत में भी विभिन्न रोगों के निदान एवं उपचार हेतु विकिरण का उपयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। अतः, विकिरण उपकरणों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। जहाँ तक राजकीय अस्पतालों एवं शिक्षण संस्थानों का प्रश्न है, वहाँ पर विकिरण उपकरणों की स्थापना एवं उपयोग पूर्णतः नियोजित रूप से सम्पन्न होते हैं, किन्तु प्रायः निजी अस्पतालों एवं क्लीनिक्स में स्थापित उपकरणों के उपयोग में विकिरण सुरक्षा पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। फलस्वरूप, आज इस प्रकार के उपकरणों वाले अस्पताल भीड़ भरे स्थानों, बाजारों एवं आवासीय कालोनी में देखने को मिल रहे हैं। इससे जनसाधारण की अनावश्यक विकिरण उद्भासन की सम्भावनाएँ अत्यधिक हो जाती हैं।

विभिन्न अस्पतालों एवं निजी क्लीनिक्स में प्रायः निम्न प्रकार की कमियाँ मौजूद रहती हैं :

1. विकिरण सुरक्षा की दृष्टि से विकिरण कक्ष का उपयुक्त न होना,

तालिका - 1

एक्स-किरणों का उपयोग करने वाले स्थानों का विवरण

क्रम संख्या	चिकित्सा स्थान	कुल संख्या	प्रतिदिन होने वाले एक्सरे (लगभग)				श्रेणी *			
			अधिक-तम	न्यूनतम	औसत	कुल	क	ख	ग	घ
1.	चिकित्सा शिक्षण संस्थाएं	3	100	40	80	240	3	—	—	—
2.	राजकीय जिला अस्पताल	5	110	25	70	350	2	2	1	—
3.	राजकीय नगर डिस्पेन्सरी	8	15	11	12	96	—	4	4	—
4.	निजी क्लीनिक	55	35	2	10	550	1	18	22	14
5.	नर्सिंग होम	9	15	10	12	108	—	4	5	—

श्रेणी *

(क) जिनमें उपरोक्त छह सुविधाएं अथवा प्रथम पाँच सुविधाएं उपलब्ध हों।

(ख) जिनमें प्रथम चार सुविधाएं उपलब्ध हों।

(ग) जिनमें प्रथम तीन सुविधाएं उपलब्ध हों।

(घ) जिनमें प्रथम केवल एक या दो सुविधाएं उपलब्ध हों।

2. क्लीनिक संचालक का विकिरण विषय से पूर्णतया अनभिज्ञ होना,

3. डाक्टर का रेडियोलोजिस्ट न होना,

4. प्रशिक्षित टेक्नीशियन का न होना,

5. विकिरण उपकरण का गुणवत्ता की दृष्टि से उपयुक्त न होना,

6. व्यक्तिक मॉनिटरिंग की सुविधा का लाभ न उठाना, आदि।

उत्तर प्रदेश भारत का सबसे अधिक जनसंख्या वाला प्रदेश है। इस प्रदेश में स्थित विभिन्न प्रकार के चिकित्सालयों एवं निदान केन्द्रों में विकिरण सुरक्षा की दृष्टि से वस्तु स्थिति क्या है, इसका अध्ययन करने हेतु इस प्रदेश के प्रतिनिधि नगर के रूप में लखनऊ में स्थित विकिरण प्रतिष्ठानों का सर्वेक्षण किया गया है।

लखनऊ नगर की जनसंख्या 15,00,000 है। अन्य सुविधाओं के साथ-साथ, यहाँ चिकित्सा की काफी अच्छी एवं आधुनिक सुविधा वाले केन्द्र उपलब्ध हैं, जैसे संजय गांधी पोस्टग्रेजुएट आयुर्विज्ञान संस्थान, किंग जार्ज मेडिकल कालेज, बलरामपुर एवं सिविल चिकित्सालय, कमाण्ड हास्पिटल, विवेकानन्द पॉलिक्लीनिक, आदि। इनके अलावा, अन्य राजकीय, निजी अस्पताल तथा नर्सिंग होम जहाँ विकिरण प्रयोग होते हैं, उपलब्ध हैं।

जैसा कि तालिका-1 में दर्शाया गया है, नगर में कुल 85 केन्द्रों पर विकिरण कार्य होता है, जिनमें 3 चिकित्सा शिक्षण संस्थाएँ, 5 राजकीय चिकित्सालय, 8 राजकीय नगर डिस्पेन्सरी, 55 निजी एक्सरे क्लीनिक, 9 नर्सिंग होम तथा 5 अनुसंधान संस्थाएँ आती हैं। इस प्रकार, निजी एक्सरे क्लीनिक तथा नर्सिंग होम की सम्मिलित संख्या, 64, नगर के कुल विकिरण केन्द्रों की संख्या का 75.3% है। शेष 24.7% विकिरण केन्द्रों में प्रान्तीय/केन्द्रीय सरकार की राजकीय संस्थाएं तथा स्वायत्त संस्था आती हैं।

यह पाया गया है कि कुल रोगियों की संख्या का 70% लखनऊ नगर से बाहर से आये रोगियों का होता है। कुल रोगियों की संख्या का 80% परामर्श हेतु राजकीय अस्पतालों में आता है, तथा 20% निजी नर्सिंग होम तथा निजी डाक्टरों के पास जाता है। कुल उपस्थित रोगियों का 30-35% भाग एक्स-रे परीक्षण हेतु निदान केन्द्रों पर पहुँचता है। राजकीय एक्स-रे निदान केन्द्रों पर भी दोषपूर्ण व्यवस्था, जटिल नियमों तथा धनाभाव आदि के कारण यह सुविधा सभी मरीजों को नहीं मिल पाती है। अतः, उक्त प्रतिशत के लगभग 50% मरीजों को एक्स-रे परीक्षण हेतु अन्य केन्द्रों पर जाना पड़ता है।

यद्यपि निजी क्लीनिक्स तथा नर्सिंगहोम में होने वाले एक्सरे परीक्षणों की औसत संख्या (क्रमशः 10 तथा 12 प्रतिदिन) राजकीय शिक्षण संस्थाओं तथा चिकित्सालयों की औसत संख्या (क्रमशः 80 तथा 70 प्रतिदिन) की अपेक्षा काफी कम है, तथापि इन निजी केन्द्रों की संख्या बहुत अधिक होने के कारण इनमें प्रतिदिन होने वाले कुल परीक्षण (658) सब संस्थानों को मिलाकर होने वाले प्रतिदिन परीक्षणों (1344) के 48.9% हैं। इस गणना में अनुसंधान संस्थानों को नहीं गिना गया है, क्योंकि वहाँ पर रोगियों के परीक्षण नहीं किये जाते।

तालिका-1 में विभिन्न प्रकार के विकिरण संस्थानों का विकिरण सुरक्षा की दृष्टि से श्रेणीगत विभाजन दिया गया है। निम्न सुविधाओं के आधार पर संस्थानों का वर्गीकरण किया गया है :

1. विकिरण उपकरण की स्थापना सुरक्षा की दृष्टि से सही ढंग से की गयी हो।

2. उपकरण संचालन हेतु प्रशिक्षित व्यक्ति उपलब्ध हो।

3. एक्स-रे उपकरण गुणवत्ता की दृष्टि से उपयुक्त हो।

4. लैड एपरन आदि विकिरण अवरोधक साधन उपलब्ध हों।

5. क्षेत्र विकिरण सर्वे तथा लगातार मॉनिटरिंग की सुविधाएं उपलब्ध हों।

6. अच्छा हो यदि बड़ी संस्थाओं में एक प्रशिक्षित विकिरण सुरक्षा अधिकारी हो।

तालिका से स्पष्ट है कि "ग" श्रेणी के 32 तथा "घ" श्रेणी के 14 संस्थान हैं। *(शेष पृष्ठ 70 पर)*

रेडियो रसायनिकी में प्रशिक्षण और जनशिक्षा

दीनदयाल सूद एवं राजेन्द्र स्वरूप
ईंधन रसायनिकी प्रभाग,
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, बंबई - 400 085

प्रशिक्षण एवं जनशिक्षा अत्यन्त प्रभावशाली माध्यम है जिनके द्वारा हम अपने विचारों को लोगों तक सुचारु रूप से पहुंचा सकते हैं। नाभिकीय विज्ञान के क्षेत्र में, विशेषतया जहां पर आम जनता की जानकारी बहुत सीमित है, जनशिक्षा का महत्व और भी बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त, रेडियो सक्रियता के बारे में लोगों में जो भिन्न-भिन्न प्रकार की भ्रान्तियां फैली हैं, उनको दूर करने में भी जनशिक्षा सहायक सिद्ध होती है।

इन्डियन एसोसियेशन आफ न्यूक्लियर केमिस्ट ऐंड अलाइड साइन्टिस्ट एक ऐसी संस्था है जिसका मुख्य उद्देश्य प्रशिक्षण व जनशिक्षा रहा है। यह एक राष्ट्रीय स्तर की संस्था है जिसकी स्थापना वर्ष 1981 में हुई। इसके अन्तर्गत 400 से अधिक आजीवन सदस्य हैं जिनमें बहुत से विदेशों के वैज्ञानिक भी शामिल हैं। इस संख्या के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम होते हैं, जैसे वैज्ञानिक सेमिनार का आयोजन, वैज्ञानिक पत्रिका का प्रकाशन एवं प्रशिक्षण। पिछले कई वर्षों से यह संस्था रेडियो रसायनिकी विषय पर कार्यशालाओं का आयोजन करती आ रही है। इन कार्यशालाओं का आयोजन विभिन्न विश्वविद्यालयों में किया गया जिनमें देश के विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के प्राध्यापकों एवं शोध-छात्रों ने भाग लिया। पिछले वर्षों में ऐसी करीब दस कार्यशालाएं पूना, वाराणसी, बंम्बई, बैंगलोर, विशाखापटनम व रायपुर में आयोजित की गयीं। इनके पाठ्यक्रम में नाभिकीय रसायन के मौलिक विषयों, जैसे नाभिकीय कोष संरचना, विभिन्न प्रकार के विकिरण, व उनका पदार्थों पर प्रभाव, विकिरण संसूचन एवं उनके मापन की विधियां इत्यादि शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, कृषि उद्योग एवं चिकित्सा के क्षेत्रों में रेडियो आईसोटोप की उपयोगिताएं, पर्यावरण में विकिरण का प्रभाव, विकिरण संरक्षण इत्यादि विषयों पर भी विस्तार से प्रकाश डाला जाता है। इन कार्यशालाओं में जो प्रयोग कराये जाते हैं, वे विशेषतया नाभिकीय रसायन के मौलिक विषयों पर आधारित होते हैं। इन सभी प्रयोगों के लिए आवश्यक उपकरण, जैसे जी. एम. काउन्टर, सोडियम-आयोडाइड सिन्टिलेशन काउन्टर, मल्टी-चैनल एनालाइजर इत्यादि का प्रबन्ध कार्यशाला के स्थान पर ही किया जाता है।

कार्यशाला के लिए शिक्षक मुख्यतः भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के रहते हैं। इसके अतिरिक्त, विश्वविद्यालयों से भी शिक्षक इस कार्य के लिए आमंत्रित किये जाते हैं।

अब तक जितनी कार्यशालाएं आयोजित की गयीं, उन सभी में लगभग 40-60 प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया। उनका उत्साह विशेषतया प्रयोगात्मक कार्यों में सराहनीय रहा। इस प्रकार की कार्यशालाएं देश के विभिन्न प्रान्तों में आयोजित की गयीं जो कि अत्यंत सफल रहीं। कई स्थानों पर कार्यशाला के समय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम तथा आइसोटोप की उपयोगिताओं पर प्रदर्शनियों का भी आयोजन किया गया।

इन सबके पीछे इस संस्था का मुख्य उद्देश्य विश्वविद्यालयों के माध्यम से जन-साधारण को नाभिकीय विज्ञान की उपयोगिताओं के बारे में जानकारी देना रहा है। हमारे विचार में विद्यालयों के शिक्षक एक प्रभावशाली माध्यम हैं जिनके द्वारा हम आम जनता को रेडियोसक्रियता के बारे में जानकारी दे सकते हैं। इन सभी प्रशिक्षणों में हमारा यह प्रयास रहा है कि जन- साधारण के मन से 'रेडियो सक्रियता खतरनाक है' की भ्रान्ति को भरसक दूर किया जा सके। हमारे इस प्रयास में स्थानीय समाचार पत्र भी काफी सहायक रहे हैं। हम समझते हैं कि इन कार्यशालाओं के माध्यम से हम अपने उद्देश्य में काफी सफल रहे हैं, अतः भविष्य में यह संस्था इसी दिशा में अपना प्रयास जारी रखेगी।

● ● ●

विकिरण संरक्षण - प्रशिक्षण और जनशिक्षा

रमेशचन्द्र
पारी प्रभार अभियंता, एवं
सर्वेशचन्द्र कटियार
प्रशिक्षण अधीक्षक, तारापूर परमाणु बिजलीघर

नाभिकीय ऊर्जा से संलग्न विकिरण की समस्या एक सबसे बड़ी उलझन एवं चुनौती है। कुछ न कुछ चुनौतियां तो हर वैज्ञानिक उपलब्धि के साथ जुड़ी-ही रहती हैं, और जहाँ तक उलझनों का सवाल है, वे तो पूरे जीवन चक्र से ही संबंध रखती हैं। इन उलझनों से पार पाने की लालसा ही हमें निरन्तर आगे बढ़ाती है और हम वह सब पा लेते हैं, जो हमें कुछ असम्भव-सा लगता है।

आज से कई साल पहले जब ताप विद्युत, जल विद्युत, जलती खानों से कोयले का निष्कासन जैसी प्रक्रियाओं की कल्पना की गयी होगी, तब भी वैज्ञानिकों व आम जनता में एक शंका अवश्य रही होगी कि इसमें कई तरह के खतरे निहित हैं। वास्तव में, आज हम इन तकनीकों से उत्पन्न खतरों के साथ खेलना सीख गये हैं, इसलिए इनकी विभीषिकाओं की तरफ उँगली नहीं उठाते, परन्तु "चेरनोबिल" व "थ्री माइल आइलैंड" जैसी दुर्घटनाओं के संदर्भ में जन-साधारण परमाणु बिजलीघरों को बंद कर डालने का आह्वान उनके तकनीकी मुद्दों पर विचार किये बिना ही जोर-शोर से करने लगते हैं। जनता की घबराहट को पूर्णरूप से दूर तो नहीं किया जा सकता है, पर उन्हें विकिरण संबंधी शिक्षा एवं विकिरण संरक्षण के उपायों से संबंधित जानकारी दे कर उनके मन से परमाणु ऊर्जा कार्यक्रमों व विकिरण के प्रति जन्मी नफरत को कम जरूर किया जा सकता है। यह एक सामान्य मानवीय धारणा है कि जब तक उसे किसी चीज की जानकारी न हो, वह उसे आसानी से ग्रहण नहीं करता है। नाभिकीय विकिरण से संबंधित पठन सामग्री कम से कम वर्ष 1970 तक भारत में कुछ सीमित पुस्तकालयों या महाविद्यालयों में ही उपलब्ध थी जो सामान्य विद्यार्थियों या इच्छुक व्यक्तियों के दायरे से बाहर थी। हालांकि अब कई महाविद्यालयों एवं वैज्ञानिक संस्थाओं में नाभिकीय ऊर्जा से संबंधित पठन-पाठन का कार्यक्रम चलाया जा रहा है, परन्तु फिर भी, भारत की आम जनता अब भी इस वैज्ञानिक क्षेत्र की बारीकियों से काफी अनभिज्ञ है। यहाँ तक कि किसी खास परमाणु संयंत्र में काम करने वाले सभी कर्मचारी भी वहाँ की प्रचालन विधि व सुरक्षा उपायों से पूर्णरूप से परिचित नहीं रहते हैं। चेरनोबिल घटना ने इस दिशा में सुरक्षा के उपायों के पुनरावलोकन को एक नया आयाम दिया और संभावित खतरों व आपात्कालीन स्थितियों से निपटने हेतु हर संयंत्र की आवश्यकता को सामने रखा, जिसमें संयंत्रों में काम करने वाले सभी कर्मचारियों को विकिरण संरक्षण संबंधी जानकारियाँ समय - समय पर देने का प्रावधान भी शामिल किया गया। प्रशिक्षण व जनशिक्षा के क्षेत्र में यह एक महत्वपूर्ण पहल हुई है। इकाई स्तर से समय समय पर आपात्कालीन अभ्यास का आयोजन कर संबंधित राज्य सरकार के अधिकारियों को आवश्यक रूप से इसमें भाग लेने का प्रावधान जनशिक्षण के क्षेत्र में दूसरा कदम है, परन्तु सबसे महत्वपूर्ण स्थान स्थानीय जनमानस के कुछ चुने हुए सदस्यों, मुख्यतः अध्यापक, ग्राम प्रमुख एवं अन्य व्यवसायों से जुड़े हुए शिक्षित लोगों को वहाँ स्थित संयंत्र व उससे संभावित खतरे के समय ली जाने वाली सावधानियों की जानकारी देना है। आज जब हमारे पास संचार के इतने साधन है तो क्यों न हम इनका प्रयोग जन प्रशिक्षण के लिए करें ? आजकल दूरदर्शन पर व चलचित्र प्रदर्शनी के रूप में विकिरण संरक्षण से संबंधित जानकारियां आकर्षक रूप में पेश कर हम आम जनता तक पहुँचा सकते हैं जैसा कि भारत सरकार परिवार कल्याण से संबंधित कई जानकारियां इन माध्यमों के प्रयोग से देती आ रही है। ये साधन आम जनता के काफी नजदीक हैं और आसानी से जनता को उपलब्ध है। कुछ विदेशी पत्र-पत्रिकाओं में जिस तरह से नाभिकीय ऊर्जा से संबंधित लेख पेश किये जाते हैं, उनका भी अनुसरण कर हम इस दिशा में कुछ प्रगति कर सकते हैं। यह सब तभी संभव है, जब इस दिशा में गहन प्रयत्न किये जाएं और नाभिकीय विकिरण से संबंधित इकाइयाँ विकिरण संरक्षण की पद्धतियों को आम जनता तक पहुँचाएं।

जहाँ तक प्रशिक्षण और जनशिक्षा का प्रश्न है, सबसे पहले हमें न केवल आम जनता को बल्कि उन सबको, जो परमाणु विकिरण से संबंधित किसी भी व्यवसाय में प्रयुक्त विधियों व सतर्कताओं से संबंधित हैं, जानकारियां देना जरूरी है। जब यह कार्य संपन्न हो जाएगा, तब स्वयं ही लोगों में

विकिरण मापदण्ड से संबंधित प्रश्न उभरेंगे और वे उनके उत्तर की जिज्ञासा भी रखेंगे। तब, यह स्थिति पैदा हो जाएगी कि वे आधारभूत इकाइयों को समझ सकेंगे। एक बार इसमें हम सफल हो गये, तो आज की नवीनतम इकाइयों को समझने में कोई परेशानी नहीं होगी। आज की विकिरण संरक्षण से संबंधित नयी इकाइयाँ वैज्ञानिकों की जरूरतों के आधार पर विकसित की गयी है, और इन्हें समझने में कठिनाई नहीं होगी, बशर्ते कि आधारभूत इकाइयों का ज्ञान लोगों को हो, यानि कि नाभिकीय विकिरण की जानकारी पूरी हो। अतः, जनशिक्षा एवं प्रशिक्षण की भूमिका इस दिशा में काफी महत्वपूर्ण है।

• • •

(पृष्ठ 65 से जारी)

इस अध्ययन के दौरान कुछ अन्य परीक्षण, जैसे नेफिस्टो-टोमोग्राम, सिस्टोयूरथ्रो ग्राम इत्यादि ग्रिड रहित विधि द्वारा सफलता पूर्वक किये गये, जिनसे जननेन्द्रियों को मिलने वाली विकिरण मात्रा में कमी पायी गयी।

चूंकि ग्रिड रहित परीक्षण के दौरान उद्भासन कारक लगभग आधे रह गये, अतः इससे दो मुख्य लाभ देखे गये :

(1) शिशु रोगियों को प्राप्त होने वाली विकिरण मात्रा में महत्वपूर्ण कमी,

(2) चूंकि उद्भासन काल कम किया गया, अतः मोशनब्लर को न्यूनतम किया जा सका।

निष्कर्ष

विकिरण उद्भासन को न्यूनतम रखकर वांछित इमेज कॉन्ट्रास्ट प्राप्त करने की दृष्टि से ग्रिड का चयनात्मक एवं न्याय संगत प्रयोग महत्वपूर्ण है। ग्रिड रहित क्ष-किरण परीक्षण द्वारा 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चों में अच्छे रेडियोलोजिकल कॉन्ट्रास्ट परिणाम प्राप्त होते हैं। इससे अधिक उम्र के बच्चों में उद्भासन क्षेत्र कम रखकर ग्रिड रहित रेडियोग्राफी द्वारा वांछित परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं।

हमारे विचार में ग्रिड के वांछित उपयोग की सुविधा शिशु क्ष-किरण परीक्षण विभागों में उपलब्ध होना अत्यन्त लाभदायक है।

• • •

(पृष्ठ 67 से आगे)

घ-श्रेणी के संस्थान किसी भी प्रकार से एक्सरे कार्य के लिए उपयुक्त नहीं हैं। इस प्रकार के कई केन्द्रों पर एक्सरे उपकरण बरामदे में सँकरे स्थान तथा भीड़ वाले स्थान पर स्थापित हैं। यही नहीं, इन केन्द्रों का संचालन व्यवसायिक व्यक्ति कर रहे हैं। टेक्नीशियन कोई भी साधारण व्यक्ति होता है, जिसने किसी प्रशिक्षित व्यक्ति के साथ 7 से 10 दिन तक कार्य किया हो। अनुसंधान केन्द्रों पर रोगियों का कोई परीक्षण नहीं होता, अतः इनकी गणना नहीं की गयी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विकिरण सुरक्षा की दृष्टि से किये गये सर्वेक्षण से यह मालूम पड़ता है कि इस नगर में एक्सरे केन्द्रों पर विकिरण सुरक्षा कितनी अनुपयुक्त है, तथा ये केन्द्र धनार्जन हेतु नगर की जनता एवं मरीजों को अनावश्यक उद्भासन प्रदान कर रहें हैं। वैसे तो एक दवा की दूकान प्रारम्भ करने हेतु शासन ने लाइसेन्स लेने पर बाध्य किया है, परन्तु यह बिडम्बना है कि असाध्य विकार उत्पन्न कर सकने वाले उपकरण की स्थापना के लिए शासन या किसी भी सक्षम संस्था से अनुमति अनिवार्य नहीं समझी जाती है। आश्चर्यजनक बात तो यह है कि कई राजकीय इकाईयों में भी प्रायः कार्यकर्ताओं द्वारा प्राप्त उद्भासन का आकलन भी नहीं किया जाता, जहाँ पर आमतौर से रेडियोलोजिस्ट एवं प्रशिक्षित टेक्नीशियन कार्यरत हैं। अतः, आवश्यकता इस बात की है कि स्थानीय स्तर पर किसी सक्षम अधिकारी/संस्था की देखरेख में विकिरण सुरक्षा का प्रबन्ध होना चाहिए। प्रशासन को इस कार्य में सहायता एवं सहयोग प्रदान करना चाहिए।

सुरक्षा के प्रबन्धों का लाभ न उठाना एक आम बात है। शायद इसका कारण है कि प्रायः विकिरणों का प्रभाव तुरन्त प्रदर्शित नहीं होता और समयोपरान्त उत्पन्न विकार इससे सम्बन्धित नहीं किये जाते हैं। अतः, डाक्टर तथा जनता इस की कोई परवाह नहीं करते। यह भी देखा गया है कि इन किरणों से उत्पन्न कुप्रभावों के प्रति समाज एवं संचालकों में अनभिज्ञता होती है। नियमों का बनाना तो आसान, परन्तु उनका अनुपालन कठिन होता है। जब तक विकिरण से उत्पन्न कुप्रभावों का प्रचार जन-साधारण तक उपयुक्त प्रचार साधनों से नहीं किया जाता है, इन प्रबन्धों की अनिवार्यता नहीं समझी जायेगी।

• • •

स्वास्थ्य भौतिकी में प्रशिक्षित जनशक्ति का विकास

स. पा. कथूरिया, ज. स्वरूप एवं कृ. च. पिल्लै
स्वास्थ्य भौतिकी प्रभाग
भा.प.अ.केंद्र, बम्बई- 400 085

1. प्रस्तावना

किसी परमाणु बिजलीघर में ऊर्जा का स्रोत उसका रिएक्टर होता है। रिएक्टर में यूरेनियम या प्लूटोनियम जैसे भारी परमाणु, विखंडन अभिक्रिया द्वारा हलके परमाणुओं में टूट जाते हैं जो रेडियोधर्मी होते हैं। नाभिकीय विखंडन अभिक्रियाओं से जो ऊर्जा निकलती है, उसका उपयोग पानी की भाप बनाने में किया जाता है। इस भाप से टरबाइन चला कर बिजली प्राप्त की जाती है।

बिजलीघर की पूरी मशीनरी बहुत बड़ी होती है और रिएक्टर से जुड़े हुए वे सारे भाग जिनमें से होकर रिएक्टर में द्रव और गैसों का आना-जाना रहता है, रेडियोसक्रिय हो जाते हैं। भुक्तशेष ईंधन और रिएक्टर से बाहर निकलने वाले अपशिष्ट भी बहुत रेडियोधर्मी होते हैं।

रेडियोधर्मिता से बिजलीघर के कर्मचारियों का बचाव, उसमें से निकलने वाले अपशिष्ट, उनके पर्यावरण में विसर्जन पर नियंत्रण, पर्यावरण की रेडियोधर्मिता विषयक निगरानी (जिससे बिजलीघर के आसपास का जनसमुदाय प्रभावित न हो) इत्यादि, कुछ ऐसे विषय हैं जिन पर सुरक्षा की दृष्टि से बल दिया जाता है। वास्तव में देखा जाए तो रेडियोधर्मिता मानव स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद होने के कारण, यूरेनियम के खनन से लेकर ईंधन छड़ों के निर्माण और उनके रिएक्टर में उपयोग के बाद पुनर्संसाधन संयंत्र में उनसे प्लूटोनियम और बचे हुए यूरेनियम की प्राप्ति तक के सारे ईंधन चक्र, ऊर्जा उत्पादन और इनमें से प्रत्येक स्तर पर निकले रेडियोधर्मी अपशिष्टों का इतनी अच्छी तरह से ध्यान रखा जाता है कि नाभिकीय उद्योग अन्य सभी प्रकार के उद्योगों में सर्वाधिक सुरक्षित सिद्ध हुआ है। विकिरण संरक्षण के इस कार्यक्रम में स्वास्थ्य भौतिकी विशेषज्ञों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

देश के सभी नाभिकीय संयंत्रों में व्यावसायिक कर्मचारियों द्वारा प्राप्त विकिरण उद्भासनों पर नियंत्रण रखने तथा प्रत्येक नाभिकीय बिजलीघर के चारों ओर पर्यावरण में विकिरणों के फैलाव की निगरानी रखने की जिम्मेदारी स्वास्थ्य भौतिकी प्रभाग की है। इस समय भारत में चार स्थलों, तारापुर, कोटा, कलपक्कम और नरोरा में सात नाभिकीय बिजलीघरों की प्रचालित इकाइयां हैं, जिनकी कुल उत्पादन क्षमता 1565 मेगावाट - विद्युत है। सात इकाइयां जिनमें प्रत्येक की उत्पादन-क्षमता 235 मेगावाट-विद्युत होगी, निर्माणाधीन हैं, तथा परमाणु ऊर्जा विभाग ने अन्य कई बिजलीघरों के निर्माण की योजना बनायी हुई है जिस के परिणामस्वरूप वर्ष 2000 तक लगभग 10,000 मेगावाट-विद्युत की उत्पादन-क्षमता प्राप्त हो जाएगी। इस प्रकार, नाभिकीय शक्ति उत्पादन क्षमता में दस वर्षों में इस बड़ी वृद्धि के कारण नये बनने वाले बिजलीघरों हेतु स्वास्थ्य भौतिकी के क्षेत्र में प्रशिक्षित जनशक्ति को उपलब्ध कराने के लिए एक कार्यक्रम का विकास किया जाना बहुत महत्वपूर्ण हो गया है।

2. प्रशिक्षण कार्यक्रम

प्रशिक्षित जनशक्ति की मांग को कम समय में पूरा करने के लिए स्वास्थ्य भौतिकी प्रभाग द्वारा वर्ष 1989 से आरंभ किये गये पहले वार्षिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में विज्ञान के प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण 30 स्नातक प्रशिक्षणार्थियों का चयन किया गया। पाठ्यक्रम में उन्हें दो विधाओं में प्रशिक्षण दिया गया, पहली विधा में आधारभूत विज्ञान को महत्व दिया गया, जबकि दूसरी विधा में विकिरण से सम्बन्धित अनुप्रायोगिक पाठ्यक्रम पर बल दिया गया।

(क) **आधारभूत प्रशिक्षण** : आधारभूत विज्ञान में गणित, जैविकी, परमाणु एवं नाभिकीय भौतिकी, विकिरण स्रोत तथा पदार्थ से विकिरण की पारस्परिक क्रिया, इन विषयों को सम्मिलित किया गया और विकिरण-स्रोत को छोड़कर जिसमें 10 व्याख्यान दिये गये, सभी अन्य विषयों में प्रत्येक पर 15 व्याख्यान दिये गये।

(ख) **अनुप्रायोगिक प्रशिक्षण** : अनुप्रायोगिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम का उद्देश्य, वास्तव में, प्रशिक्षणार्थियों को

विकिरण-से-सुरक्षा संबंधी अनुप्रायोगिक विज्ञान में कुशल बनाना है। अतः, आधारभूत विज्ञान का प्रशिक्षण देने के बाद उन्हें अनुप्रायोगिक विज्ञान में सघन प्रशिक्षण दिया गया। इसमें कुल 15 विषय सम्मिलित किये गये जिनके नाम और व्याख्यानों की संख्या सारणी-1 में दी गयी है।

सारणी - 1

अनुप्रायोगिक प्रशिक्षण के विषय

क्र.	पाठ्यक्रम	व्याख्यानों की संख्या
1.	कंप्यूटर प्रोग्रामिंग	20
2.	अनुप्रयुक्त सांख्यिकी	10
3.	विकिरण संसूचन एवं मापन	25
4.	विकिरण मात्रामिति	20
5.	विकिरण जैविकी	15
6.	विकिरण संरक्षण के मूल तत्व	10
7.	रिएक्टर तंत्र के सिद्धांत तथा सुरक्षा विशेषताएं	20
8.	औद्योगिक स्वास्थ्यकी तथा सुरक्षा	12
9.	नाभिकीय ईंधन चक्र	43
10.	परिचालनीय विकिरण संरक्षण	14
11.	विकिरण संरक्षण के तकनीकी पहलू	37
12.	रिएक्टर-स्थल का चयन, वायु-विक्षेपण के माडेल तथा पर्यावरणीय विकिरण मात्रा आकलन	17
13.	रेडियो-रासायनिक विश्लेषण	6
14.	विकिरण - आपात्कालों हेतु योजना	18
15.	विकिरण उद्भासन के चिकित्सीय पहलू	11

पाठ्यक्रम में सम्मिलित इन व्याख्यानों के अतिरिक्त, समय-समय पर विभिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर विशेषज्ञों द्वारा दिये गये विशेष व्याख्यानों की व्यवस्था भी की गयी। इन व्याख्यानों के विषय, सारणी-2 में दिये गये हैं, प्रत्येक विषय पर एक व्याख्यान दिया गया।

सारणी - 2

विशेष व्याख्यानों के विषय

1.	विकिरण एवं जन-सामान्य
2.	परिदृश्य में विकिरण की जोखिम
3.	परमाणु ऊर्जा विभाग में सुरक्षा संगठन और नियामक पहलू
4.	ऊर्जा-उत्पादन की विभिन्न विधियों में तुलनात्मक जोखिम
5.	रिएक्टर सुरक्षा के सिद्धांत
6.	नाभिकीय बिजली घरों में आग का संकट और संरक्षण
7.	रिएक्टर दुर्घटनाएं - विश्व भर के अनुभव
8.	विकिरण और रेडियो समस्थानिकों के औद्योगिक उपयोगों में विकिरण दुर्घटनाएं

(ग) **प्रायोगिक प्रशिक्षण :** प्रायोगिक प्रशिक्षण हेतु प्रयोगों को निश्चित करते समय यह ध्यान रखा गया कि विकिरण सुरक्षा हेतु स्वास्थ्य भौतिकी विदों को अपने दैनिक व्यावसायिक कार्यों के संचालन के दौरान रेडियोधर्मिता के क्या-क्या मापन करने पड़ते हैं। प्रशिक्षणार्थियों से बिजलीघरों के लिए महत्वपूर्ण ऐसे 36 प्रयोग कराये गये जिनके द्वारा उन्हें अल्फा, बीटा, गामा, न्यूट्रान, और ट्रीशियम जैसे विकिरणों के संसूचन के लिए आवश्यक विभिन्न प्रकार के संसूचकों, विकिरणों के वर्णक्रम और उनकी मात्रामिति का पर्याप्त अनुभव प्राप्त हुआ। स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद कार्बन मोनोआक्साइड का वायु में सांद्रण और धूल कणों की वायु में उपस्थिति के निर्धारण के प्रयोग भी सम्मिलित किये गये।

रिएक्टर के विखंडन उत्पाद किसी अनजाने मार्ग से बाहर निकल कर पर्यावरण में मिल तो नहीं रहे हैं, इसकी सावधानी बरतने के लिए वायु में और जल में आयोडीन - 131 का मापन नियमित रूप से किया जाता है, क्योंकि यह एक

विखंडन उत्पाद है। इसी प्रकार, स्ट्रांशियम-90 एक ऐसा रेडियोधर्मी विखंडन उत्पाद है जो रिएक्टर से बाहर निकल कर दूध में एकत्रित हो जाता है। अतः, इन दोनों रेडियो समस्थानिकों के सांद्रणों के निर्धारण को वैज्ञानिक प्रयोगों में सम्मिलित किया गया। नाभिकीय संयंत्रों की ऊँची-ऊँची चिमनियों से निकलने वाली रेडियो सक्रिय गैसों के गुब्बार से प्राप्त होने वाली विकिरण-मात्रा की गणना के साथ-साथ, कंप्यूटर की सहायता से एकत्रित आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषणों के प्रयोग भी प्रशिक्षणार्थियों से कराये गये।

इस प्रकार, प्रायोगिक स्तर पर स्वास्थ्य भौतिकी की दृष्टि से प्रशिक्षणार्थियों को संपूर्ण प्रशिक्षण देने का प्रयास किया गया।

(घ) **परिचर्चात्मक प्रशिक्षण** : प्रशिक्षणार्थियों की संवादात्मक प्रतिभा की उजागर करने के लिए प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी को एक-एक विषय परिचर्चा में मौखिक प्रस्तुतीकरण के लिए दिया गया जो बिजलीघर में कार्यरत स्वास्थ्य भौतिकी कर्मचारियों के दैनिक ज्ञान का अंग था। इसकी तैयारी संबद्ध विशेषज्ञ की देखरेख में प्रशिक्षणार्थी ने स्वयं की और अपने सहपाठियों और विशेषज्ञों के समक्ष व्याख्यान के रूप में उसे प्रस्तुत किया। इस प्रकार की परिचर्चा का एक लाभ यह हुआ कि प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी अपनी व्यावसायिक दिनचर्या के कम से कम एक विषय का निष्णात हो गया। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी द्वारा अर्जित अलग-अलग विषयों पर ज्ञान का लाभ व्याख्यानों के द्वारा अन्य सभी प्रशिक्षणार्थियों को भी प्राप्त हो गया।

3. सांयंत्रिक प्रशिक्षण

सात महीनों के अध्यापन कार्य के बाद, प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी को पांच महीनों के लिए बिजलीघरों और परमाणु ऊर्जा विभाग की विभिन्न प्रयोगशालाओं एवं संयंत्रों में स्वास्थ्य भौतिकी पर सांयंत्रिक प्रशिक्षण के लिए भेजा गया।

सांयंत्रिक प्रशिक्षण में यह ध्यान रखा गया कि प्रशिक्षणार्थी को सभी प्रकार के संयंत्रों में कार्य करने का प्रशिक्षण प्राप्त हो सके। भारत में इस समय दो प्रकार के विद्युत उत्पादक रिएक्टर कार्यरत हैं, तारापुर स्थित रिएक्टर उबलते पानी वाला रिएक्टर है जिसमें यूरेनियम-235 के संवर्धित ईंधन का उपयोग किया जाता है, जब कि अन्य सभी भारी पानी वाले रिएक्टर हैं जिनमें ईंधन के रूप में प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग किया जाता है। भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्रांबे में अनुसंधानिक रिएक्टर हैं। तीनों प्रकार के रिएक्टरों में स्वास्थ्य भौतिकी कार्य अलग-अलग प्रकार के होते हैं। इसके अतिरिक्त, पुनर्संसाधन तथा अपशिष्ट प्रबंधन में स्वास्थ्य भौतिकी कार्य अन्य प्रकार के होते हैं, जबकि पर्यावरण प्रयोगशालाओं तथा भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्रांबे की अनुसंधानिक प्रयोगशालाओं में स्वास्थ्य भौतिकी कार्य सर्वथा भिन्न प्रकार के होते हैं।

4. योग्यता मूल्यांकन

प्रशिक्षणार्थियों की योग्यता का मूल्यांकन, अध्यापन कार्य के दौरान साप्ताहिक रूप में आयोजित लिखित एवं मौखिक परीक्षाओं, वैज्ञानिक प्रयोगों को करने में उनकी कुशलता, परिचर्चाओं में उनके द्वारा दिये गये व्याख्यानों का प्रस्तुतीकरण तथा बिजलीघरों, संयंत्रों एवं अन्य प्रयोगशालाओं में उनकी व्यावसायिक कार्य क्षमता के मूल्यांकन द्वारा लगातार पूरे वर्ष किया गया।

प्रशिक्षणार्थियों की संख्या केवल 30 होने के कारण प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी की प्रगति का वैयक्तिक रूप से पूरे वर्ष ध्यान रखा गया। रहने के लिए तारापुर कर्मचारी निवास में उन्हें जगह दी गयी और उनकी यदि कोई शैक्षणिक अथवा वैयक्तिक समस्या सामने आयी, तो उसका तुरंत निराकरण किया गया।

5. निष्कर्ष

वर्ष के अंत में परीक्षा फल के रूप में प्रशिक्षण का परिणाम सामने आया। सभी प्रशिक्षणार्थियों ने खूब मन लगा कर प्रशिक्षण प्राप्त किया और बहुत अच्छे अंक प्राप्त करके सभी उत्तीर्ण हो गये।

इस पहले बैच में प्रशिक्षित सभी प्रशिक्षणार्थियों को अब विभिन्न बिजलीघरों में रोजगार पर लगा दिया गया है।

• • •

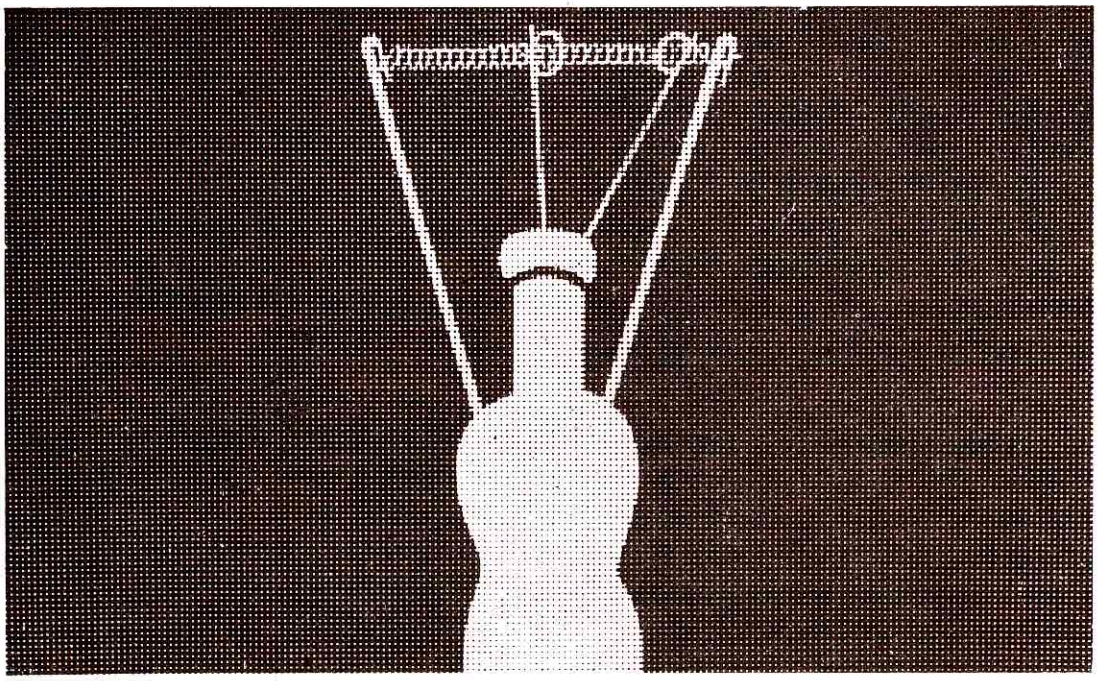

Midhani. Lighting the path to self-reliance in special metals and alloys.

Midhani is India's first and only special alloys plant manufacturing the entire range of special metals and alloys needed by various industries.

For instance, molybdenum, tungsten and high purity nickel for the lamp industry.

The basic production technology has been acquired from reputed foreign organisations like Creusot-Loire and Pechiney-Ugine-Kuhlmann of France and Krupp Kloeckner A of West Germany. Midhani also has the latest equipment and quality control facilities to ensure that all Midhani alloys meet international standards in quality and performance.

Some of the unique production facilities are the powder metallurgy shop for compacting, sintering, swaging and wire drawing of molybdenum and tungsten products, sophisticated melting and refining furnaces, precision forging, rolling and wire drawing equipment and a central quality control laboratory.

Midhani's product range includes iron, nickel and cobalt based superalloys, special purpose steels, titanium and titanum alloys, electrical and electronic alloys including electrical resistance alloys and powder metallurgy products.

MIDHANI

Mishra Dhatu Nigam Limited

(A Government of India Enterprise)

Kanchanbagh Hyderabad 500 258

Sista's/Midhani/153, 84

रेखागणित का उद्भव और विकास

'जो व्यक्ति रेखागणित की जानकारी नहीं रखता, उसे मेरे घर में प्रवेश की आज्ञा नहीं है', यह शब्द थे गणित के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले महान मनीषी 'प्लेटो' के। प्लेटो ये शब्द दूसरों को केवल कहते ही नहीं थे, बल्कि उन्होंने एक तख्ती पर इन्हें लिखवाकर अपने घर के दरवाजे पर टांग भी रखा था।

प्लेटो का जन्म 429 ई.पू. यूनान की राजधानी, एथेंस में हुआ था। उनकी पुस्तकों में दृष्टान्तों की भरमार होने के साथ-साथ, गणित के उदाहरणों की भी कोई कमी नहीं है। उन्होंने यूनान में अपनी एक अकादमी स्थापित की थी जिस के विद्यार्थियों को एक विशेष प्रकार की शिक्षा दी जाती थी और यूक्लिड, जिन्हें रेखागणित का वास्तविक जनक कहा जाता है, इसी अकादमी के विद्यार्थियों में से एक थे।

यह सही है कि केवल यूक्लिड ही रेखागणित के जन्मदाता हैं क्योंकि उन्होंने ही सबसे पहले रेखागणित के सभी ज्ञात तत्वों का संग्रह किया और व्यावहारिक आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर उन्होंने इन तत्वों को केवल विकसित ही नहीं किया, बल्कि उन्हें एक लड़ी में पिरोकर सुव्यवस्थित रूप दिया।

रेखागणित का इतिहास कितना पुराना है, यह कहना नामुमकिन है, फिर भी, यह विद्या बीजगणित से बहुत पुरानी लगती है और इसके नाम का प्रयोग 700 ई. पू. तक मिलता है। उस काल में यह विद्या भूमि के माप के लिए प्रयुक्त की जाती थी।

रेखागणित का दूसरा नाम ज्यामिति या जियोमीट्री है जो अंग्रेजी के 'जियो' और 'मीटर', दो शब्दों से बना है। जियोमीट्री का अर्थ हुआ 'पृथ्वी' और 'माप,' यानि पृथ्वी की पैमाइश। अतः, प्राचीन काल में लोग ज्यामिति, अर्थात रेखागणित का प्रयोग केवल भूमि की नाम-नपाई के लिए ही किया करते थे, लेकिन बाद में उन्होंने इसमें बिन्दु, रेखा, कोण, त्रिकोण, और अन्य कई रेखागणितीय आकृतियों को शामिल कर लिया। यह विद्या मुख्यतः रेखाओं की रचना पर आधारित है।

यूक्लिड की पुस्तक

यूरोप की ज्यामिति की सर्वप्रथम पुस्तक 'यूक्लिड के ऐलीमेन्ट्स' है। यह पुस्तक आज तक निर्मित गणित की सभी पुस्तकों में से सबसे पुरानी है और 15 अन्य पुस्तकों के समावेश से बनी है। यूक्लिड का जन्म 323 ई.पू. और मृत्यु 284 ई.पू. हुई थी। वह सिकन्दरिया में जन्मा यूनान का महान गणितज्ञ था और महान दार्शनिक प्लेटो का शिष्य था।

बारहवीं शताब्दी में यूक्लिड के इस विशाल ग्रन्थ का लेटिन में अनुवाद किया गया। उस समय विषय से सम्बन्धित कोई भी शीर्षक उस पुस्तक पर नहीं लिखा जाता था, लेकिन बाद के अनुवादकों ने ग्रन्थ को 'जियोमीट्री' नाम से शीर्षस्थ करना आरम्भ कर दिया और तब से अब तक यह शब्द लगातार इसी विषय के लिए प्रयुक्त होता आ रहा है।

भारत में रेखागणित

भारत में रेखागणित के आरम्भ की कहानी बड़ी ही विचित्र है। सुनने में आता है कि भारत में रेखागणित का आरम्भ यज्ञों से हुआ। जैसा कि हम जानते हैं भारत हमेशा से ही अपने राजसूय और अश्वमेध आदि यज्ञों के लिए प्रसिद्ध रहा है। इन यज्ञों की सफलता के लिए आयोजक कड़ा परिश्रम करते थे। वे प्रत्येक प्रकार के यज्ञ के लिए एक विशेष प्रकार की वेदी बनवाते थे। इन वेदियों का निर्माण कई-कई इंजिनियरों की देख-रेख में होता था। थोड़ी-सी भी कमी रह जाने पर यज्ञ के असफल होने की आशंकाएं उत्पन्न हो जाती थीं। वेदी की आकृति कैसी होनी चाहिए ? उस में किस आकृति की ईंटें लगायी जानी चाहिए ? उस की लंबाई, ऊंचाई और चौड़ाई कैसी होनी चाहिए ? आदि, यह सब यज्ञ के आयोजक के मुनि और पंडित लोग निश्चित करते थे। वही इन वेदियों के निर्माण हेतु इंजिनियर नियुक्त होते थे। उस समय ईंटों की आकृतियों में वर्गाकार, त्रिभुजाकार, आयाताकार और वर्ग-समचतुर्भुज जैसी आकृतियों की ईंटें प्रयोग की जाती थीं।

इतना सब कुछ होने पर भी उस समय रेखागणित का कोई अधिक महत्व न था। यद्यपि उन्हें इस सम्बन्ध में जानकारी तो थी, लेकिन केवल यज्ञ की वेदियों तक ही समित।

भारत में आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, महावीर और भास्कर ने ज्यामिति के विकास के लिए विशेष योगदान दिया। प्रसिद्ध गणिताचार्य 'आर्यभट्ट' ने बीजगणित पर ग्रन्थ तो लिखे ही, साथ में त्रिभुजों, चतुर्भुजों, वर्गों और कई समतल पदार्थों के क्षेत्रफल व ठोस पदार्थों के आयतन निकालने के सूत्र भी दिये। ब्रह्मगुप्त का चक्रीय चतुर्भुज पर कार्य विशेष प्रशंसनीय है।

प्रकृति में रेखागणित

हम जब अपने चारों ओर एक नजर डालते हैं, तो हमें सभी वस्तुएं रेखागणितीय आकृतियों के अनुरूप ही दिखती है। समस्त पृथ्वी, चाँद, तारामण्डल, सूर्य और यहाँ तक कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड किसी-न-किसी ज्यामितीय आकृति में निबद्ध हैं। ज्यामितिकारों ने सामान्य फूलों, पत्तियों, ग्रहों- उपग्रहों, तितली के पंखों, पतंग, कछुए की पीठ और अष्टकोणात्मक पत्थरों को भी ज्यामिति की प्राकृतिक आकृतियाँ माना है। इसके अतिरिक्त, बहुत-सी ऐसी आकृतियाँ हैं जो बहुत ही कठिन हैं, परन्तु ज्यामितिकारों ने इन्हें कागजों पर चित्रित किया है और इनका क्षेत्रफल निकालने के लिए सूत्र भी बताये हैं।

अध्ययन से लाभ

एक बार यूक्लिड से किसी ने पूँछा, "गुरूजी, रेखागणित के अध्ययन से क्या लाभ है?" उत्तर में यूक्लिड ने उसे एक सिक्का थमा दिया और कहा, "तुम किसी भी शास्त्र के अध्ययन से लाभ की बात मत सोचो क्योंकि ऐसा सोचते हुए तुम शास्त्रों को बनिए की दूकान समझ लेते हो।" विद्याध्ययन से स्वार्थ की बात सोचते हुए हममें स्वार्थ की भावना पनप जाती है। 'हितोपदेश' में एक स्थान पर लिखा है कि शास्त्रों के अध्ययन से आत्मतुष्टि, यश और धन प्राप्त होता है, अर्थात ये तीन लाभ हैं जो हमें विद्याध्ययन से प्राप्त होते हैं, अतः केवल धनोपार्जन को ही अध्ययन का लक्ष्य बना कर शेष दो को कुएँ में नहीं डाल देना चाहिए।

अल्बर्ट आइस्टाइन का मत है कि, 'इस ज्यामितीय संसार को ज्यामिति के बिना समझने का प्रयत्न करना बिलकुल असम्भव है।' इसके अतिरिक्त, प्रसिद्ध वैज्ञानिक, सर आइजक न्यूटन के सम्बन्ध में डा. पेम्बरटन कहते हैं, "न्यूटन तब तक किसी कार्य में सफल नहीं हो सका, और न ही किसी लेखक द्वारा लिखित ज्यामितीय प्रमेयों को समझ सका, जब तक उसने यूक्लिड की पुस्तक 'यूक्लिड के एलिमेंट्स' नहीं पढ़ लिये।"

रेखागणित केवल अध्ययन के लिए ही नहीं है, यह मनोरंजन के लिए भी है, और दूसरे शब्दों में यह एक मानसिक व्यायाम भी है।

ज्यामितीय तर्कों का चिंतन करके बुद्धि का विकास करने के लिए और मस्तिष्क की बौद्धिक शक्ति को बढ़ाने के लिए इससे श्रेष्ठ विषय और कोई नहीं है।

कुमार नीरज
मेल रोज कॉटेज
सिमला - 171 003.

दूर संचार के इतिहास की विशिष्टताएं

डा. आरविन्द कुमार गुप्त

(अप्रैल-जून 1991 अंक से आगे)

1874 फ्रांस के वैज्ञानिक बोडाट ने तीव्र-गति के टैलीग्राफ का अभिकल्पन किया।

1875-77 अमेरिका के अन्वेषक एच एम स्टेनल ने प्रतिवेदित किया कि अफ्रीका में संचार के लिए ड्रम इस्तेमाल किए गए थे। ये 12 मी लम्बे ड्रम लट्ठे द्वारा बनाए गए थे तथा बाहर से इन ड्रमों में खोखली दरार थी। इस परिपूर्ण खोल की डोंगी (Canoe) से साम्यता थी तथा यह खोल गुंजायमान ध्वनि से पूर्ण तथा शक्ति से परिपूर्ण था। संकेतों को ड्रम की भाषा में संचारित किया गया। विभिन्न तीव्रता के आघात तथा स्वर ने एक प्रकार के दूरभाषिक वार्तालाप का कार्य किया, जिसको बाद में "बातचीत करने वाले ड्रम" का नाम दिया गया। इसने मार्च को पहला संदेश संचारित किया।

1877 अमेरिका के वैज्ञानिक थामस बी डूलिटिल ने एक तन्य-शक्ति तथा अधिक विद्युत चालकता वाला कापर-तार बनाने की प्रक्रिया का आविष्कार किया। इसको बिजली के खम्भों की लाइनों के लिए उपयोग में लाया गया।

(शेष पृष्ठ 80 पर)

वार्षिक प्रतिवेदन - वर्ष 1990-91

हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद की कार्यकारिणी समिति की ओर से वर्ष 1990-91 की गतिविधियों का ब्यौरा आपके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है।

1. वैज्ञानिक का प्रकाशन

'वैज्ञानिक' के इस वर्ष के अंक कंप्यूटर पर कम्पोज एवं लेसर पर प्रिंट किये गये। इस वर्ष से वैज्ञानिक की छपाई का भार भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के पुस्तकालय एवं सूचना विभाग ने अपने ऊपर ले लिया है और इससे वैज्ञानिक की छपाई में काफी सुधार हुआ है। इसके लिए हम उनके, विशेष रूप से डा. एम. बालकृष्णन जी के आभारी हैं। इसके साथ सम्पादन मंडल तथा व्यवस्थापन मंडल ने भी सक्रिय सहयोग दिया। इस वर्ष हमने चार अंक निकाले जिनमें से एक "नाभिकीय ऊर्जा" पर विशेषांक था।

2. लेख प्रतियोगिता

वर्ष 1990 हेतु "अखिल भारतीय हिन्दी विज्ञान लेख प्रतियोगिता" में अहिंदी भाषी लेखकों सहित 60 लेख हमें प्राप्त हुए, परन्तु इस वर्ष अहिन्दी भाषी लेखक कोई पुरस्कार प्राप्त नहीं कर सके, इसलिए प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कारों के अलावा हिन्दी भाषियों को पाँच के स्थान पर छः प्रोत्साहन पुरस्कार दिये गये। प्रतियोगी विजेताओं को प्रमाण-पत्र एवं पुरस्कार की राशि भेज दी गयी है। इस प्रतियोगिता के निर्णायकगण डा. जनार्दन स्वरूप, डा. एस. डी. मिश्रा, डा. नागर एवं श्री. सी. आई. जी. शर्मा तथा संयोजक डा. एस. पी. गर्ग थे। हम इन सभी के आभारी हैं।

इस वर्ष (1991-92) में होने वाली प्रतियोगिता में पुरस्कारों की राशि करीब दोगुनी कर दी गयी है। यह राशि अब इस प्रकार होगी :

प्रथम पुरस्कार	-	रु. 1500/-
द्वितीय पुरस्कार	-	रु. 1000/-
तृतीय पुरस्कार	-	रु. 500/-

इसके अतिरिक्त, पांच प्रोत्साहन तथा अहिन्दी भाषी प्रतियोगियों के लिए दो पुरस्कार, प्रत्येक रु. 300/- के दिये जायेंगे।

3. राजभाषा वार्ताएं

राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के तत्वावधान में निम्नलिखित वार्ताएं इस केंद्र में आयोजित की गयीं। इस कार्यक्रम के संयोजक श्री रमेश चंद्र पंत हैं।

1) सौर-ऊर्जा उपयोग के व्यावहारिक पहलू (23-04-1990), प्रो. महेन्द्र सिंह सोढ़ा
2) मद्रास परमाणु बिजली घर की इकाइयों की पुनर्स्थापना (24-05-1990), श्री अनिल काकोडकर
3) साहित्यकार और समाज-आज के संदर्भ में (24-07-1990), डा. राही मासूम रजा
4) बाईपास हृदय चिकित्सा (19-02-1991), डा. शरद पाण्डेय

4. वैज्ञानिक प्रश्न मंच

नेहरू जन्म दिवस समारोह के उपलक्ष्य में 21 नवंबर, 1990 को एक प्रश्नमंच का आयोजन किया गया जिसमें अणुशक्तिनगर स्थित परमाणु ऊर्जा केंद्रीय विद्यालयों की चार टीमों ने भाग लिया। साथ ही, अणुशक्तिनगर के करीब 500 विद्यार्थियों ने दर्शकों के रूप में इसका आनन्द उठाया तथा ज्ञान प्राप्त किया। इस कार्यक्रम के संयोजक डा. विजय कुमार मनचन्दा, डा. विजय कुमार जैन, डा. शिव प्रकाश गर्ग, डा. महावीर अधिकारी तथा श्रीमती नीलम गोयल थे। श्री रामास्वामी ने इस प्रश्नमंच की व्यवस्था में सक्रिय सहयोग दिया।

5. अतिचालकता - एक मूल्यांकन : संगोष्ठी

6 अप्रैल 1990 को भा.प.अ. केंद्र में एक-दिवसीय संगोष्ठी, 'अतिचालकता - एक मूल्यांकन' विषय पर आयोजित की गयी। इस संगोष्ठी का उद्घाटन प्रो. वीरेंद्र सिंह, निदेशक,

टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान ने किया। इसमें अतिचालक पदार्थों के क्रमिक विकास, संश्लेषण, गुणधर्म, उपयोग, संविरचन एवं सूक्ष्म संरचना आदि के व्यावहारिक तथा सैद्धांतिक पक्ष पर शोध पत्र पढ़े गये। इसके साथ, संगोष्ठी में प्रस्तुत वार्ताओं के सारांश का एक संकलन भी प्रकाशित किया गया। इसमें विश्वविद्यालय, आई.आई.टी., टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, नौसेना ब्यूरो, एवं बी.ए.आर.सी. से करीब 200 लोगों ने भाग लिया। इस संगोष्ठी के संयोजक सर्वश्री जतीन्द्रवीर यख्मी एवं राम प्रसादजी थे।

6. वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली कार्यशाला

इस वर्ष जून 26 से 29, 1990 को हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद एवं वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, दिल्ली के तत्वावधान में एक चार-दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला का उद्देश्य वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों पर शब्दावली, अनुवाद एवं मौलिक लेखन को प्रोत्साहित करना था। इस कार्यशाला का उद्घाटन डा. आर. चिदम्बरम्, निदेशक, भा.प्र.अ. केंद्र ने किया। कार्यशाला में 6 विशेषज्ञों ने विभिन्न सत्रों में 8 व्याख्यान दिये। इनमें शब्दावली निर्माण, अनुवाद - सिद्धांत एवं प्रक्रिया, भाषा विकास, मानकलिपि, शैली विश्लेषण तथा संप्रेषण माध्यम आदि जटिल विषयों पर सरल भाषा में विचार व्यक्त किये गये। इसके साथ, प्रयोग कार्य भी किये गये जिन्हें विषयानुसार (भौतिक विज्ञान, इंजीनियरी, रसायन विज्ञान) आयोजित किया गया था और जिनमें प्रतिभागियों ने भी परिचर्चा की। इस कार्यशाला में करीब 100 वैज्ञानिकों ने भाग लिया। इस कार्यशाला का मार्गदर्शन प्रो. सूरजभान सिंह, अध्यक्ष, शब्दावली आयोग ने किया। इस कार्यशाला के संयोजक श्री आर.सी.पंत थे।

7. परमाणु विज्ञान एवं विकास : वैज्ञानिक संगोष्ठी

12 जुलाई 1990 को परमाणु ऊर्जा विभाग में प्रशासन, परिवहन, कार्यशाला एवं प्रयोगशाला के कर्मचारियों के लिए 'परमाणु विज्ञान एवं विकास' विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी का उद्देश्य इन कर्मचारियों को विभिन्न विषयों पर हो रहे अनुसंधानों, जैसे परमाणु ऊर्जा, परमाणु भट्टी की रचना, कार्य और सुरक्षा, परमाणु ऊर्जा के शांतिमय उपयोग, कंप्यूटर और लेसर के बारे में जानकारी देना था। इस संगोष्ठी का उद्घाटन डा. आर. चिदम्बरम्, निदेशक, भा.प्र.अ. केंद्र ने किया। करीब 200 लोगों ने इसमें भाग लिया। साथ में, परमाणु विज्ञान एवं विकास से संबंधित जानकारी तथा वार्ताओं का संकलन भी प्रतिभागियों को दिया गया। इन कर्मचारियों को संगोष्ठी के बाद रिएक्टर तथा प्रयोगशालाओं में ले जाकर इस विषय पर और अधिक जानकारी दी गयी। इसके साथ ही, करीब 40 कर्मचारियों को तारापुर की अणुभट्टी भी दिखायी गयी। इस कार्यक्रम के संयोजक श्री सुधाकर कोकाटे थे।

8. विज्ञान की भावी दिशाएं : संगोष्ठी

7-8 दिसम्बर 1990 को प्रगत प्रौद्योगिक केंद्र, इन्दौर में एक द्वि-दिवसीय संगोष्ठी "विज्ञान की भावी दिशाएं" विषय पर आयोजित की गयी। इस संगोष्ठी का उद्घाटन डा. महेश्वर दयाल, वरिष्ठ तकनीकी सलाहकार, परमाणु ऊर्जा विभाग, नई दिल्ली ने किया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. डी.डी. भवलकर, निदेशक, प्रगत प्रौद्योगिकी केंद्र ने की। इसमें विज्ञान के विभिन्न विषयों, जैसे ऊर्जा के अपरंपरागत स्रोत, नाभिकीय ऊर्जा, अतिचालकता, लेसर, दूर संचार, कम्प्यूटर, प्रक्षेपास्त्र, पदार्थ की चतुर्थ अवस्था, खगोल भौतिकी, रसायनिकी, त्वरक तथा अनुवांशिकी पर भारत के प्रमुख वैज्ञानिकों ने अपने-अपने शोध पत्र पढ़े। इसके साथ, संगोष्ठी में प्रस्तुत वार्ताओं के सारांश का एक संकलन भी प्रकाशित किया गया। संगोष्ठी में लगभग 200 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस कार्यक्रम के संयोजक श्री सत्य नारायण व्यास तथा डा. विजय मनचंदा थे।

9. भावी कार्यक्रम : वर्ष 1991-92.

वर्ष 1991-92 के प्रस्तावित कार्यक्रम इस प्रकार है :

१. अखिल भारतीय लेख प्रतियोगिता,

2. 'नाभिकीय ऊर्जा' पर संगोष्ठी, भा.प्र.अ. केंद्र, बंबई, 26 सितंबर, 1991,

3. वैज्ञानिक संगोष्ठी, 'परमाणु ऊर्जा एवं पदार्थ', पटना,

4. वैज्ञानिक संगोष्ठी, आधुनिक जीव विज्ञान, बंबई,

5. प्रश्न मंच - विद्यार्थियों के लिए।

10. सदस्यता

इस वर्ष हमने 62 नये आजीवन सदस्य बनाये। इस वर्ष के अंत तक सदस्यों की संख्या इस प्रकार रही :

आजीवन सदस्य	-	509
संस्थागत सदस्य	-	97
साधारण सदस्य	-	170
कुल संख्या	-	776

11. भारत सरकार की नीतियों को ध्यान में रखते हुए हमने भी इस वर्ष की दो प्रस्तावित संगोष्ठियों को स्थगित करने का निर्णय लिया है। ये संगोष्ठियां इस वर्ष आयोजित करने की योजना है। इस कारण हम अपने कुछ कार्यक्रमों का कार्यन्वयन नहीं कर सके। फिर भी, परिषद की गतिविधियों को सफल बनाने के काफी प्रयास हुए हैं। इसका पूरा श्रेय अध्यक्ष, डा. आर. चिदम्बरम्, एवं उपाध्यक्ष, डा. दीन दयाल सूद के मार्गदर्शन एवं कार्यकारिणी समिति के सभी सदस्यों से प्राप्त सहयोग को जाता है। इसके साथ, परिषद के विभिन्न कार्यक्रमों के लिए प्राप्त प्रशासनिक सहायता के लिए हम इस केंद्र के नियंत्रक महोदय, अध्यक्ष, कार्मिक प्रभाग, अध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना प्रभाग तथा हिंदी कक्ष के प्रति आभारी हैं। परिषद की राजभाषा कार्यान्वयन समिति तथा केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद से भी पर्याप्त सहयोग मिला है। इसके लिए हम विशेष रूप से सर्वश्री एस. के. शर्मा, डॉ. सी. आर. भाटिया, डॉ. वी. रामशेष तथा डॉ. आर.एन. भटनागर के आभारी हैं।

ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी,
सचिव, हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद

चुनाव अधिकारी, डॉ. हरस्वरूप शर्मा के अनुसार इस वर्ष के चुनाव एकमत से हुए। परिणाम इस प्रकार है :

वर्ष 1991-92 एवं 1992-93 हेतु कार्यकारिणी समिति

1. अध्यक्ष : डा. आर. चिदम्बरम्, निदेशक, भा. प. अ. केंद्र
2. उपाध्यक्ष : डा. दीन दयाल सूद, अध्यक्ष, ईंधन रसायनिकी प्रभाग
3. सचिव : श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी, परमाणु ईंधन प्रभाग
4. सह-सचिव : डा. विजय मनचन्दा, रेडियो रसायनिकी प्रभाग
5. कोषाध्यक्ष : श्री ललित कुमार, धातुकी प्रभाग

सदस्य

1. श्री रामनिवास आर्य, धातुकी प्रभाग
2. श्री हरीश कुमार कौरा, अध्यक्ष, कंप्यूटर प्रभाग
3. डा. एस. के. सिक्का, उच्च दाब भौतिकी प्रभाग
4. डा. एस. ए. अहमद, वर्णक्रमदर्शिकी प्रभाग
5. डा. राजेंद्र स्वरूप, ईंधन रसायनिकी प्रभाग
6. डा. गोविन्द प्रसाद कोठियाल, तकनीकी भौतिकी एवं प्रोटोटाइप इंजीनियरी प्रभाग

(पृष्ठ 76 से जारी)

1878 28 जनवरी को पहले स्थानीय टैलीफोन एक्सचेंज, न्यूहेवन, अमेरिका में उद्घाटन किया गया। इस एक्सचेंज में 20 उपभोक्ता थे।

1879 पहला सामुदायिक टैलीफोन एक्सचेंज, जिसमें सात उपभोक्ता थे, लन्दन की 36 कोलमेन स्ट्रीट में शुरु किया गया।

अमेरिका के वैज्ञानिकों, डेनियल कोनोली, टी ए कोनीली तथा टी जे मेक्तीगे ने स्वचालित टेलीफोन एक्सचेंज के लिए एकस्व प्राप्त किया तथा पेरिस में 8-लाइन के स्वःचालित टेलीफोन एक्सचेंज का प्रदर्शन किया।

1879-80 केनटकी के डी ई हुग्स से लन्दन वायरलैस संकेतों का, जिनकी क्षमता 500 मी थी, का प्रदर्शन किया।

1880 पहला टेलीफोन केबिल न्यूयार्क के बुकलीन पुल पर बिछाया गया।

1881 पहला टेलीफोन केबिल समूह रोम तथा पेरिस में शुरु किया गया। जर्मनी में पहला टेलीफोन एक्सचेंज जनवरी तथा अप्रैल में भिन्न-भिन्न जगहों में शुरु किया गया।

1882 विद्युत-उपभोक्ता लाइनों में हस्तक्षेप के कारण दोहरे केबिल-युगल ब्रिटेन के प्रोफेसर हुग्स द्वारा आरम्भ किए गए।

लन्दन के वैज्ञानिक जी एल एन्डरसन ने केन्द्रीय बैटरी एक्सचेंज पद्धति का एकस्व प्राप्त किया। बेल्जियम के रसूलवर्ग ने एक विरोधी-प्रेरण पद्धति का अविष्कार किया। इस पद्धति का ब्रुसल्स-पेरिस के बीच बिजली खम्भों में इस्तेमाल किया गया।

1883 इसी वर्ष के न्यूकेसल-अपान-टाइन शहर में म्यूनिसपल अथारिटी ने खम्भों के बीच लाइन का विरोध किया तथा गटापारचा टेलीफोन केबिल के 8 तथा 36 युगल का इस्तेमाल किया गया।

अधिकतर टेलीफोन उपभोक्ता लाइनों असन्तुलित थीं, तथा एक तार व भूमिगत वापसी पद्धति पर कार्य करती थीं।

ग्रेट ब्रिटेन की नेशनल टेलीफोन कम्पनी के मुख्य अभियंता डी सिनक्लेयर ने पहली स्वःचलित टेलीफोन युक्ति का अविष्कार किया।

अमेरिका के वैज्ञानिक ए बैनेट तथा बी लंगडन ने दो-तारों की लम्बी दूरी के टैलीफोन परिपथों को कुण्डली में लपेटकर, जिससे कि प्रतिध्वनि न हो, कार्य करने की कल्पना की।

1885 एक विरोधी-प्रेरण केबिल, जोकि सीसे के खोल से ढ़का हुआ था, लीवरपूल और बीरकन के बीच मरसी रेवले सुरंभ में स्थापित किया गया।

ब्रिटेन में पोस्ट आफिस अभियंता प्रीस ने पहली वायरलैस संचार सेवा 6 किमी दूरी के बीच शुरु की।

1887 ब्रिटेन के ओलिवर हेवीसाइड ने दिखाया कि ध्वनि संकेतों द्वारा अविरुपन संचार व्यवस्था तभी सम्भव है खम्भों के बीच लाइनों तथा भूमिगत केबिल में स्वतःघर्षण बढ़ाया जाए।

1888 हेनरी रुडाल्फ हर्ज ने विद्युत-चुम्बकीय तरंगों का अस्तित्व प्रयोगात्मक रुप में दिखाया।

1890 जापान में पहला टेलीफोन एक्सचेंज टोकयो शहर में 155 ग्राहकों के लिए तथा 16 दिसम्बर को योकोहामा में 42 ग्राहकों के लिए शुरु किया गया।

1891 फ्रांस में मारिस हुटिन तथा मारिस लेबलॉक ने पहली बहुविध केबिल संचार पद्धति के लिए एकस्व प्राप्त किया, जोकि आधुनिक संवाहक केबिल प्रणाली की शुरुआत थी।

1892 न्यूयार्क और चिकागो के बीच पहली बार 1187 किमी लम्बी दूरी के लिए टेलीफोन सेवा अमेरिका के ला पोर्ट, इंडियाना में पहली स्वःचालित टैलीफोन एक्सचेंज की स्थापना की गई।

1894 आक्सफोर्ड में ब्रिटिश एसोसिएशन की मीटिंग में ओलिवर लाज ने 140 मी की दूरी के बीच वायरलैस का प्रदर्शन किया।

(क्रमशः)

— दुःखद निधन —

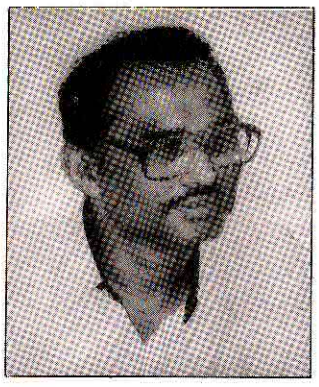

'वैज्ञानिक' के संघर्षमय जीवन में श्री के. हरिहरन अय्यर के आकस्मिक निधन ने एक झटका और दे मारा। श्री अय्यर बिना किसी समिति के सदस्य होते हुए भी वैज्ञानिक के प्रकाशन हेतु प्रेस और संपादक के बीच समन्वय और संपर्क का काम किया करते थे। परिषद के शैशवकाल से वे इसके आजीवन सदस्य थे और वैज्ञानिक के संघर्षमय प्रारंभिक वर्षों में वे परिषद के कोषाध्यक्ष भी रहे थे। हिन्दी भाषी न होते हुए भी हिन्दी की विज्ञान-पत्रिका की उन्होंने अनन्य सेवा की थी। अनेक बार संपादन मंडल, प्रकाशन संबंधी बारीकियों को उन पर छोड़ कर निश्चिंत हो जाता था। ताजमहल की नींव के पत्थर की तरह वे प्रत्यक्ष दिखायी न पड़ने वाले एक खामोश कार्यकर्ता थे। ऐसे ही कार्यकर्ताओं द्वारा स्वयंसेवी संस्थाएं इस संसार में चलती हैं। दुर्घटना में उनकी मृत्यु से वैज्ञानिक को अद्वितीय हानि हुई है।

श्री. अय्यर का जन्म केरल प्रदेश के कैकुलंगरा गाँव (जिला विवलोन) में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा फातिमा माता नेशनल कॉलेज, विवलोन में हुई थी और आगे की पढ़ाई केरल विश्व विद्यालय में हुई थी, जहाँ से उन्होंने वी.एससी. की उपाधि प्राप्त की।

वर्ष 1960 से वे भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र के वर्णक्रमदर्शिकी प्रभाग में कार्यरत थे और बम्बई विश्वविद्यालय से उन्होंने एम.एससी. की उपाधि वर्ष 1970 में भौतिकी विषय में प्राप्त की।

दिनांक 24-10-91 को मद्रास में आटोरिक्शा की, जिसमें सुबह-सुबह वे बम्बई आने वाली गाड़ी पकड़ने के लिए यात्रा कर रहे थे, बस से टक्कर ने उनकी जीवन लीला समाप्त कर दी। अपने पीछे वे एक 13 वर्ष का पुत्र, पत्नी, माता और दो छोटे भाई छोड़ गये हैं।

वैज्ञानिक परिवार इस दुःखद क्षण में श्री अय्यर के शोक संतप्त परिवार को अपनी हार्दिक संवेदना प्रकट करता है और भगवान से श्री अय्यर की आत्मा को अनन्त शान्ति प्रदान करने की प्रार्थना करता है।

— संपादक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के लिए डा. जनार्दन स्वरूप द्वारा संपादित तथा डा. शिव प्रकाश गर्ग द्वारा युनिव्हर्सल इंटरप्राइजेस, चेंबूर, बंबई में मुद्रित व प्रकाशित.

वैज्ञानिक (त्रैमासिक) R. No. 18862/70
दिल्ली, नई दिल्ली, महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान व उ. प्र. के शिक्षा/विभागों द्वारा स्कूल व कॉलेजों के लिए स्वीकृत

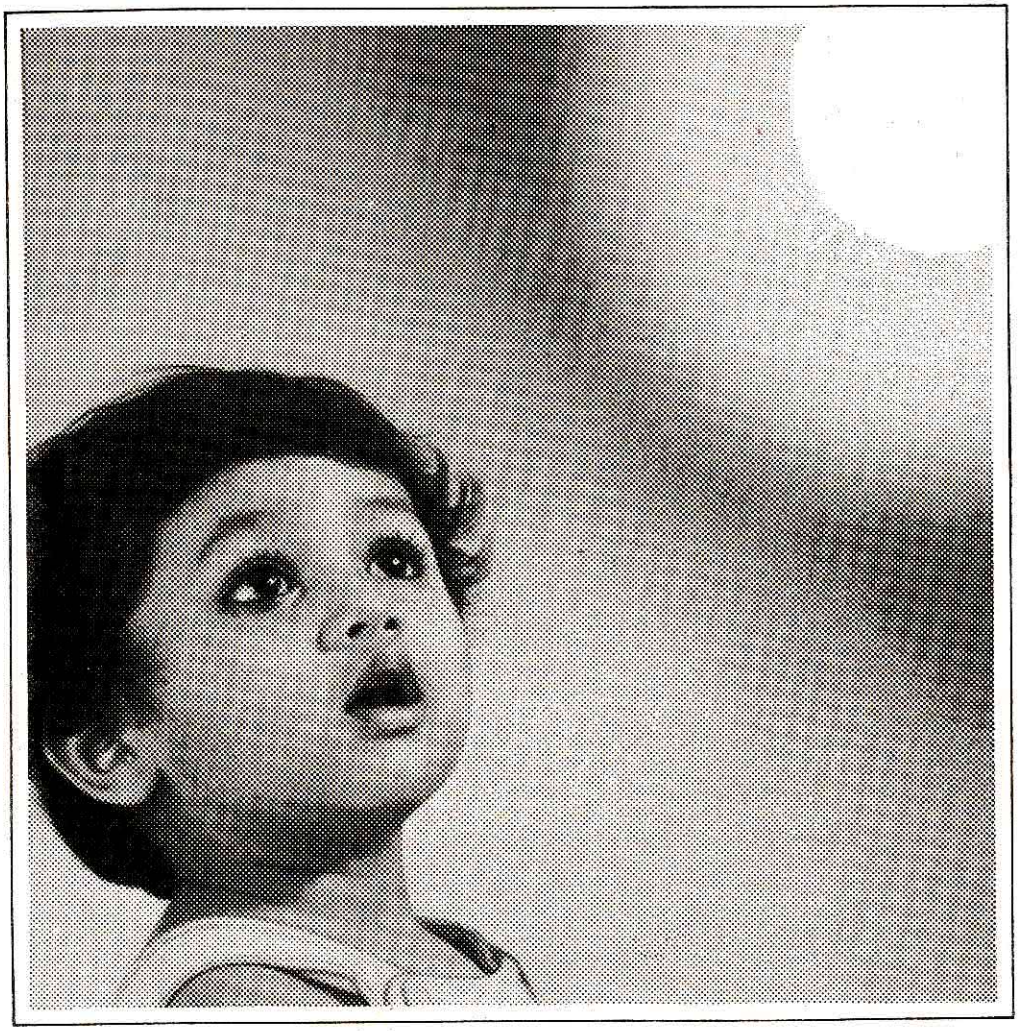

NUCLEAR POWER CORPORATION

STEPPING UP POWER GENERATION FOR GENERATIONS TO COME

Nuclear Energy from the unlimited energy source. Environmentally clean and safe. Indigenously developed and totally self-reliant, to meet the growing energy demand for a better quality of life for our increasing millions.

NPC committed to serving the nation, utilising India's vast nuclear resources for generation of power for generations to come.

NUCLEAR POWER CORPORATION
(A Govt. of India Enterprise)

16th & 20th floor, World Trade Centre 1,
Cuffe Parade, Bombay 400 005.

NPC. Fuelling a powerful future.

CONTOUR ADS-NPC-42B/9(